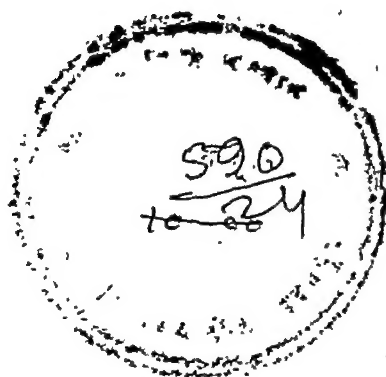
प्रकाशकः—
अध्यक्ष
साहित्य-संस्थान
राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर



मुद्रकः—
व्यवस्थापक
विद्यापीठ प्रेस, उदयपुर

प्रकाशकीय—

साहित्य-संस्थान, राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर पिछले १५ वर्षों से उदयपुर और राजस्थान में साहित्यिक, सांस्कृतिक, ऐतिहासिक एवं कला विषयक सामग्री की शोध-खोज, संग्रह, सम्पादन और प्रकाशन का काम करता आरहा है। विशेष कर साहित्य-संस्थान ने राजस्थान में यत्र तत्र बिखरे हुए प्राचीन साहित्य, लोक-साहित्य, इतिहास-पुरातत्व और कलात्मक वस्तुओं को प्राप्त करने के लिये निरन्तर प्रयत्न किया है। परिणाम स्वरूप लगभग २५ महत्वपूर्ण और उपयोगी ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है। साहित्य-संस्थान के अन्तर्गत इस समय (१) प्राचीन-साहित्य विभाग, (२) लोक-साहित्य विभाग, (३) इतिहास-पुरातत्व विभाग, (४) अध्ययन गृह और संग्रहालय विभाग, (५) राजस्थानी-प्राचीन साहित्य विभाग, (६) पृथ्वीराज-रासो सम्पादन विभाग, (७) भील-साहित्य संग्रह विभाग, (८) नव साहित्य-सृजन कार्य एवं (९) सामान्य विभाग विकसित हो रहे हैं। सामान्य विभाग के अन्तर्गत बूँदी के प्रसिद्ध राजस्थानी कवि श्री सूर्यमलजी की स्मृति में 'महाकवि सूर्यमल-आसन' और प्रसिद्ध इतिहास वेत्ता महामहोपाध्याय डॉ० गौरी-शंकरजी की यादगार में 'ओझा-आसन' स्थापित किया है। संस्थान की मुख-पत्रिका के रूप में त्रैमासिक 'शोध-पत्रिका' का प्रकाशन किया जाता है एवं नवीन उदीयमान लेखकों को लिखने के लिये प्रोत्साहित करने की दृष्टि से 'राजस्थान-साहित्य' मासिक का प्रकाशन कार्य चालू किया गया है। इस प्रकार साहित्य-संस्थान राजस्थान विश्व विद्यापीठ, उदयपुर अपने सीमित और अत्यल्प साधनों से राजस्थानी-साहित्य, संस्कृति और इतिहास के क्षेत्र में विभिन्न विघ्न-बाधाओं के बावजूद भी निरन्तर प्रगति और कार्य कर रहा है। राजस्थान की गौरव और गरिमा की महिमामय झाँकी अतीत के पृष्ठों

में अंकित है–आवश्यकता है; उसके सुनहले पृष्ठों को खोलने की। साहित्य–संस्थान नम्रता के साथ इसी ओर अग्रसर है।

प्रस्तुत पुस्तक साहित्य-संस्थान के संग्रह से तय्यार की गई है। साहित्य-संस्थान के संग्राहकों ने अनेक स्थानों की खाक छान कर १६,००० के लगभग छन्दों का संग्रह किया है। इस संग्रह में दोहे, सोरठे, कवित्त और गीत आदि कई प्रकार के छन्द सुरक्षित हैं। इन छन्दों से विभिन्न ऐतिहासिक, और सामाजिक घटनाओं, व्यक्तियों आदि का वर्णन मिलता हैं। ये विभिन्न प्रकार के गीत और छन्द लाखों की संख्या में राजस्थान के नगरों, कस्बों एवं गांवों में बिखरे हुए हैं। इनके प्रकाशन से एक ओर साहित्यकारों को राजस्थानी साहित्य का परिचय मिल सकेगा तो दूसरी ओर इतिहास-सम्बन्धी घटनाओं पर भी प्रकाश पड़ेगा। इस प्रकार साहित्य-संस्थान, राजस्थान में पहली संस्था है; जो शोध-खोज के क्षेत्र में नियमित काम कर रही है।

इस प्रकार के संग्रह अब तक कई निकाले जा सकते थे लेकिन साधन-सुविधाओं के अभाव में साहित्य-संस्थान विवश था। इस वर्ष राजस्थानी-साहित्य के प्रकाशन-कार्य के लिये भारत-सरकार के शिक्षा विकास सचिवालय ने साहित्य-संस्थान को कृपा कर १०,०००) दस हजार रुपये की सहायता प्रदान की है; उसी से उक्त पुस्तक का प्रकाशन कार्य सम्पन्न हो सका है। साहित्य-संस्थान को कुल मिलाकर गत वर्ष भारत सरकार ने ४८५००) की आर्थिक सहायता विभिन्न कार्यों के लिये दी थी। इस सहायता को दिलाने में राजस्थान-सरकार के मुख्य मंत्री (जो शिक्षा मंत्री भी हैं) माननीय श्री मोहनलाल सुखाड़िया, और उनके शिक्षा सचिवालय के अधिकारियों का पूरा योग रहा है इसके लिये मैं उनके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करता हूँ। साथ ही भारत सरकार के उपशिक्षा सलाहकार

डॉ० पी० डी० शुक्ला, डॉ० भान तथा श्री सोहनसिंह एम. ए. (लंदन) का भी अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने सहायता की रकम शीघ्र और समय पर दिलवाई। सच तो यह है कि उक्त महानुभावों की प्रेरणा और सहायता से ही यह रकम मिल सकी है और संस्थान अपने ग्रन्थों का प्रकाशन करवा सका है। भारत-सरकार के उपशिक्षा मन्त्री डॉ० कालूलालजी श्रीमाली के प्रति क्या कृतज्ञता प्रकट की जाय, यह तो उन्हीं का अपना काम है। उनके सुझाव और उनकी प्रेरणा से संस्थान के काम में निरन्तर विकास और विस्तार हुआ है और आगे भी होता रहेगा। इसी आशा और विश्वास के साथ मैं उनका आभार मानता हूँ। अन्य उन सभी का आभारी हूँ; जिन्होंने इस काम में सहायता दी है।

विनीत
गिरिधारीलाल शर्मा
अध्यक्ष
साहित्य-संस्थान
राजस्थान विश्व विद्यापीठ उदयपुर

गंगा दसवीं
२०१३
सन् १९५६



सम्पादक की ओर से—

गीत-साहित्य की दृष्टि से राजस्थानी भाषा अत्यन्त समृद्ध और शक्तिशाली है। इस भाषा में अब तक हजारों-लाखों गीत लिखे जा चुके हैं। राजस्थान का शायद ही कोई ऐसा गांव, कस्बा और शहर हो; जिसमें राजस्थानी भाषा के गीत नहीं मिलते हों। विशेषकर उन स्थानों पर तो गीत-साहित्य निश्चित रूप से प्रचुर मात्रा में मिल सकता है; जहाँ चारण, राव तथा भोजकों की थोड़ी बहुत बस्ती होगी। इनके अलावा राजा-महाराजाओं के पोथीखानों, सामन्तों के ठिकानों और जैन उपासरों में भी यह साहित्य पर्याप्त परिमाण में मिलता है। चारण और रावों में तो गीत लिखने की वंशानुगत परम्परा और भावना चली आई है; इसलिए इनके यहां ऐसे साहित्य का प्राप्त होना स्वाभाविक ही है। यों तो गीतों की रचना विभिन्न-जाति के विभिन्न कवियों ने की है, किन्तु मुख्य रूप से इन गीतों को लिखने वाले चारण, राव, मोतीसर और भोजक ही अधिक रहे हैं। गीतों के लिखने और बोलने की इनकी अपनी विशेषता है। जब ये गीत पढ़ते हैं तो ऐसा लगता है; जैसे बन्दूक से तड़ातड़ गोलियाँ दागी जारही हों। चारणों, रावों, भोजकों आदि ने राजस्थानी साहित्य के भण्डार को भरने में बहुत महत्वपूर्ण भाग अदा किया है। इन्होंने विभिन्न विषयों पर गीत लिखे हैं किन्तु शूरवीरता, आत्म-बलिदान और सतियों के सम्बन्ध में लिखे गये गीत तो हिन्दी साहित्य में बेजोड़ हैं। वीर रस का जितना स्वाभाविक और प्रभावोत्पादक वर्णन इन्होंने किया है; उतना और किसी ने किया हो—यह संदेहास्पद है। ओजस्विनी वाणी से वीर रस के गीतों को सुनकर वीरों की भुजाएँ फड़क उठती हैं और वीर रस रगों में दौड़ने लग जाता है। भागते हुए कायरों में लौटकर मरने मारने की प्रबल भावना उत्पन्न करने में ये अपनी सानी नहीं रखते। शक्ति का साकार रूप अगर कहीं मिल सकता है तो केवल इन्हीं गीतों में।

शक्ति की सही उपासना साहित्य में इन्होंने ही की है। ये गीतों के रचयिता केवल गीत लिख कर दूसरों को ही मरने मारने के लिये प्रोत्साहित नहीं करते अपितु स्वयं भी तलवार पकड़ कर रणभूमि में उतरते रहे हैं। इसीलिये वीर रस का स्वाभाविक वर्णन ये कर सके हैं। रस के अनुकूल शब्दों का चयन करना ये खूब जानते हैं और शब्द तथा अर्थ का समन्वय भी इन्होंने बहुत सुन्दर किया है। श्रोता इन गीतों को सुन कर रसानुभूति से भर उठता है। स्व० रवीन्द्र बाबू ने इनको सुनकर एक बार कहा था "मैं तो उनको सुनकर मुग्ध हो गया हूँ। क्या ही अच्छा हो अगर वे (राजस्थानी) गीत प्रकाशित किये जाँय। वे गीत संसार के किसी भी साहित्य और भाषा का गौरव बढ़ा सकते हैं।"

इन गीतों का न केवल साहित्यिक महत्व ही है अपितु ऐतिहासिक दृष्टि से भी अत्यन्त उपादेय है। क्योंकि ये अधिकांश में सच्ची घटनाओं के आधार पर ही लिखे गये हैं। इनमें घटनाओं का वर्णन यद्यपि बढ़ा चढ़ा कर किया गया है फिर भी इतिहास की सामग्री इनमें प्राप्य है। बढ़ा चढ़ा कर वर्णन करना इनके स्वभाव में है, बल्कि यों कहा जाय तो अधिक उपयुक्त होगा कि अतिशयोक्ति पूर्ण रचना करना इनका वंशानुगत गुण बन गया है। शब्दों की तोड़मरोड़ इनके लिये सामान्य बात है। कहीं २ ये शब्द को इतना विकृत कर देते हैं कि न उसके सही रूप का पता लगता है और न अर्थ ही ठीक बैठता है। भाषा शास्त्र के लिये भी ये गीत महत्व के हैं और इसी लिये इनका अध्ययन आवश्यक एवं उपयोगी है।

गीतों का प्रारंभ कब से हुआ है; इसका ठीक निश्चय अभी तक नहीं हो सका है। कुछ विद्वान नवमीं शताब्दि में हुए कवि मुरारी से इनका प्रारंभ मानते हैं और कुछ कहते हैं कि तेरहवीं शताब्दि इनका प्रारंभ काल है। जो कुछ भी हो, इतना तो स्पष्ट है कि गीत लिखने की

परम्परा हमारे यहाँ प्राचीन काल से चली आरही है। अपभ्रंश के बाद तो इनकी रचना प्रचुर मात्रा में की गई है। इस कारण यह स्वाभाविक रूप से मानना होगा कि इनका प्रारंभ काल अपभ्रंश युग तो है ही। अपभ्रंश काल की समाप्ति के साथ ही साथ राजस्थानी भाषा का विकास भी हो रहा था और उस समय राजस्थानी भाषा के दो सामान्य साहित्यिक रूप थे। एक राजस्थानी डिंगल और दूसरी राजस्थानी पिंगल। डिंगल राजस्थानी का साहित्यिक रूप ही था। राजस्थान के चारण कवि डिंगल में ही रचना करते थे। जन-सामान्य के लिये यह भाषा कठिन पड़ती थी क्योंकि डिंगल बोल चाल की भाषा कभी नहीं रही है। इसमें क्लिष्टता अधिक है। इसके अर्थ को समझना पहले भी दुरूह था और आज भी मुश्किल होता है। फिर इनके रचयिताओं का सम्बन्ध जन-सामान्य की अपेक्षा राजा-महाराजाओं, जागीरदारों और सामन्तों से ही अधिक रहा है। राज-दरबारों में इन्हें रखना एक प्रथा थी। इसलिये दान, उपहार और जागीरियां इन्हें दी जाती थीं। ये भी बदले में इनकी प्रशस्तियां बना बनाकर गाया करते थे और इनके गौरव को बढ़ाने में सहायक बनते थे। यह प्रथा न केवल राजस्थान में अपितु सर्वत्र रही है।

इन गीतों की विभिन्न जातियाँ है इन्हें छन्द कहा जाता है। राजस्थानी डिंगल के रीतिग्रन्थों में इनकी संख्या ८५ मानी गई हैं। जैसे साणोर, सावझड़ा, सु पंख, पालवणों और चोटी बन्ध आदि। इनकी भी फिर अनेक उप जातियां हैं जैसे:- छोटा साणोर, बड़ा साणोर, छोटा सावझड़ा आदि। राजस्थानी-डिंगल की रचना के जिस प्रकार विभिन्न विषय रहे हैं, उसी प्रकार विभिन्न रसों का परिपाक भी हुआ है। वीर, रौद्र, वीभत्स और भयानक रसों के जिस प्रकार उत्कृष्ट उदाहरण मिलते हैं, उसी प्रकार शान्त, करुण और शृंगार रस भी मिलता है।

प्रस्तुत संग्रह में केवल वीर रस के गीतों को ही स्थान दिया है। इसलिये पाठकों को इसमें अन्य रसों का स्वाद नहीं मिल सकेगा।

निकट भविष्य में अन्य रसों के गीत भी प्रकाशित करने की संस्थान की योजना है। वीर रस के दो चार उदाहरण यहाँ दिये जारहे हैं; जिनसे मालूम हो जायगा कि राजस्थानी भाषा के ये गीत कितने शक्ति-शाली हैं ?

सन् १५२७ में जब मेवाड़ के महाराणा सांगा की बाबर के साथ खानवा में लड़ाई हुई, उस समय रावत रत्नसिंह ने जिस शौर्य और साहस का परिचय दिया– उसका वर्णन इस गीत में मिलेगा:–

नमते निय सेना तणी नागद्रह ।
भारथ भू भड़ वीरती भीर ॥
पग किम रावत परठै पाछा ।
जड़िया परिया तणां जंजीर ॥ १ ॥

क्रम पाछा न देवै कैलपुरो ।
रिण भू जेथ नह छंडे राव ॥
सनस तणी बेड़ी सीसोदे ।
पहरी रतन तेण परजाव ॥ २ ॥

कांधल उत्त मचंते कलहण ।
घण जूझ आगमण घणी ॥
चौहट्टी तूझ तणै चितौड़ा ।
सांकल पग सूं रतन तणी ॥ ३ ॥

राण तणा रजपूत न रहिया,
सक भड़ भागौ डूंगरसीह ॥
उद्रम असत गया उलंडे,
लाज बंधण पग लागो लीह ॥ ४ ॥

वीर-शत्रुओं की भारी भीड़ में से सिशोदिया की सेना रणस्थल से पीछे हटने लगी। उस समय हे रावत ! तू पैर पीछे कैसे हटा सकता था ? क्योंकि तेरे पैर तो पूर्वजों की यश रूपी जंजीरों से जकड़े हुए थे।

हे सिशोदिया; तू रणांगण से पैर पीछे कैसे हटा सकता था? जब अन्य राव और क्षत्रिय युद्ध भूमि से हट गये तब, यदि तू भी अपने पैर पीछे हटा लेता तो सिशोदिया वंश की लज्जा ही नष्ट हो जाती।

हे कांधल के सुपुत्र सिशोदिया रत्नसिंह, अन्य योद्धाओं की भांति तू रणस्थल से कैसे हट सकता था? कुल-लज्जा की जंजीरें तेरे पैरों को जकड़े हुए थी और इसीलिये तू प्रबल पराक्रम से युद्ध करता रहा।

राणा के सामंत जब युद्ध स्थल से भाग खड़े हुए तब, डूंगरसिंह आदि ने भी रण भूमि छोड़ दी। उस समय हे रत्नसिंह, रण की खेती को इस प्रकार निष्फल होती देख तू युद्ध में अडिग बना रहा और युद्ध स्थल से नहीं हटा—क्योंकि लज्जा के लंगरों से तू जकड़ा हुआ था।

उक्त गीत में रावत रत्नसिंह के प्रबल पराक्रम को दर्शाया गया है। इसी प्रकार नीचे दिये गये गीत में युद्ध का सजीव वर्णन देखने योग्य है:—

गजां उमंडे बादलां जूथ सकंजा कांठला गढ़ां।
बीज सोर झाला धजा गैणाला वहेस ॥
संघरोस बूठो रणं बाटां धार पाणां सुतो।
रोद थट्टां माथै सार झाटां रतन्नेस ॥ १ ॥

पणंगा भालुडां सोक झोक भड़ा मूठ पाणां।
घड़ा करे घमस्साण नोर खारां धीठ ॥
बोह छोला काल कीट चाढ हीकां बरस्साणौ।
गेहलोय रीठ लोहां तुरक्कां गरीठ ॥ २ ॥

सुरंगां रड़क्कैनाला रै जाहरां सूंड़ां डंडां।
घाव मंडे खेचरां नहट्टा दाव घूंज ॥
जुआला ठेल वणै घाव बूठो जम्मराव जूंही।
बड़िग आवधां राव केफां चपरुत ॥ ३ ॥

मेलिया उतोल रोल ढीली लूण तासमीर ।
जंगा धम्मरोल तेगा चहुँ हरे जांस ॥
गोम रुपी रतन्नेस अनम्मी समाणो गोम ।
जमी तेह वामी जूप रावै जसव्वाम ॥ ४ ॥

उमड़ते हुए बादल-समूह की भांति सजा हुआ हाथियों का झुण्ड रणोन्मत्त होकर आया और उधर बिजली की तरह रणस्थल की तोपों की ज्वाला आकाश में फैलने लगी। उस समय हे रत्नसिंह, तूने मुगल-समूह पर साहस के साथ तलवार की वर्षा (इन्द्र वृष्टि के समान) कर दी।

युद्ध-हर्षित वीर सैनिकों ने अत्यन्त तीव्र वेग से पैने तीर चलाने प्रारंभ किये और शत्रु-सेना पर नमक के पानी की भांति शस्त्र-वर्षा की। जिसकी आवाज चारों दिशाओं में फैल गई और तू काली घटा के समान मुगलों पर छा गया।

भूगर्भ स्थित सुरंगें फटने लगीं। बन्दूकों की गोलियों और तलवारों से हाथियों के घाव लगने लगे। योगिनियां आ उपस्थित हुईं। अश्व पर आरूढ़ सशस्त्र रावत, यमराज के समान भीषण रूप धारण कर शत्रुओं के घाव करने लगा और रणभूमि से मुगलों को हटा कर पराजित कर दिया।

अपने खड्ग प्रहार से दिल्ली के मीर-मुगलों को रणक्षेत्र से तितर बितर कर दिया और शत्रुओं के सामने नहीं झुकने वाले रत्नसिंह ने वृषभ के समान युद्ध के जुए का भार अपने कंधों पर उठा लिया तथा अपनी यशः कीर्ति पृथ्वी पर फैला कर अमर बन गया।

इसी प्रकार जब मुगल बादशाह अकबर ने ई० सन् १५६७ में चितौड़-विजय के लिये महाराणा उदयसिंह पर चढ़ाई की तब, बदनोर के प्रसिद्ध वीर जयमल राठौड़ ने दुर्ग की रक्षा के लिये प्राणपण से युद्ध किया और वीर गति प्राप्त की। उस समय कवि ने चितौड़-दुर्ग के

मुँह से जयमल को सम्बोधित कर जो कहलाया है–उसका वर्णन कितना स्वाभाविक एवं सुन्दर बन पड़ा है–देखिये:—

ढिल्ली पंह आयां राण अत्त ढिल्लियौं ।
तिण सूं कहै चित्रगढ़ तूझ ॥
जैमल जोध काम तो जोगो ।
मारूआं राव म ढील स मूझ ॥ १ ॥

खीज करे चढ़ियो खून्दालम ।
धणू कटक वंध मेल घणा ॥
गढ़ नायक मेलि यौ कहै गढ ।
तू मत मेलै वीर तणा ॥ २ ॥

अकबर आवत उदियासिंघ ।
चवै ढीलौ कीधो चितौड़ ॥
मोटा छात जोध हर मंडण ।
रखै मूझ ढीलै राठोड़ ॥ ३ ॥

जपै एम दुरंग सूं जयमल ।
हूँ रजपूत धणी तो राण ॥
संक म कर लग सिर साजो ।
सिर पड़ियां लेसी सुरतांण ॥ ४ ॥

चितौड़ दुर्ग कहता है–"हे जयमल, दिल्लीपति अकबर के चढ़ आने पर महाराणा अपने को असमर्थ जान कर मुझे छोड़ गया है। इसलिये हे राठोड़, 'इस युद्ध का उत्तरदायित्व अब तेरे ऊपर है। तू भीरू बन कर मुझे मत छोड़ जाना।

दुर्ग के मुँह से कवि ने आगे कहलाया कि "हे वीरमदेव के पुत्र बादशाह ने क्रुद्ध होकर विशिष्ट सेना का संगठन कर मेरे ऊपर आक्रमण किया है, जिससे मेरा स्वामी मुझे छोड़कर चला गया है परन्तु हे वीर, तू मुझे मत छोड़ जाना।

असंख्य सेना के साथ अकबर के चित्तौड़ पर चढ़ आने की सूचना प्राप्त कर उदयसिंह चला गया। इस पर दुर्ग कहता है कि "हे जोधा के वंशज वीर शिरोमणि जयमल, ऐसा न हो कि तू भी मुझे छोड़कर चला जाय ?"

वीर जयमल ने उत्तर में दुर्ग से कहा— "तेरा स्वामी महाराणा ही है, मैं तो उसका राजपूत हूँ। जब तक मेरे शरीर पर मस्तक है तब तक, तेरे ऊपर किसी का अधिकार नहीं हो सकता। मेरे मरने के बाद ही अकबर तुझ पर अधिकार कर सकता है-पहले नहीं।"

इस तरह के गीत एक नहीं, अनेक हैं। इन गीतों में कवि की सुन्दर उक्तियों और भाषा की शक्ति का परिचय मिलता है। इसी तरह वीरता के वर्णन का एक और सुन्दर उदाहरण देखिये :—

ई० सन १५७६ में मेवाड़ के महाराणा प्रतापसिंह पर दिल्लीपति अकबर ने आमेर के राजा मानसिंह के सेनापतित्व में सेना भेजी और हल्दीघाटी के मैदान में प्रसिद्ध ऐतिहासिक युद्ध हुआ। इस युद्ध में राठोड़ जयमल के पुत्र रामदास ने जिस प्रकार प्रबल पराक्रम प्रदर्शित किया: उसका वर्णन इस गीत में कितना सुन्दर किया गया है :—

शशि थाइस तप थाइ सूरिज शितल,
तजे महोदधि वारि तुरंग।
सुत भै रामदास रण मेलो,
गमण पश्चम दिशि मंडे गंग ॥ १ ॥
जलें चन्द्र शिलो थाई जम चल,
रेणायर सां शतो रहे।
जगमाल उत जाइ छंडि जुध,
वेणी जल उपराठ वहे ॥ २ ॥

अतश इन्दु अरक ताढ़िम अंग,
सायर छंडे लहरि सुवाह ॥
पह मेड़ता चले पारोठो,
पमुहे वहे सुर सरि प्रवाह ॥ ३ ॥

सोम सुर सामँद्र प्रता सुध,
अघट सुभाव दाखवे अंग ।
राम कियी मृत शामि धरम रसि,
पुनि तोया मिलि पूव प्रसंग ॥ ४ ॥

हे राठोड़ रामदास, यदि तू मृत्यु के भय से युद्ध स्थल छोड़ कर चला जाता है तो चन्द्रमां तीक्ष्ण किरणें और सूर्य शीतलता धारण कर लेता है, समुद्र स्थिर होजाता है और गंगा का प्रवाह पश्चिम की ओर मुड़ जाता है ।

हे जयमल के पुत्र, यदि तू युद्ध स्थल त्याग कर विमुख होजाता है तो चन्द्रमां आग उगलने लगता है और सूर्य शीतलता धारण करने लग जाता है । समुद्र अपनी सुन्दर उर्मियां छोड़ देता है और गंगा के जल का प्रवाह विपरीत दिशा में हो जाता है ।

हे मेड़ता नरेश, यदि तू रणांगण से शत्रुओं को पीठ दिखा कर युद्ध-भूमि से पलायन कर जाय तो चन्द्रमां तेज को धारण कर लेता है और सूर्य शीत की प्रकृति का बन जाता है, समुद्र लहर-हीन होजाता है और गंगा उल्टी बहने लग जाती है ।

रामदास अपने पूर्वजों की भाँति स्वामी धर्म का पालन कर युद्ध में शौर्य प्रदर्शित करता हुआ वीर गति को प्राप्त हुआ । चन्द्र, सूर्य, समुद्र और गंगा अपनी पूर्व स्थिति में आगये । अर्थात् चन्द्र ने शीतल किरणें, सूर्य ने ग्रीष्म किरणें और समुद्र ने सुन्दर लहरें धारण की तथा गंगा पूर्व दिशा में पुनः बहने लगी ।

समंद पूछियौ गंग सूं रूप पेखे सुजल़ ।
वहै जमना किसूं नवल वाने ॥
ऊजल़ी धार पतसाह घड़ आछटे ।
मेलियो रातड़ौ नीर गानै ॥ १ ॥

महोदय पूछियौ कहौ मो सहस मुख ।
जमुन की नवौ सणगार जुड़ियौ ॥
भाण रै लोह सुरताण धड़ मेलियो ।
चल़ोवल़ पंङ मो पूर चड़ियौ ॥ २ ॥

थागियल़ पूछियौ भणौ भागीरथी ।
सांवल़ा नीर किसां समोहां ॥
साहरी फौज सगता हरे सींघल़ी ।
लाल रंग चाढ़ियो मार लोहां ॥ ३ ॥

जोय जमुना जुगत रीझियो समन्द जल़ ।
विगत हेकरण वड़ी गंग वाती ॥
हिन्दुवै राव ओतोलियो लोह हद ।
रगत मेछां तणौ नदी राती ॥ ४ ॥

[रचयिता–अज्ञात]

भावार्थः—समुद्र पूछ रहा है कि–हे गंगा ! यमुना आज नया रूप (लाल रंग) धारण कर कैसे बह रही है ? गंगा ने इसके उत्तर में कहा कि–मानसिंह ने चमकती तलवार से शाही सेना विनष्ट कर दी है। अतः उसकी रक्त धारा से यमुना ने नया बाना धारण किया है।

समुद्र पूछता है कि–हे सहस्र मुखी यमुना, तूंने यह नया शृंगार क्यों किया है ? (इस पर) यमुना उत्तर देती है कि–भाण के पुत्र ने शाही दल पर शस्त्र प्रहार किया है। अतः मैंने नया शृंगार बनाया है।

समुद्र पूछता है कि हे गंगा ! श्याम जल में लाल रंग कैसे आ गया ? गंगा उत्तर देती है– नर केसरी पुत्र शक्तिसिंह ने शाही सेना विनष्ट करदी है; अतः उसके रक्त प्रवाह से लालिमा आ गई है ।।

गंगा की यह उक्ति सुन समुद्र प्रसन्न हुआ । कवि कहता है कि हिन्दुओं के स्वामी ने मुगलों पर प्रबल शस्त्र प्रहार किया है; उससे यमुना का नीर रक्त रंजित हो गया है ।।

इस प्रकार के अनेक गीतों से राजस्थानी साहित्य भरा पड़ा है । इन गीतों को पढ़ने से राजस्थानी साहित्य की विशेषता और उत्कृष्टता का परिचय मिल जाता है । इनमें वीरों की वीरतापूर्ण घटनाएँ, क्षत्राणियों के सतीत्व की अमर गाथाएँ और उदारता की अमर भावनाएँ भरी हुई हैं । यहाँ हमने केवल वीर रस से सम्बन्धित गीत ही उदाहरणार्थ दिये हैं क्योंकि सभी प्रकार के गीतों से पुस्तक का कलेवर बढ़ जाता है ।

इस तरह के गीतों की परम्परा आज तक चली आ रही है । अंग्रेजों की गुलामी से मुक्ति प्राप्त करने के लिये जब समस्त देश छट-पटा रहा था, तब राजस्थानी कवि मौन कैसे रह सकता था ? उसने भी देश की स्वाधीनता के गीत गाये और अंग्रेजों के अत्याचारों के विरुद्ध आवाज बुलन्द की । ऐसे गीत राजस्थान में बहुत रचे गये; कुछ गीत प्रस्तुत पुस्तक में दिये गये हैं ।

प्राचीन राजस्थानी के इस गीत संग्रह से हिन्दी साहित्यकारों को डिंगल गीतों का परिचय प्राप्त करने में कुछ सहायता अवश्य मिलेगी, ऐसी आशा है और तभी हम अपना प्रयत्न सफल मानेंगे ।

इस संग्रह के सम्पादन में प्रमुख योग साहित्य–संस्थान के संग्राहक और इसके सह–सम्पादक श्री सांवलदानजी आशिया का रहा है ।

विशेष कर गीतों के अर्थ उन्हीं ने लगाये हैं। इसके लिये मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। साहित्य-संस्थान के इतिहास-पुरातत्व विभाग के संयोजक श्रीनाथूलालजी व्यास ने गीतों की पाद टिप्पणियां लिख कर पुस्तक को अधिक उपादेय बनाने में योग दिया; इसके लिये मैं श्री व्यासजी का आभारी हूँ।

विनीत
गिरिधारीलाल शर्मा
सम्पादक

अक्षय तृतीया
सम्वत् २०१३, उदयपुर

प्राचीन राजस्थानी गीत

(भाग-१)

१ रावत चुण्डा लाखावत सीसोदिया[१]

गीत (छोटा साणौर)

चालतो दुरंग पयंपै चुंडो, ए पुरुषातम तणी पर ।
आप न मुड़िये जाय अरीयण, तो आगै पाछै मुड़ै यर ॥ १ ॥
चुण्डौ कोट जिसो चित्तौड़ौ, वांचे चित्तौड़ै वयण ।
रहजे जो आपण पग रोपे, पड़ै क पग छंडै प्रसण ॥ २ ॥
लोह पगार कहै लाखावत, गैमर हैमर जेथ गुड़ै ।
मुंह रांवत जो आप न मुड़िये,(तो) मौड़ा वेघा प्रसण मुड़ै ॥ ३ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थः—पुरुषार्थी चुण्डा वीर किले पर चलता हुआ कहता है कि हे वीरो ! युद्ध भूमि में शत्रुओं के सामने से हम नहीं मुड़ेंगे तो अपने सामने से या पीछे से शत्रुओं को अवश्य ही मुड़ना पड़ेगा ।

टिप्पणी:—१ यह महाराणा लाखा (वि०सं० १४३६–७८) के पाटवी कुमार थे । हँसी में कहे हुए अपने पिता के वाक्य पर मंडोवर की राजकुमारी से विवाह न करने के निश्चय के साथ ही राज्यगद्दी को भी इन्होंने स्वतः त्याग दिया ।

उक्त राजकुमारी से फिर लाखा का विवाह हुआ, उससे उत्पन्न मोकल मेवाड़ का स्वामी हुआ । लेकिन उसे चाचा मेरा ने मार डाला, जब मंडोवर के राठोड़ रणमल ने मेवाड़ पर अधिकार जमाने की चेष्टा की, तब चुण्डा ने मालवा से आकर राणा कुंभा का राज्य स्थिर किया और रणमल को मार कर मंडोवर का राज्य भी छीन लिया ।

वीरता का गढ़ बन कर चुण्डा अन्य वीरों को उपदेश देता है कि हे सामन्तो ! रणक्षेत्र में यदि हम पैर टिका कर शत्रुओं से सामना करेंगे तो या तो वे धराशाई होंगे या उन्हें भागना पड़ेगा।

लाखा का पुत्र चुण्डा शस्त्र उठा कर कहता है—कि जहाँ हाथी और घोड़े युद्ध-स्थल में गिरते हैं। क्षत्रिय योद्धाओं ! ऐसे युद्ध में पीठ नहीं दिखाई जायगी तो शीघ्र या विलंब से शत्रु लौट ही जायेंगे।

२ रावत चुण्डा लाखावत सिंशोदिया

गीत (छोटा-साणोर)

लाखावत एक सारीखा लाखां, महा सुवये दाखै मछर ।
चुण्डावत वाही चित्तौड़ा, अणियाली रणमल उअर ॥१॥
नेत वंध तोसूं नाग द्रहा, जोधे नहँ झालियो जुध ।
हाथां तूझ समर हामू हर, कटारी भीत करियां कमुधे ॥२॥
सझि रै साबदलां सीसोदा, इला थंभ रावत ओ गाढ ।
पंजर राव तणै केलपुरा, जड़ी जुतै स जड़ी जम दाढ़ ॥३॥
खेता हरा वांका जे खलां, कलहण अडग केविया काल ।
धुर मेवाड़ अनै धूहड़ धर, प्रगटी तूझ तणी प्रति माल ॥४॥

(रचयिताः— अज्ञात)

भावार्थः—हे लाखा के पुत्र ! तेरी वीरता लाखों वीरों के सदृश गौरव से भरी हुई है। रणमल के हृदय में कटारी का वार करने से हे चुण्डा ! तेरा सुयश फैल गया है।

हे हम्मीर सिंह के पौत्र सिशोदिया ! विजय चिन्ह धारण करने वाले ! तूने अपने हाथ से रणमल के कटारी पार की; यह सुन रणमल का पुत्र जोधा युद्ध न कर भाग खड़ा हुआ।

शत्रुओं की सेना का सर्वत्र सामना करने वाले वीरता के स्तंभ हे सिशोदिया ! तू ने राव रणमल के शरीर पर कटारी का अच्छा वार किया।

शत्रुओं के समूह में वक्रगति वाले काल पुरुष के समान; युद्धस्थल में अडिग रहने वाले, हे चेत्रसिंह के पौत्र ! तेरी कटारी का वार मेवाड़-मारवाड़ में प्रसिद्ध होगया।

२ रावत चुण्डा लाखावत सिशोदिया

गीत (छोटा साणौर)

लाखावत मेल सबल दल लाखां,
लोहां पाण धरा लेवाड़।
कैलपुरे हेकण घर कीधीं,
मुरधर ने बांधी मेवाड़ ॥ १ ॥
खोस लिया अभनमा खेतल,
रैंवत ने ज्यां वाला रूंग।
रंधिया राण तणै रसोड़े,
मुरधर रा नीपजिया मूंग ॥ २ ॥
थांणो जाय मंडोवर थपियों,
जोर करे लखपत रे जोध।
कियों राज चुण्डै नव कोटी,
सात बरस तांई सीसोद ॥ ३ ॥
खेड़ेचां वाली धर खोसे,
दस सहसां आकाय दईव।
सुरग दिसा रिड़माल सिधायो,
जोधै नीठ बंचायो जीव ॥ ४ ॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थ :— हे लाखा-पुत्र ! तूं शक्तिशाली सैनिकों का संगठन कर, शस्त्रबल से अपनी सीमा का विस्तार करने वाला है। हे सीशोदिया तूंने मारवाड़ की भूमि पर अपना अधिकार स्थापित कर मेवाड़ और मारवाड़ की एक ही सीमा करदी है।

हे क्षेत्रसिंह के समान योद्धा ! तूंने अपने घोड़ों को रातब देने के लिये मारवाड़ की भूमि छीन कर उससे उत्पन्न मूंग महाराणा के रसोड़े में बनवा कर खिलाये हैं।

हे लाखा-पुत्र चुण्डा ! तूंने अपने भुजबल से मंडोवर पर अपना अधिकार स्थापित किया है। इस प्रकार नव-कोटि मारवाड़ पर निरन्तर सात वर्ष तक सीशोदियों का शासन रक्खा।

हे सीशोदिया चुण्डा ! देव योग से राठोड़ रणमल स्वर्गवासी हुआ और जोधसिंह ने अपने प्राण बचाये। उस समय तूंने खेड़ेचा गोत्र वाले राठोड़ों से भूमि छीन कर मंडोवर पर शासन किया।

४ रावत राघव देव-लाखावत सिशोदिया [१]

गीत (छोटा सणोर)

खत्र वाट खत्री गुर होये खड़ग हथ,
आहण ते साचविये इम ।
दांते काढी करो नहँ देखी,
जम-दढ राघव देव जिम ॥ १ ॥
रायंगणी राण कुम्भ क्रन रूठे,
हाथे लहे हिंदुये गव ।

टिप्पणी:—१ राघव देव लाखा का पुत्र चुण्डा का छोटा भाई था। यह बड़ा वीर था जिसे राणा कुम्भा के शासन काल में मंडोवर के राव रणमल ने दगे से मरवा डाला उसी का ऊपर वर्णन है।

कीढ़ी रावव भली क़टारी,
दांता-सिरसी ऊपर डाव ॥ २ ॥
रिण मल कुम्भा विन्हे रायंगणि,
घणे चींतवे भ्रोह घणा ।
फूटां लोह पछां फिटकारां,
ताड़नां राघव देव तणा ॥ ३ ॥
कर ग्रहिये हम्मीर कलोधर,
सुजड़ी छल साचवी सवेव ।
लगा लोह पछां लाखावत,
दांते काढी राघव देव ॥ ४ ॥
पूंचे वाथ पड़ंतो पहलो,
सोहडस जूभा वाहे सार ।
राघव ज वलीन दीठो रावत,
कमल कटारी काढण हार ॥ ५ ॥
हाथां अ वसी हुए वसि हाथां,
वाहे अणी खत्रीले वाढ ।
राघव काढ़ी तणौ राय गुर,
दांत विशेख किए जम दाढ ॥ ६ ॥
शीशोदा राण लखपति संभ्रम,
पौरिस घणौ दाखवै पाण ।
कर सत्र ग्रहे डसण खल कलिहण,
काढी अणियाली-कुल-भाण ॥ ७ ॥

खत्र घणा किया आगे ही खत्रिये,
कहिये पृथ्वी अनाथ किम ।
कर गे ग्रहिये कणी नहँ काढी,
जम दढ राघव्र देम जिम ॥ ८ ॥

(रचयिता–हरी सूर, बारहठ)

भावार्थः– क्षात्र–कुल का गौरव रखने वाला क्षत्रियों का गुरु राघव देव हाथों से तलवार चलाने वाला था। उसी वीर राघव देव ने दांतों से कटारी निकाल कर शत्रुओं को मारने के लिये वार किया, ऐसा वीर पुरुष किसी जगह देखने में नहीं आया।

हिन्दु–पति कुम्भा ने रुष्ट होकर राय आंगन में तेरे हाथ पकड़ लिये। उस समय हे राघव देव! तूंने अपनी कुशलता से दांतों द्वारा कटारी निकाल ली।

रणमल और कुम्भा ने तुझ पर क्रुद्ध हो महलों के बीच हे राघव देव! तुझे जख्मी कर दिया। किन्तु रक्त रंजित होने पर भी तूंने रणमल पर दांतों से कटारी निकाल कर प्रहार किया।

हम्मीर के कुल को धारण करने वाले कुम्भा ने छंल कर के तुझ पर कटारी का वार किया; उस पर तूंने भी अपने कौशल से दांतों द्वारा कटारी निकाल कर उन शत्रुओं पर वार किया।

हे राघव देव! तेरे हाथ के पहुँचे पकड़ कर गुत्थम गुत्था होने के पहले वीर शत्रुने तुझ पर खड्ग–प्रहार कर दिया। तब हे रावत! मुँह से कटारी निकाल कर वार करने वाला तेरे समान अन्य वीर नहीं दिखाई दिया।

हे वीर क्षत्रिय! अपने हाथ शत्रु के वश में होते हुए भी तूंने इस प्रकार शत्रु पर कटार चलाई मानो तेरे हाथ किसी के काबू में

नहीं। हे राजाओं के गुरु राघव देव! दांतों से पकड़ कर (कुशलता से) तूंने कटारी निकाली।

हे लाखा के पुत्र! तूंने अत्यंत ही पुरुषार्थ दिखाया, जिस समय तेरे हाथ शत्रुओं ने पकड़ लिये। उस समय उन से युद्ध करने को तूंने (अपनी कुशलता से) कटारी निकाल कर प्रहार किया।

पूर्व काल में भी कई क्षत्रियों ने अपना क्षात्र-बल दिखाया, इस पृथ्वी को कभी वीर विहीना नहीं कह सकते; किंतु हे राघव देव! हाथ पकड़ने के बाद भी दांतों से कटारी निकाल जिस कुशलता से तूंने सामना किया वैसा कोई वीर नहीं हुआ।

५ कांधल चुंडावत सिशोदिया[1]

गीत (छोटी साणौर)

इर तरवर एक पहाड़ ऊपरै।
गरव भाण गेपे गेतूल ॥
कीधी भली जिते कांधाला।
मुलया तणी अमूली मूल ॥ १ ॥

ईडर राव तणों आरोपो,
मेवाड़ा ऊपर मुणियो।
किरमर धार करग कोदालै,
खेत कलोधर रिण खिणियो ॥ २ ॥

वैरी वरख इसौ कूं वधियौ,
डाहल लागा दसे द्रग।
चावे चिहु राये चुंडावत,
ओ खांखे कीधो अलग ॥ ३ ॥

कोई पांखड़ां न सूकियो कल्हण,
बिजड़ै रामा उतै त्रियौ ।
कीरत तणां प्रवाड़ा कारण, ।
कांधल मूल अमूल कियौ ॥ ४ ॥

(रचयिता अज्ञात)

भावार्थ:—एक पहाड़ पर सूर्य की ज्योति में वृक्ष रूपी शत्रु गौरवान्वित हो कर लहरा रहा था। उसे झड़ से उखाड़ कर हे कांधल! तूने अच्छा किया।

ईडर का राव क्रुध हो मेवाड़ पर चढ़ आया। हे क्षेत्रसिंह के वंशज! तूने उसे कुदाली रूपी तलवार हाथ में ले रण क्षेत्र से खोद कर निकाल दिया।

यह वृक्ष रूपी शत्रु बहुत बढ़ा हुआ था, जिसकी शाखा और कोंपलें दसों दिशाओं में फैल रही थी। ऐसे सब ओर फैले हुए वृक्ष (शत्रु) को हे चुंडा के पुत्र! तूने खोद कर अलग फैंक दिया।

वृक्ष रूपी रामा के पुत्र शत्रु की कोई कौंपल (शाखा) सूखी हुई नहीं थी। हे कांधल! उस वृक्ष को तूने अपनी तलवार से नष्ट कर यश प्राप्त किया।

६ रावत रत्नसिंह चुण्डावत सिशोदिया[१]

गीत (छोटा साणोर)

बाबर साह पूठै थयो दाखै बल,
सरिन सांधै कोई संग्राम ।
मंड रतनसी राज वँस मुड़िया,
संड राखण चुण्डा हर स्याम ॥१॥

डूंगर सीह सिलह दी डिगिया,
आवर खड़ग मरण दे आज ।
रावते घणै भलाया रावत,
लाखा हरा भुजां तुझ लाज ॥२॥
वांसै साह हुयौं हक वागी,
निसती तजि चलिया नेठाह ।
सुजसे कमल कांधले संभ्रम,
स्याम कहै रहि स्याम सनाह ॥३॥
खत्रवट मारिग खेत खानुवै,
नल व्रन घाव दाखै नहस ।
राखी भली पडंतै रावत,
सीसोदिया ऊभी सनस ॥४॥

(रचयिता—अज्ञात)

भावार्थः—जिस समय बादशाह बाबर ने साहस दिखाकर पीछा किया उस समय उसके सामने कोई तीर न चला कर सभी यौद्धा, सामंत और नरेश मुड़ गये किंतु हे चुण्डा के पौत्र रत्नसिंह ! तूं अपने स्वामी के लिये युद्ध भूमि में अचल बना रहा ।

चलते हुए खड्ग से मृत्यु को देखकर डूँगरसिंह व राणा के उमराव यौद्धा बख्तर पहने हुए उस रणांगण को छोड़ चले। उस समय युद्ध भार विशेष करके तेरे कंधे पर ही डाल गये ।

टिप्पणीः—यह रावत चुण्डा के पुत्र कांधल का बेटा था और राणा सांगा की बाबर से सन् १५२७ में खानवा में लड़ाई हुई, उसमें बहादुरी से लड़ता हुआ वीर गति को प्राप्त हुआ । उसी का वर्णन है ।

वीर-हाक करते हुए बादशाह ने पीछा किया उस समय साहस हीन, धैर्यहीन (महाराणा के) वीर नहीं ठहरे। ऐसे समय में हे कांधल के पुत्र ! महाराणा ने अपनी रक्षा के लिए बख्तर सदृशः जानकर युद्ध लज्जा का भार तेरे भुजों पर छोड़ दिया।

हे रावत सिशोदिया ! तूं खानवे के युद्ध में निश्चय स्वरूप शत्रुओं को जख्मी कर उनके रक्त के पनाले बहाता हुआ क्षात्र कुल के रास्ते पर अडिग बना रहा और गिरती हुई युद्ध लज्जा रखली।

७ रावत रत्नसिंह चुण्डावत सिशोदिया

गीत (छोटा साणौर)

नमते निय सेन तणी नाग द्रह,
भारथ भू भड़ त्रिरती भीर ॥
पग किम रावत परठै पाछा,
जड़िया परिया तणां जंजीर ॥ १ ॥
क्रम पाछा न देवै केलपुरो,
रिण भूं जेथ नह छंडे राव ॥
सनस तणी वेड़ी सीसोदे,
पहरी रतन तेण परजाव ॥ २ ॥
कांधल उत्त मचंते कलहण ।
घण जूझा आगमण घणी ॥
चोहट्टी तूझ तणौ चितौड़ा ।
सांकल पग सूं रतन तणी ॥ ३ ॥
राण तणा रजपूत न रहिया,
सक भड़ भागौ डूंगरसीह ॥

उद्‌म असत गया उलंडे ।
लाज बंधण पग लागो लीह ॥ ४ ॥
(रचयिताः- अज्ञात)

भावार्थ :— हे रावत ! शत्रु वीरों की गर्दी में सीशोदिया की सेना रण-स्थल से पीछे हटने लगी। लेकिन तूं पीछे पैर कैसे हटा सकता था ? तेरे पैर तो पूर्वजों की यश रूपी जंजीर में जकड़े हुए थे।

हे सिशोदिया ! रणांगण से तूं पैर कैसे हटा सकता था ? युद्ध भूमि से अन्य राव, क्षत्रिय हटगये और यदि तूं भी पैर पीछे हटा देता तो सिशोदिया-कुल को लज्जा ही नष्ट हो जाती।

हे सिशोदिया रत्नसिंह ! हे कांधल के सुपूत ! तू अन्य योद्धाओं की भांति रणःस्थल से कैसे हट सकता था ? कुल लज्जा की जंजीरें तेरे पैरों को जकड़े हुए थीं इसीलिए तू प्रबल पराक्रम से युद्ध करता रहा।

उस समय राणा के सामंत युद्धःस्थल से भाग खड़े हुए, इसीलिए डूँगरसिंह वगैरह भी रणभूमि छोड़ चले। इस प्रकार रण-खेती निष्फल होती देख, हे रत्नसिंह ! लाज लंगरों से जकड़ा हुआ तूं युद्ध में अडिग बना रहा—युद्धस्थल से नहीं हटा।

८ रावत रत्नसिंह चुण्डावत सिशोदिया

गीत (छोटा साणोर)

झड़ बागां जाय जिके नर झूठा ।
मछर तणी भागवे मटक ॥
कटकां सरणान छूटै कांधल ।
कांधाला छूटै कटक ॥ १ ॥
रावत एम पयंपे रतनों ।
सीसोदियो नरोहां सार ॥

खसे खंधार म जाये मोखत ।
खतमो ओलू रहै खंधार ॥ २ ॥

भागलां हत रतनसी भाखै ।
दाखै चलण न पीठ देऊ ॥

थाटां तणी पीठ हूँ थोभूं ।
थाट मुड़ै किम मोहर थऊं ॥ ३ ॥

सुजड़ा हथ कांधाल समोभ्रम ।
वहरे बींजड़ा खेत वया ॥

धर गज खंभ रतन सी ढुलतां ।
गयंद राण-घर कुशल गा ॥ ४ ॥

भांजे गया अनेरा भूपत ।
छत खत्रवट सूरातन छांड ॥

रहियो हेक रतन सी रावत ।
मुगल घड़ा सांभा पग मांड ॥ ५ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:- तलवार बजने पर युद्ध-भूमि छोड़ कर चले जाने वाले मनुष्य झूंठे होते हैं और उनके गौरव का विनाश हो जाता है। सेना के सामने से कांधल वंशजों के पैर नहीं छूटते बल्कि उनके सामने (उनके) शत्रुओं के पैर छूट जाते हैं।

नर-श्रेष्ठ रत्नसिंह सिशोदिया कहता है—की कंधार देश के रहने वाले मुगल मेरी शक्ति के सामने (युद्धक्षेत्र) से भाग जाते हैं और अन्य यौद्धा मेरे क्षात्रत्त्व की शरण लेकर रहते हैं।

युद्ध-स्थल से भागने वाले को रत्नसिंह कहता है—कि मैं कभी विचलित हो कर रणांगण में शत्रुओं को पीठ नहीं दिखाता। भागने वालों के पीछे मैं ठहर जाता हूं और रिपु दल के पीछे फिरने (सामने होने) पर उनके आगे भागता नहीं हूँ।

कांधल पुत्र हाथ से तलवार-कटारी चलाता हुआ रण क्षेत्र में धराशाई हुआ। स्तम्भ-स्वरूप रत्नसिंह के गिरने पर राणा के हाथी कुशलता पूर्वक पीछे घर चले गये।

क्षात्र-कुल के गौरव और शौर्य को छोड़ कर दूसरे राजा रणांगण त्याग कर चले गये (उस समय)। मुगल सेना के सम्मुख केवल एक रत्नसिंह ही अडिग पैरों से खड़ा रहा।

६ रावत रत्नसिंह चुण्डावत सिशोदिया

गीत (सु पंख)

गजां उमंडे बादलां जूथ सकंजा कांठला गढ़ा।
बीज सोर झालां धजा गैणाला वहेस॥
संघणेस बूठो रणं त्राटां धार पाणां सुतो।
रोद थट्टां माथै सार झाटां रतन्नेस॥ १॥

पणंगां भालड़ां सोक झोक भड़ा मूठ पाणां।
घड़ा करे घमस्साण नीर खारां धीठ॥
त्रोह छोलां काल कीट चाढ हीकां वरस्साणौं।
गेहलोत रीठ लोहां तुरक्कां गरीठ॥ २॥

सुरंगां रड़क्कै नाला रै जाहरां सूंडां डंडां।
घाव मंडे खेचरां नहट्टां दाव घूंत॥
जुआला ठेल घणै वाव बूठो जम्मराव जुंही।
वड़िग आवधां राव केफां त्रपरूत॥ ३॥

१० रावत सींहा चुण्डावत सिशोदिया

गीत (वड़ा साणौर)

जमी ऊपटे काट अण घाट होय जणो जण ।
वढ़ण आय चापड़े थाट वागा ॥
पाण दाखै घणा वाट लागा असण ।
एक रावत तणी झाट आगा ॥ १ ॥
सता चूके असह गता चांग हुआ सोह ।
आवियो तता बांधे मता एक ॥
चचग गज घता वहगा ज्यु ही चलेगा ।
टलं गा जता करता मना टेक ॥ २ ॥
वांण छड़ वांण अप्रमाण रण वहातां ।
चूक अवसांण के ही अचूकां ॥
भीच चुंडा तणी खटक भागी नहीं ।
रटक ले ले गया कटक रूकां ॥ ३ ॥
सीह सांगण तणे फतै पाई समर ।
रगत प्रत धपाइ जोग रायो ॥
घटावे मांण लागा वमोहग सारे ।
अरज ताजा सोर धकै आयो ॥ ४ ॥

(रचयिता :- अज्ञात)

भावार्थ :— उलटती हुई पृथ्वी के समान वीर-दल प्रकट हो हो कर युद्ध के लिये तलवार वजाने लगा किन्तु अकेले रावत के साहसिक वेग युक्त आघात को देखकर वहुत से शत्रुओं ने युद्ध-भूमि का पिछला रास्ता पकड़ लिया ।

मेलिया उतोल रोल ढीली लूण तास मीर ।
जंगां धम्मरोल तेगां चहुँ हरे जांस ॥
गोम रूपी रतन्नेस अनम्मी समाणो गोम ।
जमी तेह वामी जूप राखै जसव्वास ॥ ४ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:—उमड़े हुए बादल-समूह की भाँति, सज्जित गज-झुण्ड रणोत्साही हो उलट आया। रण स्थल की तोपों की ज्वाला बिजली की तरह आकाश में फैलने लगी। हे रत्नसिंह! उस समय (युद्धभूमि में) तूंने मुगल—समूह पर साहस-पूर्वक तलवार की (इन्द्र वृष्टि के समान) झड़ी लगादी है।

युद्ध—हर्षित सैनिक वीरों ने अत्यंत तेजी से पैने तीर चलाने शुरू किये और शत्रु सेना पर नमकीन पानी की तरह शस्त्राघात की वृष्टि करने लगा; जिसकी आवाज चारों ओर फैलने लगी और तूं काली घटा के समान मुगलों पर छा गया।

भू गर्भी (जमीन में गड़े हुए) सुरंगों की आवाज होने लगी; बंदूकों की गोलियों व तलवारों से हाथियों के घाव लगने लगे। उस समय भयंकर रूपा-खेचरी (योगिनियाँ) आदि उपस्थित हुईं। यमराज जैसे शत्रुओं पर घावों की झड़ी लग गई और सशस्त्र अश्वारोही रावत ने भी भीषण रूप धारण कर मुगलों को पराजित कर रणांगण से हटा दिया।

रणक्षेत्र में दिल्ली के मीर—मुगलों को खड्ग-प्रहार द्वारा चारों ओर बिखेर (तितर बितर) कर बांई तरफ अनमी रत्नसिंह ने वृषभ वत युद्ध भार के जूए (जूड़े) को अपने कंधों पर उठा लिया और पृथ्वी पर अपना यश अमर कर गया।

रावत सींहा तुरन्त ही एक संगठन कर युद्धः स्थल में आ उपस्थित हुआ। उसकी इस गति को देखकर सभी शत्रु चकित हो गये और जितने वीर-शत्रु हृदय में लड़ने का दम्भ रखते थे, वे शूर-वीर रणांगण में झरते हुए मदवाले हाथियों के साथ प्रविष्ट हुए और पुनः ज्यों के त्यों लौट गये।

युद्ध में अत्यन्त बाण चलाने वाले अचूक योद्धा भी चूक जाते थे। शत्रु-सेना के साथ तलवारों की टक्कर ले ले कर चले गये, किन्तु अपने हृदय में से वीर चुण्डा का भय नहीं मिटा सके।

सांगा के पुत्र ने युद्ध में विजय प्राप्त कर योगिनियों को इस प्रकार रक्त से तृप्त किया कि शत्रुओं को गौरव-हीन कर स्वामी का कार्य सफल कर सम्मुख हुआ।

११ राठौड़ राव वीरम देव मेड़तिया, मेड़ता

गीत (छोटा साणौर)

वांसे बरदेत कमंध वल़ दाखे।
लोह छतीस भुजां डंड लेव ॥
राणा रावल़ राव मुरड़ंतां।
दोयण हटक्या वीरम देव ॥ १ ॥

पत मेड़ता समर पत साहां।
अणियां मूंहे दीध उमेल ॥
वीरमदेव आवतां वांसे।
अन रावां पायो ऊवेल ॥ २ ॥

दाटक धरा फाटक दुदावत।
धड़चे मुगल़ मार खग धार ॥
दस सहसां नव सहस दो मझ।
वीर सहाय हुऔ तिण वार ॥ ३ ॥

जोधा हरो जोध रिण जूटो ।
जवनां ऊभलतां जम जाल़ ॥
पील़ा खाल़ हूँत पलटंतां ।
राव रठौड़ थयो रछ पाल़ ॥ ४ ॥

रिण रायामल बंधव रहे रिण ।
समहर भूप दिखावे साप ॥
(ओ) सांगो राण कुशल़ घर आयो ।
पह वीरम देव तणो परताप ॥ ५ ॥

(रचयिताः- अज्ञात)

भावार्थः- हे कुलीन राठौड़ ! तूं एक साहसी की भाँति छत्तीसों शस्त्रों से सज्जित हो कर महाराणा की सेना में सम्मिलित हुआ। युद्ध-भूमि में रावल नरेश एवं अन्य क्षत्रिय युद्ध से विमुख हो गये। उस समय हे वीरम देव ! तू ने ही शत्रुओं का सामना कर उन्हें परास्त किया।

हे मेड़ता पति वीरम देव ! बादशाह की सेना का सामना कर अपने पूर्वजों के गौरव को उज्जवल कर दिया। पीछे से तेरे युद्ध में सम्मिलित हो जाने से महाराणा के सैनिकों को बड़ी सहायता मिली।

हे दूदा के पुत्र ! तूं तलवारों से मुगलों के घाव लगाने के कारण इस मेवाड़ के लिये एक दृढ़ कपाट के समान सिद्ध हुआ। हे वीरम देव ! सिशोदिया और राठोड़ों की सेना का तू सहायक रहा।

हे राव जोधा के पौत्र वीरम देव ! तूं ने यमराज के समान मुगलों की सेना का सामना किया। हे राव राठोड़, "पीला खाल़" के स्थान पर राणा की सेना के चरण डिगने लगे। उस समय तूंने बड़ी सहायता की।

इस युद्ध में हे वीरम देव, तू और तेरा भाई राय मल, स्वामी भक्ति का पूर्ण परिचय देते हुए रण भूमि में धराशाई हुए तेरी ही

वीरता के कारण महाराणा सांगा युद्ध-भूमि से कुशलता पूर्वक घर आ सके।

१२ राव जयमाल राठोड़ मेड़तिया, बदनोर

गीत (छोटा साणोर)

गज रूप चढ़ण अंग रहण अंस भगत, पौहप कमल देसौत पग।
जिम जगदीस पूजतो जैमल, जैमल तिम पूजजै जग ॥१॥
गज आरोह वड वड़ा गढ़पत, चौसर धर वंदे चलण।
वीर तणो अरचतौ विसंभर, तिम अरचीजे आप तण ॥२॥
रथ हाथ रू कुसुम थिर रेखक, महिपत पग तल नीभे मण।
ग्रम कमधज जिण व्रड महा जतौ, आप वडम पूजया चरण ॥३॥
मोटो पह आराध करे महि, मोटो गढ़ लीजतां मुओ।
जोय हरि भगत तुआली जैमल, हरि सारीख प्रताप हुओ ॥४॥

(रचयिता :- अज्ञात)

भावार्थ :— हे जयमल, गजरूप नामक हाथी पर आरोहण करने वाले, तेरे शरीर में भक्ति का अंश एवं साहस देखकर तेरे चरणों में अन्य नरेश पुष्प की भांति (पुष्प रूप) अपने शीश को झुका कर तेरी वन्दना करते हैं। जिस भांति हे जयमल, तू ईश्वर के सन्मुख शीश झुका कर वन्दना करता था उसी प्रकार तेरे साहस से प्रभावित सारा संसार तेरी अर्चना करता है।

हे हाथी पर आरोहण करने वाले महारथी, तेरे सम्मुख राजराजेश्वर चरणों में पुष्प-माला अर्पित कर सदैव नमस्कार करते हैं। हे वीरम

टिप्पणी :— १ वि० सं० १६२४ ई० सन् १५६७ में दिल्ली के बादशाह अकबर ने चित्तौड़-विजय के लिये महाराणा उदयसिंह पर चढ़ाई की तब, बदनोर के मेड़तिया ठाकुर राठौड़ जयमल ने दुर्ग की रक्षा हेतु प्राणपण से युद्ध किया और वीर गति प्राप्त की। इस गीत में उसी का वर्णन किया गया है।

देव के सुपुत्र जयमल, जिस भांति तू ईश्वर की वन्दना करता था, उसी भांति सारा संसार तेरी वन्दना करता है।

हे राठोड़! अन्य नरेश रणांगण में प्रविष्ठ होते समय रथारूढ़ होकर हाथ में पुष्प लिये, ललाट पर केसर कुम्कुम् का त्रिपुन्ड लगाये, निर्भीक होकर केवल तेरे चरणों का ही ध्यान करते हैं। हे वीर पुत्र, जिस प्रकार तूं परम पिता परमेश्वर की पूजा करता था, उसी प्रकार तुझको भी ईश्वर-तुल्य आदरणीय मानकर तेरी पूजा करते हैं।

हे जयमल, चित्तौड़ जैसे बड़े दुर्ग को लेते समय तूंने वीर गति प्राप्त की। इसी कारण नरेशों में सर्व श्रेष्ठ मान कर सभी पृथ्वी के प्राणी के तेरी आराधना करते हैं। देवताओं में पूर्ण-भक्ति देखकर ही तुझे इस संसार में ईश्वर-तुल्य पूजनीय माना गया है।

१३ राव जयमल राठौड़ मेडतिया, वदनोर

गीत-(छोटा साणोर)

दिल्ली पंह आयां राण अत ढ़िल्लियों ।
तिण सूं कहैं चित्र गढ़ तूझ ॥
जैमल जोध काम तो जोठी ।
मारूआं राव म ढ़ील स मूझ ॥ १ ॥

खीज करे चढ़ियो खून्दालम ।
धणू कटक वंध मेल घणा ॥
गढ़ नायक मेलि यौं कहै गढ़ ।
तूं मत मेलै वीर तणा ॥ २ ॥

अकबर आवत उदियासिंव ।
चवै ढीलौ कीधो चित्तौड़ ॥
मोटा छात जोध हर मंडण ।
रखै मूझ ढीलै राठोड़ ॥ ३ ॥

जपै एम दुरङ्ग सूं जयमल ।
हूँ रजपूत धणी तो राण ॥
संक्र म कर लग सिर साजो ।
सिर पड़िया लेसी सुरताण ॥ ४ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:- चित्तौड़ दुर्ग कहता है कि "हे जयमल, दिल्लीपति अकबर के आने पर राणा अपने आप को असमर्थ जान कर मुझे छोड़ कर चला गया है। इसलिये हे राठौड़, "इस युद्ध का उत्तरदायित्व अब तेरे ऊपर है। तू भीरु बनकर मुझे मत छोड़ना" ॥ १ ॥

चित्तौड़ दुर्ग कहता है कि, 'हे वीरम देव के पुत्र। बादशाह ने क्रुद्ध होकर विशेष प्रकार से सेना का संगठन कर मेरे ऊपर आक्रमण किया है। जिस से मेरा स्वामी मुझे छोड़कर चला गया है। परन्तु हे वीर, तूं मुझे मत छोड़ना ॥ २ ॥

अकबर के चित्तौड़ पर असंख्य सेना लेकर आने की सूचना सुन कर उदयसिंह चला गया है। इस लिये दुर्ग कहता है कि—हे जोधा के वंशज वीर शिरोमणि जयमल, ऐसा न हो कि तूं भी मुझे छोड़ कर चला जाय ॥ ३ ॥

वीर जयमल दुर्ग से कहता है कि – "तेरा स्वामी महाराणा ही है और मैं उसका राजपूत हूँ। जब तक मेरे शरीर पर मस्तक है तब तक तेरे ऊपर किसी का भी अधिकार नहीं हो सकता। मेरे धराशायी होने पर ही अकबर तेरे ऊपर अधिकार प्राप्त कर सकता है, अन्यथा नहीं।"

१४ राव जयमल राठोड़ मेड़तिया, बदनोर

गीत

जैमल ऊपरे चितोड़ जंपै, मूंछ सूं कर मेल ।
सुरतांण रा दल आज, तो सिर विसर बांधे बेल ॥१॥

गण णांत गोलां गयण गाजै, पड़त लोहां पूर ।
भड़ ऊठ जैमल अनड़ भाखै, सीस बोठव सूर ॥२॥
खट मास विग्रह किया खंड खल, साभीया सेलार ।
वैखत या वढ़ण वेला, जाग अब जोधार ॥३॥
खाग पाण रायमल खेसे, पांण अकवर पाय ।
जैमल जस तेथ जुग में, जैतै कोट न जाय ॥४॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थ :— चित्तौड़ का दुर्ग कहता है– हे जयमल, तूं अपनी मूछों पर ताव देकर खड़ा हो जा क्योंकि शत्रु–पक्ष के यौद्धा (वादशाह) विजय –चिन्ह से सज्जित होकर आये हैं ।

तोपों की भीषण गर्जना हो रही है और शस्त्रों से अनेकों यौद्धा परस्पर आहत होकर धरती पर गिर रहे हैं । हे जयमल, चित्तौड़ का पर्वत तुझे पुकार कर कहता है कि :— तूं शत्रुओं के मस्तक काटकर उनको धराशायी करने के हेतु खड़ा हो जा ।

निरन्तर छः मास से शत्रु, राणा की सेना को भाले आदि शस्त्रों से नष्ट कर रहे । अनेको वीर धराशायी हो गये हैं । हे वीर जयमल, अब तूं शत्रुओं की सेना नष्ट करने हेतु जागृत हो जा ।

हे जयमल, इस युद्ध में अकवर का साहस देखकर रायमल के समान यौद्धा भी रण–भूमि से हट गये । इसलिये तूं युद्ध कर । क्यों कि जब तक चित्तौड़ का दुर्ग रहेगा तव तक तेरा यश अमर रहेगा ।

१५ रावत पत्ता, आमेट

गीत (छोटा साणोर)

वढियौ सुखेस पतो वाढालौ, वंभियौ सुरजन देख वढ ।
गढ़ चित्तौड़ गरव तण गरजै, गाडौ गौ रणथंभ गढ ॥१॥

जोय रणथंभ चित्रगढ़ जंपै, दल आयां सर बोल दियौ ।
सुरजन कलह छांड साचरियैं, कलह पते मोरेस कियौ ॥२॥
उरजन तणौ लसे ऊतरियो, सुत जगमल रहियौ सुधर ।
वेंहरौ हुऔ वेहूँ गढ़ विग्रह, हाडां अने हमीर हर ॥३॥
स्व पर वार छांडगो सुरजन, वढे पतो रहियौ वर वीर ।
नोर दुरंग चढ़ियौ नगद्रहां, नाडूलां उतरियौ नीर ॥४॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थ:— युवक वीर पत्ता चुण्डावत जख्मी होने पर भी वीरता से लड़ता रहा और हाड़ा सुर्जन घाव लगते ही भाग खड़ा हुआ। यह देख चित्तौड़ का किला गौरवान्वित हो कर गर्जता है और रणथंभोर का गढ़ लज्जित हो जाता है ॥ १ ॥

रणथंभोर के दुर्ग को देखकर चित्तौड़ कहता है—कि मेरे ऊपर जब जब शाही सेना आई तब पत्ताने शत्रुओं को सावधान कर युद्ध किया। किन्तु हे रणथंभोर, तेरे ऊपर सुर्जन युद्ध छोड़कर चला गया ॥ २ ॥

अर्जुन हाड़ा का पुत्र लज्जित होकर गढ़ से उतर गया और जगतसिंह का पुत्र युद्ध में स्थिर रहा। इसी प्रकार दोनों दुर्गों के बीच अर्थात हाड़ा और हम्मीरसिंह के वंशजों के प्रति परस्पर विवाद बढ़ गया ॥ ३ ॥

सुर्जन हाड़ा युद्ध काल में भीरू बन कर परिवार को त्याग रणथं-भोर से चला गया। लेकिन वीर शिरोमणि पत्ता घावों से रक्तरंजित होकर भी युद्ध-भूमि में ही धराशाई हुआ। जिस से चित्तौड़गढ़ ने सिशोदियों के प्रति गौरव अनुभव किया और नाडुल स्वामी (हाड़ाओं) के प्रति रणथंभोर का गौरव नष्ट होगया ॥ ४ ॥

१६ रावत पत्ता चुण्डावत, आमेट

गीत (छोटा साणौर)

कहै पतसाह पता दो कूंची ।
धर पलट्यां न कीजे धोड़ ॥

गढ़पत कहै हमैं गढ़ माहरौ ।
चुण्डा हरो न दये चीतौड़ ॥१॥

गोला नाल चत्रंग गढ़ गाजै ।
गाहे मीर साधीर घणौ ॥
जगा सुत नहँ दीये जीवंतां ।
तीजो लोचन प्रिथी तणौ ॥२॥

झटका झाड़ औझड़ां झाड़े ।
रखियौ दुरंग वढै रम राह ॥
ऊभा पते न चढ़ियौ अकवर ।
पड़िय पते चढ़्यौ पतसाह ॥३॥

अकवर नूं अड़ चाड़ राणा नूं ।
मुगलां मारण कियो मतौ ॥
उदयासींघ राण यम आखै ।
पलटी धरा जिण धणी पतौ ॥४॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थ :— वादशाह कहता है कि— पत्ता ! मुझे चावी दे दो। भूमि (का आधिपत्य) पलटने पर हठ न करो। लेकिन दुर्ग-स्वामी (पत्ता) कहता है कि अब तो गढ़ मेरा है और चुण्डावत, चित्तौड़ नहीं दे सकता ॥१॥

(तोपों के) गोलों से चित्तौड़गढ़ गर्ज रहा है (प्रतिध्वनित हो रहा है). सेनापति (मीर) बहुत धैर्य धारण किये हुए हैं। किन्तु पृथ्वी का तीसरा नेत्र. जग्गा का आत्मज (सुपुत्र पत्ता) जीते जी (दुर्ग) देने वाला नहीं है ॥२॥

धारावाही (तलवारों के) प्रहारों से यौद्धा नष्ट हुए जा रहे हैं, (झड़ते) गिरते जारहे हैं। ऐसे विकट संघर्ष–समय में किले को शत्रुओं से बचा लिया। पत्ता के जीते जी (अकबर किले पर) न चढ़ सका, उसके (पत्ता के) वीर गति प्राप्त होने पर ही बादशाह (गढ़ पर) चढ़ सका ॥ ३ ॥

मुगल सेना ने राणा को मरवाने के लिये अकबर को उकसा कर सलाह की। (इस पर) उदयसिंह इस प्रकार कहता है–कि जिन नरेशों से भूमि पलट गई है, उसका स्वामी रूपी पत्ता सहायक बनता है।

१७ रावत जग्गा चुण्डावत, आमेट

गीत (वड़ा साणौर)

तिल तिल जुध हुओ खगां मुहं तूटे ।
चूण न सके दहु करां चूंप ॥
रावत कमल काज सिव रचियौ ।
सहसा उरजण तणो सरूप ॥ १ ॥

चिग चिग हुओ खाग धारां चढ् ।
वणियो जाय न क्रीतवर ॥
केलपुरा वाला सिर कारण ।
कीनां संभू हजार कर ॥ २ ॥

रज रज हुओ जगो भरियो रज ।
मिलवा भुगत जणियो भेव ॥
सम हर अ्रुगट लिपण दस संहसो ।
दस सौ करग वाधिया देव ॥ ३ ॥

सुत परताप वीरा टुकड़ा सिर ।
सुकरां गूंथी अजब सवी ॥
रुंड माल उर ऊपर रुद्राचै ।
फूलमाल अद्भूत फवी ॥ ४ ॥

(रचयिताः- पीरा आशिया)

भावार्थः- हे रावत ! युद्ध में तलवार की धार से तेरा सिर तिल २ होकर टूट पड़ा, जिसे एकत्रित करने के लिये शंकर को हजार हाथ वाले सहस्रार्जुन का रूप धारण करना पड़ा ॥ १ ॥

तेरा शरीर तलवार की धार से विच्छिन्न होकर गिरा है जिसके सुयश का मैं वर्णन नहीं कर सकता, हे केलपुरा (केलवाड़ा) के अधिपति सिशोदिया ! तेरे सिर की इच्छा से शंभू ने अपने हजार हाथ बनाये ॥ २ ॥

हे सिशोदिया जगतसिंह ! पूर्व ही तुझ को मुक्ति प्राप्त करने का भेद मालूम हुआ था जिससे तूं रणक्षेत्र में रज रज होकर रज में मिल गया था। उसी प्रकार हे दस सहस्त्र ग्रामाधीश (दस सहसा सिशोदिया), युद्ध-भूमि में तेरी वीरता को अवलोकन करते हुए तेरे सिर को लेने के लिये शिव ने हजार हाथ धारण किये ॥ ३ ॥

हे पत्ता के पुत्र जग्गा। तेरे सिरके टुकड़ों को शंकर ने अपने हाथों से एकत्रित कर एक अजीब तरह की पुष्प रूपी माला बना कर गले में धारण की और वह पुष्प माला उस रुण्ड-माल के ऊपर अलौकिक शोभा देने लगी ॥ ४ ॥

१८ परमार मालदेव

गीत (छोटा साणौर)

आयो पतसाह सोइज भ्रम ईखे,
धू रहे लग जेते खत्र धोड़ ।

मालों ग्रह ग्रभवास मेटवा,
चढ़ियो वीग्रहियो चीत्तोड़ ॥ १ ॥

सांम सुछल सत्र दल सालू लिये,
वध वांछ तो स लाधी वार ।
आयो कोट संकटियां ऊपर,
पालण जो न संकट परमार ॥ २ ॥

पांचावत पर जाय पांमियै,
मभ्क गढ़ पेठो निभे मणो ।
रण खट मास खमे जाय रोहो,
ताप मेटण दस मास तणो ॥ ३ ॥

वीजुजलां घणा खल विहंडे,
घणो पराक्रम मछर घणो ।
माल मूओ वीजो भव मेटण,
तीजो लोचन प्रथी तणो ॥ ४ ॥

(रचयिता :— पीरा आशिया)

भावार्थ :— हे मालदेव, जिस दिन बादशाह अकबर ने चित्तौड़ पर आक्रमण करने हेतु चढ़ाई की उस दिन तूं ने पुण्य–अवसर देख कर ध्रुव के समान अटल निश्चय कर इस संसार के आवागमन से मुक्त होने के लिये, रण–भूमि में तूं ने प्रवेश किया। इस प्रकार तूं ने क्षत्रिय कुल के यश को उज्जवल किया ॥ १ ॥

हे परमार, जिस समय शत्रु–सेना उमड़ कर युद्ध–भूमि में उपस्थित हुई उस समय हे सिंह के समान वीर, तुझे अपनी इच्छानुसार ही सुअवसर प्राप्त हुआ अर्थात् तूं ऐसे ही समय की प्रतिज्ञा करता

रहता था। हे वीर! पुर्नजन्म के कष्ट से वीर गति प्राप्त कर मुक्त होने के लिये चित्तौड़ दुर्ग की युद्ध जन्य आपत्ति के समय रण-भूमि में तूंने युद्ध किया ॥ २॥

हे पांचा के वंशज-(पंचमाल वंश) इसी दुर्ग को अपने पूर्वजों की वीर भूमि समझते हुए, तूंने निर्भीक हो, दुर्ग में प्रवेश किया। गर्भवास में दस माह के कष्ट से मुक्त होने के लिये छः मास तक, तूंने युद्ध भूमि के कष्ट को सहन किया ॥ ३ ॥

हे मालदेव तूंने क्रुद्ध होकर बड़े साहस से अनेकों शत्रुओं को तलवारों से नष्ट कर दिया। इस भूमि की रक्षा हेतु, पृथ्वी का तीसरा नेत्र होकर तूंने अपने पुनर्जन्म के कष्ट को मिटाया और धराशायी हुआ ॥ ४ ॥

१६ रावत गोविंद, चुण्डावत, वेगूं

गीत (छोटा साणौर)

पाखै भख गयण जोविये पंखण, जलण होम वण रहियो जाइ।
ईशवर कंठा हूँत सयाणे, घट गोविन्द वंटिये घण घाई ॥१॥

रातल,अगन समल,पल, रहिया,हुये नं कंठां गल शंकर हार।
रावत तणौ तणै मुँह रूकें, वप तल तल हुवो जुध वार ॥२॥

हुई न आसा, समल, हुँतासण, तवे न लूधै जट धर ताइ।
खंगार ऊत तणो मुँह खागै, घट रज रज पुहतो घण घाइ ॥३॥

करे अण दाह मंगल गृध क्रमियाँ, सुजड़ैं खपे सीसोद सर।
कसल धूणतो गयो कमाली, कमल अलाधे दोप कर ॥४॥

(रचयिता—अज्ञात)

भावार्थः— हे गोविंदसिंह। युद्ध में विशेष घावों से तेरा शरीर विभाजित हो गया, जिस से मान्साहार करने के लिये गिद्धनियाँ, जला

ने के लिये अग्नि और गले में मुण्डमाल धारण करने के लिये शंकर वंचित रह गये ॥ १ ॥

हे रावत ! तेरा शरीर युद्ध-समय तलवार के सामने तिल तिल हो गया, जिस से गृद्धनियाँ, चील्हें व अग्नि मांस रहित रहीं और शंकर की ग्रीवा बिना मुण्डमाला के ही रही ॥ २ ॥

हे खङ्गार के पुत्र, तेरा शरीर तलवार के प्रबल प्रहारों से रज रज हो चुका। इसी कारण से अग्नि और गृद्धनियाँ आशा-रहित हो गईं और शिव को ढूंढने पर भी तेरा सिर न मिला ॥ ३ ॥

हे सिशोदिया, तेरा सिर और शरीर तलवार से जर्जरित हो जाने से शंकर को तेरा मस्तक प्राप्त नहीं हुआ। अतः सिर हिलाते हुए निराश हो गये और इसी प्रकार अग्नि एवं गृद्धनियाँ भी मांस न पाने से निराश हो चलीं ॥ ४ ॥

२० 'राठोड़ रामदास' मेड़तिया

गीत (छोटा साणौर)

शशि थाइस तप थाइ सूरिज शितल,
तजे महोदधि वारि तुरंग ।
मृत भै रामदास रण मेले,
गमण पछम दिशि मंडे गंग ॥१॥
जले चन्द्र शिलो थाई जग चख,
रेणायर सां शतो रहे ।
जयमाल उत जाइ छांडे जुध,
वेणी जल उपराठ वहे ॥ २ ॥
आतश इन्दु अरक ताढ़िम अंग,
सायर छंडे लहरि सुवाह ।

पह मेड़ता चले पारोठो,
प मुं हे वहे सुर सरि प्रवाह ॥३॥
सोम सुर सामँद्र प्रता सुध,
अधट सुभाव दाखवे अंग ।
राम कियो मृत शामि धरम रसि,
पुनि तोया मिलि पूव प्रसंग ॥४॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थ :- हे राठोड़ रामदास, तूँ यदि मृत्यु के भय से युद्ध-स्थल को छोड़ कर चला जाय तो चन्द्रमां तीक्ष्ण किरणें और सूर्य्य-शीतलता धारण कर लेता है तथा समुद्र स्थिर हो जाता है एवं गंगा का प्रवाह पश्चिम की ओर मुड़ जाता है ॥ १ ॥

हे जयमल के पुत्र, यदि तूँ युद्ध-स्थल को त्याग कर विमुख हो जाता है तो चन्द्रमां प्रज्वलित होने, सूर्य्य शीतलता प्रदान करने तथा समुद्र अपनी सुन्दर ऊर्मियाँ छोड़ देता है एवं गंगा के जल का प्रवाह विपरीत दिशा में होने लग जाता है ॥ २ ॥

हे मेड़ता नरेश, तूं रणांगण में शत्रुओं को पीठ दिखाकर युद्ध-भूमि से प्रयाण करता है तो, उस समय चन्द्रमां तेज को धारण कर लेता है और सूर्य शिथिल-प्रकृति-बन जाता है। समुद्र लहरें रहित होकर गंगा उलटी बहने लग जाती है ॥ ३ ॥

टिप्पणी:—वि० सं० १६३३ ई० सन १५७६ में मेवाड़ के महाराणा प्रतापसिंह के ऊपर आमेर (जयपुर) के राजा मानसिंह के सेनापतित्व में दिल्ली के बादशाह की सेना ने चढ़ाई की और हल्दी-घाटी के मैदान में प्रसिद्ध युद्ध हुआ; तब राठोड़ जयमल के पुत्र रामदास ने युद्ध में अपना पराक्रम प्रदर्शित किया; उसी का इस गीत में वर्णन किया गया है।

कवि वर्णन करता है-रामदास अपने पूर्वजों की भांति स्वमी धर्म का निर्वाह करने हेतु युद्ध में शौर्य दिखाता हुआ वीर गति को प्राप्त हुआ। चन्द्रमां, सूर्य, समुद्र और गंगा आदि अपनी विपरीत गति त्याग कर पूर्व स्थिति में आगये। अर्थात चन्द्रमां पुनः शीतल किरणों को धारण करने लगा, सूर्य तेजस्वी होगया, समुद्र में लहरें प्रवाहित होने लग गई और गंगा का प्रवाह पुनः पूर्व में होने लगा ॥ ४ ॥

२१ चुण्डावत नरू और जैत्रसिंह

गीत (छोटा सावभड़ा)

उलटा दल आय लगे उँहटाला ।
सूर नरू भड़ जेत संघाला ॥
रैणां राण तणी रखवाला ।
कंवल बाराह पड़ै जहाँ काला ॥१॥

खैंग रूत उनागै खागे ।
भडतां के कायर नर भागै ॥
लड़ लोहां रहिया चिप लागै ।
वध वध वीर असी त्रिध वागै ॥२॥

सा दलपता जिमसता कर साका ।
कमा नरू संग दुदस काका ॥
वसुधा अमर करे जस साका ।
सोहड़ राण रा पड़ै सराका ॥३॥

काका सहित जेत कसनाणी ।
आवध सैन हणै असुराणी ॥

यण पर ईला राण घर आणी ।
चूरे दल रहियौ चुंडाणी ॥४॥

(रचयिताः– अज्ञात)

भावार्थः– ऊंठाला (वल्लभनगर) पर शत्रु सेना आक्रमण करने के लिये उमड़ आई, राणा की इस भूमि की रक्षार्थ काल पुरुष व शूकर–स्वरूपी वीर नरू और जैत्रसिंह ने अपना पड़ाव डाला ॥ १ ॥

नग्गी तलवार लिये घोड़े को युद्धः स्थल में दौड़ते हुए देखकर भिड़ते हुए कितने ही कायर पुरुष रणांगण से भाग गये और जो वीर युद्ध–भूमि से पीछे नहीं हटे उन्हें वीर नरू और जैत्रसिंह ने बढ़–बढ़ कर तलवारों द्वारा जख्मी कर दिया ॥ २ ॥

राणा के यौद्धा सरदारसिंह, प्रतापसिंह, कमा, नरू और साथ में दूदा जैसे काका सहित पत्ता चुण्डावत के स्वरूप युद्ध कर सामान्य रूप में धराशायी हुए और इस युद्ध के विजय–यश को पृथ्वी पर चिरायु किया ॥ ३ ॥

किशनावत जैत्रसिंह और इसके काका ने मुगल सेना को शस्त्रों से नष्ट कर महाराणा का अपनी भूमि पर पुनः अधिकार करवाया। वीर चुण्डावत शत्रु–दल का दलन करता हुआ वीर गति को प्राप्त हुआ ॥ ४ ॥

२२ वीर चुण्डा के वंशजों की युद्ध सेवाएँ

गीत (छोटा साणोर)

चंद नाम किया भीखम काय चूण्डै,
भड़ रतन सी मुओ भाराथ ।
कांधल मूलां सीस काटिया,
राखे विरद जके रघुनाथ ॥१॥

मेरो चाचो पई मथा रै,
राघव दे जीता रण–वार ।
मुओौ, कलू, चीत हरमाड़ै,
सूरौ कसन करारे सार ॥२॥

रायां सींघ, रामचंद, रतनो,
आग, करमसी, जैमल, पाल़ ।
लीबो, मान, खेतसी, लखमण,
लाडखान, वेणौ, लंकाल़ ॥३॥

सांइये, सोढ, कियो गढ साकौ,
दूजे, सते, पते, दोय वार ।
फौजां सीस, कमौ, फर हरियौ,
खेत धणाह जीतो खंगार ॥४॥

कसने, नाम कियौ चहुँ कू टे,
सामल़, फरशे, कमै, सधीर ।
आगल़, मान, नरू, ऊंटहल़ा,
जैत, मुओ कटक जहांगीर ॥५॥

सिंघ, जगौ, गोविंद, चढ़ सारै,
पीथो, दूदो, अचल पहाड़ ।
सात वरस विग्रह सीसोदां,
मान, मेध, आणी मेवाड़ ॥६॥

करन, पंचायण, गोकल केशव,

नारायण, हामो, नरख ।

नग, जू भार, खेमसी, नरसी,

विने, हरि, रहिया विलख ॥७॥

केवल भगु, करमसी, कचरो,

आसो, खानो, लखां अ मूल ।

अचलो, वसनो, दूदो, आयो,

डूँगरसिंह, सखर, सादूल ॥८॥

राणा चाढ़ बांकड़ा रावत,

खत्रवट कांहि न लागै खोट ।

परियां तणां प्रवाड़ा पूरत,

कोट तुहालै बाधा कोट ॥९॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थः- वीर रतनसिंह, भीखम और चुण्डा ने कितने ही युद्ध विजय कर अपने नाम और यश को फैलाया, और अन्त में युद्ध-द्वारा ही धराशायी हुए। कांधल, मूलराज और रघुनाथ ने शत्रुओं के सिर काट कर अपने कुल की मर्यादा रक्खी ॥ १ ॥

राणा मोकल के शत्रु मेरा व चाचा को पई कोटड़ा (पहाड़ी स्थल) पर राघव देव ने मार कर विजय प्राप्त की। शूर वीर किशनसिंह और कल्लू ने तलवार की ताकत से हरमाड़े के युद्ध स्थल में वीर गति प्राप्त की ॥ १ ॥

रायसिंह, रामचन्द्र, रतनसिंह, प्राग करमसिंह, जयमल, लीवा मानसिंह, खेतसिंह, रावत लक्ष्मण, लाड खान और वैरागसिंह तुल्य शत्रुओं को रणांगण में नष्ट करते हुए धराशायी हुए ॥ ३ ॥

सलूम्बर का स्वामी साईदास सोढ़ा ने चित्तौड़ पर महाराणा उदय-सिंह के समय अकबर की शाही सेना से युद्ध कर वीर गति प्राप्त की। उसी तरह दूसरे सत्ता और पत्ता ने दो बार शत्रुओं से सामना कर उन्हें परास्त किया। रावत कम्मा ने भी दुश्मनों के ऊपर विजय-ध्वज लहराया तथा खङ्गार ने बहुत से युद्ध स्थल विजय किए ॥ ४ ॥

किशनसिंह, सांवलदास कम्मा, परसराम आदि ने युद्ध में धैर्य्य रख चारों दिशाओं में अपने नाम अमर कर दिये। मानसिंह, नरू, जैत्रसिंह राणा की सेना के अग्र भाग में रह कर जहाँगीर की सेना से सामनः कर रणांगण में काम आये ॥ ५ ॥

वीर रावतसिंघा, जग्गा, गोविंदसिंह, पीथा, दूदा, अचलदास व पहाड़सिंह ने तलवार के सामने जाकर घावों से परिपूरित होकर वीर गति प्राप्त की। उसी तरह मानसिंह, बेंगू के रावत मेघसिंह ने मेवाड़ से शत्रुओं के ७ वर्ष के अधिकार को हटा कर देश को महाराणा के अधिकार में किया ॥ ६ ॥

करन, पंचायण, मोकल, नारायण और हामा ने भी संसार में अपनी युद्ध विजय चिरायु कर दी। नगराज ने चित्तौड़ पर हाड़ी राणी के लिये युद्ध में शत्रुओं से लोहा लेकर वीर गति पाई। जूंझारसिंह, रत्नसिंह, नरसिंह, बना और हरिदास आदि बलख के युद्ध में धराशायी हुए ॥ ७ ॥

केवलदास, भगू करमसी, कचरा, आशा और खाना, इन वीरों ने शत्रुओं को निर्मूल कर दिया। अचलसिंह, बिशनसिंह, दूदा, डूँगरसिंह, शार्दूलसिंह आदि चित्तौड़ दुर्ग पर हाड़ी करमेती के लिये होने वाले युद्ध में भली प्रकार लड़ कर धराशायी हुए ॥ ८ ॥

हे राणा ! ऐसे बांके शूर-वीर रावतों ने शत्रुओं से सामना कर क्षात्र कुल के गौरव की कमी नहीं रक्खी और अपने पूर्वजों के समान तेरे सभी देश-दुर्गों की रक्षार्थ स्वयं दुर्ग बन कर (उनकी) रक्षा की ॥ ९ ॥

२३ रावत अचलदास शक्तावत, वानसी

गीत (सैलार)

पति साह हूरम पुकारे रे ।
मेवाड़ो अचलो मारे रे ॥
जगि खेतल मोकल जेहा रे ।
अगा लग राणा एहा रे ॥

चित्तौड़ दलीपत चढ़िया रे ।
गहरे सुर वाजित्र गुड़िया रे ॥
जुड़ेवा कजि सकते जाया रे ।
ऊपरि ऊंठहला आया रे ॥ १ ॥

तर वारि कुवाणां तीरां रे ।
मातो भड़ मीर हमीरां रे ॥
गुरजां वोह वाणी गोली रे ।
हुविया डंडेहड़ होली रे ॥

लाथो ल वत्था लागा रे ।
आहुड़िया मंगला आगा रे ॥
घरां दस लाग पिया घेरे रे ।
खेसविया अचले खागे रे ॥ २ ॥

दुर वेस पगां तल दीधा रे ।
लोहां बलि एता लीधा रे ॥
जोधार महा भड़ जूटे रे ।
फिर अकिर पटाभर फूटे रे ॥

धवि अविया रवते धारे रे ।
विवया कहै गौरव वारे रे ॥
हलकार अरीगढ़ हाकारे रे ।
अविया करि कूंत धसा कारे रे ॥ ३ ॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थ :— भयातुर बेगमें कहने लगी कि— "हे वादशाह ! मेवाड़ का अचलदास मार रहा है।" इसके पूर्वज राणा खेतसिंह व मोकलसिंह जैसे वीर पहले से होते आये हैं। यह यौद्धा भी वैसा ही है। दिल्लीपति ने जब चित्तौड़ पर आक्रमण किया तब रण-वाद्य वजाता हुआ शक्तावत का यह पुत्र अचलदास ऊंठाला (वल्लभ नगर) में युद्ध करने के लिये आया ॥ १ ॥

बेगमें कहती हैं कि तलवार और तीरों से राणा हमीर के वंशज एवं मुगलों के मध्य घमासान युद्ध होरहा है। गुर्जों, तीरों एवं वहुधा वन्दूकों की गोलियों की बौछार और होली की "गैर" की तरह स्फूर्ति से वीर तलवारों द्वारा युद्ध कर रहे हैं। सामंतों ने मुगल सेना को घेर लिया और अचलदास अपनी तलवार से हमारे सैनिकों को पीछे धकेल रहा है। इसलिये हे वादशाह ! अब अपने स्थान पर चले चलिये ॥ २ ॥

हे वादशाह ! दर्वेश (मुगल साधु), सैनिकों को मार कर, धरती पर गिरा कर वलि चढ़ा रहे हैं। क्षत्रिय यौद्धा अचल दास झूम झूम कर

टिप्पणी:—१-अचल दास, महाराणा उदय सिंह के छोटे पुत्र शक्तिसिंह का बेटा था । महाराणा अमर सिंह (प्रथम) के समय दिल्ली की मुगल सेना के साथ चित्तौड़ गढ़, मांडलगढ़ के युद्ध में इन्होंने भाग लिया और मारे गये। वानसी ठिकाने के रावत इनके वंशज हैं।

इस गीत में अचल दास की वीरता का वर्णन है।

हाथियों को तीर और भालों से छेद कर नष्ट कर रहा है। वेगमें पुकार-पुकार कर कह रही हैं कि हे बादशाह ! शत्रुओं ने अनेकों सैनिकों को शस्त्र से आहत कर धराशायी कर दिया है और ऊपर से हमें चुनौति दे रहे हैं ॥ ३ ॥

२४ रावत अचल दास शक्तावत, वानसी

गीत (वड़ा साणौर)

पछटि सार धारां मुहे मांडे रिण पाधरे।
अतुल वल अचल निय वंस उजाले॥
देस विच अट किया कटक दुर वेस चा।
काढ़िया वाढ़िये गाढ़ कालै॥१॥

वाढि केवांण मुहि काढ़ि जु जुवटां।
सामि चें काम घण थट समेला॥
अड़े रहिया प्रिसण जड़े थांणो डला।
भड़ अनड़ किया गयणाग भेला॥२॥

सूर सीसोदियाँ नूर वधियौ सु वैंस।
पाधरै सार धारां प्रहारे॥
उसर चड़िया जिता चूर कीधा अलगा।
हालिया विया घर सरम हारे॥३॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थः- हे वीर अचलदास तूने दर्वेश साधुओं से युद्धारंभ कर तलवार के सामने उनका अभिमान नष्ट कर दिया और अपने कुल को उज्ज्वल कर दिया है। दर्वेश साधुओं की सैना का पड़ाव मेवाड़ भूमि में पड़ा था उनको काल के समान क्रुद्ध हो रक्त रंजित कर भगा दिया।

हे वीर! तूं ने सैन्य-समूह के साथ अपने स्वामी के लिये तलवारों के घाव लगाकर शत्रुओं को इधर उधर कर दिया। मेवाड़ भूमि पर दुर्वेश साधुओं ने संगठन कर हठ पूर्वक पड़ाव डाल रक्खा था उन्हें तूं ने नष्ट कर दिया।

हे सिशोदिया वीर! तैंने अर्जुन के समान शत्रुओं पर तलवार से धार कर अपने वंश के गौरव को अधिक बढ़ाया है। जितने शत्रु तेरे सामने आये; उनको तूं ने छिन्न भिन्न कर इधर उधर भगा दिया, तेरे पक्ष के भीरु सैनिक लज्जित हो कर घर लौट गये।

२५ रावत अचल दास शक्तावत, बानसी

गीत (छोटा साणौर)

झक भखते पंखण किसै गुण भूखी।
रिण रड़वड़ती थकी रुगे॥
बगतर सहित अरीचा बटका।
चांच न वैसे केम चुगे॥ १॥

अरि दल़ समर भाँजिया अचल़े।
बांहले करंता बाहि बल़॥
सत्र पापड़ां खापड़ां सहेती।
ग्रीधण केम लेयवे गल़॥ २॥

वेर वराह विजावत विढते।
सत्र काटिया सनाह समेत॥
मटका करै दायणी भूखी।
खायण ते नावे रण खेत॥ ३॥

मरद जरद सहेतां मूंछाणा ।
वाढ करारे तेग वही ॥
सीसोदिया तुहारे समहरे ।
रातल अण जीमिये रही ॥ ४ ॥

(रचयिताः—अज्ञात)

भावार्थः—हे अचल दास ! तेरे युद्ध में गिद्धनियाँ भूखी रह कर क्यों भटक रही हैं ? तैंने शत्रुओं के वख्तर सहित टुकड़े कर दिये। मांसा हारी पक्षियों की चोंचें चुगा नहीं खा पातीं। अतः वे निराश हो कर निहार रही हैं।

हे अचल दास ! तूंने अपने बाहुबल से प्रहार कर शत्रुओं की भुजाएँ वख्तर सहित काट डाली हैं। इसलिये गिद्धनियाँ उन भुजाओं के मांस का किस प्रकार भक्षण कर सकती हैं ?।

हे वीजा के पुत्र ! अपना प्रतिशोध लेने हेतु तूंने शत्रुओं के वख्तर सहित टुकड़े कर दिये हैं, जिससे क्षुधातुर गिद्धनियाँ इधर उधर डोल रही है। किंतु वे रण क्षेत्र में आहार नहीं कर पाती।

हे सिशोदिया ! वख्तर धारी वीरों के तेरे प्रबल खड़ग प्रहार से कवच सहित टुकड़े २ हो गये। इसलिये रण क्षेत्र में गिद्धनियाँ आहार के अभाव में क्षुधित ही रहीं।

२६ रावत नारायणदास शक्तावत १

गीत (छोटा साणोर)

ऊधरिया माल वल जोधे अति ।
जस देउल अचले अगजीत ॥
कल हणि सूं क्रीतियां कैल पुरो ।
चाढै साह नरो वड चीत ॥ १ ॥

सकताउते सू मित सम धरिया ।
विसव सिसि सूर हय वयण ॥
अण भंगत्यां राउत अचलाउत ।
रूप चढ़ावै नर रयण ॥ २ ॥

घड़ पति साह सरिस चढ़ि धाए ।
विघन प्रसाद कियां खत्र वाट ॥
अजुवालै अतुली वल आचां ।
कलि जुग तास न लागै काट ॥ ३ ॥

समर समाथ लाख पाखर सम ।
प्रकट पराक्रम चंद प्रहास ॥
रज वीटियौ तपै रायो गुर ।
जगि उजलो खत्री कृत जास ॥ ४ ॥

(रचियता:- अज्ञात)

भावार्थ:- हे सिशोदिया नारायणदास ! सभी युद्धों में विजय प्राप्त कर तूं ने अपने पूर्वज 'मालदेव' और वल्लू जैसे वीरों के यश रूपी देवालय का जीर्णोद्धार कर दिया ! पूर्वजों के गौरव की सभी परंपराओं का स्मरण रखते हुए तूं ने विजय-यश प्राप्त किया ।

टिप्पणी:—१ नारायणदास महाराणा उदयसिंह का प्रपौत्र और शक्तिसिंह का पौत्र था तथा अचलदास का पुत्र था । महाराणा अमरसिंह के समय होने वाले युद्धों में यह मुगल सेना के साथ रहा और सगर (महाराणा उदयसिंह का छोटा पुत्र) का हिमायती था । इसने वेगूं की जागीर पाई थी । शाही सेना में रह कर इसने कई युद्धों में वीरता प्रदर्शित की । जिस की कुछ कवियों ने प्रशंसा की है- उन्हीं में से यह एक है । बादशाह की ओर से इसको भिणाय की जागीर दी गई थी ।

हे शक्तावत ! तेरे पूर्वजों ने युद्ध भूमि में सदा ही अपने वचनों का सूर्य, शंकर, विष्णु और चंद्रमा के समान दृढ़ता से पालन किया है। हे अचलदास के पुत्र ! तूं किसी से भी पराजित नहीं हुआ और तूंने अपने कुल-गौरव को अधिक वढ़ा दिया।

हे वीर यौद्धा ! वादशाह की सेना के सम्मुख आगे वढ़ कर क्षत्रिय कुल की मर्यादा पुनः स्थापित की। इस प्रकार तूंने अपने गौरव को कलियुग रूपी जंग (लोहे का मैल) से दूर रख प्रखर कर दिया है।

हे यौद्धाओं में सर्व श्रेष्ठ, वख्तर धारण करने वाले यौद्धा ! तूं प्रचण्ड वलवान और तलवार चलाने में प्रवीण है। हे सर्वश्रेष्ठ राजा ! तूं क्षत्रिय कुल गौरव से परिपूर्ण रहता है; इस लिये दीर्घायु रह जिससे, क्षत्रिय कुल का गौरव संसार में अनंत काल तक रहे।

२७ शक्तावत केशव दास

गीत (सिंह चला)

वळी भाजिगा वळ वंधणे वेली ।
भार थयां भुज सारी ॥
काढी भाण तणै गज केहर ।
केसव दास कटारी ॥ १ ॥

विषमी वार खड़ग झड़ वाजे ।
इसड़ी वहै अटारी ॥
माथौ धरण गयां मेवाड़ै ।
सोने रणी संभारी ॥ २ ॥

विरद अगार अभ नमै वळ भद्र,
रिण रहि अचळ रहा ही ॥

वढिये कमल पछै वाढ़ाली ।
वंकूढ़ै रावत वाही ॥ ३ ॥

सामल सूर जहीं सांगाहर ।
सांची पैज़ सम्हाली ॥
रूंधे दुसमण रे उर रोपी ।
पूचालै प्रत माली ॥ ४ ॥

(रचयिताः– अज्ञात)

भावार्थः–वीर पुरुषों को युद्ध भूमि में वढ़ते हुए देख कर केशव दास के सहायक वहादुरों ने युद्ध भूमि छोड़ दी। भाण-पुत्र केशवदास ने सिंह के समान हाथी-रूपी क्षेत्र पर आक्रमण करने के लिये क्रुद्ध होकर अपने पास से कटारी निकाली ॥ १ ॥

भयंकर युद्ध की गति में तलवारों की वौछारें हो रही थीं, उस समय वीर सिशोदिया ने अपने सिर के कट कर गिरने के वाद स्वर्णिम कटारी निकाली ॥ २ ॥

दूसरे वीर बलभद्र के समान युद्ध भूमि में अडिग रहकर तूंने अपने कुल–उज्जलता की सीमा कर दी है। वांके वीर रावत, तूंने अपने सिर कटने के पश्चात् भी शत्रु के सिर में कटारी का वार किया ॥३॥

वीर सामल दास, सूरज मल जैसे है सांगाके पौत्र, युद्ध में सावधानी पूर्वक खड़ा रह कर भुजवल से शत्रु-हृदय में कटारी का वार किया ॥४॥

२८ शक्तावत प्रताप सिंह

गीत (वड़ा सावझड़ा)

धमस वाज ऐराकियाँ अरावां धड़ हड़ै ।
कावली हू ह गे जूहं चड़िया कड़ै ॥

आज मैदान पतिसाह दोय आथड़ै ।
पातला ऊपरै फूल धारां पड़ै ॥ १ ॥
बेवड़ा, चौवड़ा, वेध पड़ वावरां ।
औझड़ां झड़ा तूटै छड़ां असम्मरां ॥
चौसरां थरां आडंवरां चम्मरां ।
नरां रै उपरै आभ फाटौ नरां ॥ २ ॥
खल पल खेचरां वीर नावद खले ।
ऊपरा ऊपरी गैढलां ऊथलै ॥
चाय गुरु अचल दादो तको का मचूचले ।
पतसाही कटक रूंधियौ पातले ॥ ३ ॥
राण राजड़ तणौ मार कै रावत ।
अह लेके वलू रे अने अचालावते ॥
मरण वालै लियो जरद अण मावते ।
सीलियौ आवगौ भार सगतावतते ॥ ४ ॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थः—तोप तलवार चलने की धड़ धड़ा हट होते ही कावुल वासी यवन वीर हुँक्कार करते हुए गजा रोही हो युद्धार्थ चढ़ाई करने लगे। युद्ध में आज वादशाह और प्रतापसिंह भिड़ने लगे । प्रताप सिंह पर पैनीं तलवार का वार होने लगा।

दोहरी-चौहरी वावर खानदान के साथ होने वाली शत्रुता से झगड़ा वढ़ा । शत्रुओं के तलवार और भालों के प्रहार से वीरों की अंतड़ियाँ वाहर पड़ने लगीं। यह आक्रमण ऐसा भयंकर था मानों आकाश टूट पड़ा हो। मुगल वादशाह पर उस समय शाही आडंवर से चँवर ढुल रहे थे ।

(शत्रुदल के) ढालों सहित योद्धा एवं हाथी एक दूसरे पर गिरने लगे जिन्हें भक्षण करने प्रेतादि वीर एवं पक्षी उमड़ पड़े। नारद नृत्य करने लगे। अचलदासोत पत्ता क्या कभी दब सकता है ? उसने शाही सेना को रौंद कर रोक दिया।

राणा राजसिंह के सामंत वल्लू, अचलदास के वंशज ने (पत्ता ने) युद्धोत्साह से फूले न समाते हुए वदन पर कवच पहना और शत्रुओं का वदला चुकाने का भार अपने कंधों पर उठा विपक्षियों का चुकारा (सफाया) किया।

२६ शक्तावत करमसिंह और खेंगार

गीत (वड़ा सावझड़ा)

प्रथम बोल परियां तरण तेज सुध पालि़या।
आज रा गैण लग कूंत उलालि़या॥
बांकड़े भाण रे वलु, रे वालि़या।
उरां ऊपरी खेंग ओतोलि़या॥१॥

धीर पामे नहीं तेग ऊँची धरे।
कने धमरोलि़या मीर तोबा करे॥
तूरं जांगी घूरं बोम लागा तरे।
ऊडिया बूर खंगार सिर ऊपरे॥२॥

वाढिया लड़थड़े घड़े धड़ दोवल़ा।
गांथल़ा लीजिये वाघल़ा गोकलां॥
भाइयां विहूँ भुज भार सा हुए भल़ा।
माडा तणौ घाय मरड़के मैंगलां॥३॥

राखियौ रूप मैंडारै रावते ।
चापड़े थापड़े तुरी चलाउते ॥
ईहगां थयो उदमाद घर आवते ।
साहिजां तणी जीत सगताउते ॥४॥

(रचयिता :— अज्ञात)

हे भाण के पुत्र वल्लू ! तूने शीघ्र ही आकाश की ओर भाले उठा कर पूर्वजों के गौरव का निर्वाह किया है और शत्रुओं के सामने घोड़ों को बढ़ा कर अपना नाम विख्यात कर दिया है।

हे करमसिंह ! तूने मुगलों को घायल कर तोवा-तोवा कहलवा दिया और तलवार को कभी भी खूंटी पर विश्राम और शांति नहीं दी। युद्ध के समय रण वाद्य की ध्वनि से आकाश गूंज उठा और उसी समय वीर खेंगार का मस्तक भी शस्त्र से कट कर भूमि पर गिर पड़ा।

हे गोकुलसिंह ! सिंह की भाँति तूने शौर्य का प्रदर्शन किया जिस से धड़ से कटे हुए अङ्ग चारों ओर लटक रहे हैं। भाइयों ने अपनी दोनों भुजाओं पर युद्ध भार धारण कर 'माड़ा' स्थान के हाथियों को शस्त्र द्वारा आहत कर धराशायी कर दिया है।

हे मेडा के स्वामी शक्तावत, तूने शत्रुओं के सामने बढ़ कर वीरत्व का रूप दर्शाया और बादशाह को पराजित कर, विजय प्राप्त की। जिस से कवियों के घर २ में उत्सुकता से यशोगान गाये जाने लगे।

टिप्पणी:—ये दोनों भाई थे और महाराणा उदयसिंह के छोटे पुत्र शक्तिसिंह के पौत्र थे। महाराणा अमर सिंह (प्रथम) के समय ऊँठाला (वल्लभ नगर) दुर्ग के मुगल प्रतिनिधि कयूम खाँ के साथ युद्ध हुआ। जिसमें वल्लू सिंह ने दुर्ग द्वार के किंवाड़ों में लगे भालों के साथ अपने को सटा कर हाथी द्वारा आक्रमण करवाया; जिससे किंवाड़ तो टूट गये परन्तु वल्लू सिंह भालों से छिद गये और वीर गति प्राप्त की। इसी प्रकार करम सिंह और खेंगार ने भी उक्त महाराणा के समय हुए युद्धों में वीरता पूर्वक भाग लिया। इस गीत में दोनों की वीरता का वर्णन है।

३० राजा भीमसिंह सिंशोदिया, टोड़ा [१]

गीत (छोटा साणौर)

जुग चार हुआ मो भारत जोतां,
अरक कहै ऐ वात अथाह।
भीम तणौ भांजे धड़ भवसां,
माथौ साथा से रण मांह ॥ १ ॥

सीसोदिया तणौ सूरा पण,
भाण गयण पति साख भरै।
दल अफड़ै दलां दुहुँ दुजड़ी,
कमल कल्है वाखाण करे ॥ २ ॥

बिढतौ भीम साथियां बधतौ,
साखी सूर उडं ते सास।
धड़ पड़ियौ धड़चै अरि धारां,
सिर पड़ियौ आखै सावास ॥ ३ ॥

ये वातां अखियात अमरावत,
कैरव—पांडवां जेम कर।
पड़तो धड़ पाड़तौ पंचाहर,
सिव वींधियो वोलतौ सिर ॥ ४ ॥

(रचयिता:– कल्याणदास, महड़ू)

टिप्पणीः– १. यह प्रसिद्ध महाराणा प्रतापसिंह का पौत्र और महाराणा अमरसिंह (प्रथम) का छोटा पुत्र था। महाराणा प्रताप के स्वर्गारोहण के पश्चात भी महाराणा अमरसिंह ने दिल्ली की मुगल सल्तनत से निरन्तर लोहा लिया और छोटे-बड़े सतरह युद्ध किये। जिनमें कुछ चढाइयां तो भीषण रही। इस समय बादशाह अकबर का

भावार्थः– सूर्य कहता है कि मुझे युद्ध देखते देखते चार युग हो गये हैं किंतु इस युद्ध की वात अनोखी ही है। युद्ध क्षेत्र में भीमसिंह का धड़ धराशायी हुआ है और सिर उत्साहित होकर बोल रहा है।

आकाश का स्वामी सूर्य सिशोदिया की वीरता की साक्षी देता हुआ कहता है कि कवंध दोनों सेनाओं के बीच में लड़ता हुआ तलवार से कट गया किंतु उसका सिर उसकी प्रशंसा कर रहा है।

देहांत हो चुका था और नुरूदीन जहांगीर दिल्ली के तख्त पर आसीन था। अपने अपने पिताओं के कृत संकल्प को पूरा करने के लिये जहांगीर और अमरसिंह के वीच दांव-पेच चल रहे थे, जिसमें उपरोक्त भीमसिंह ने कई वार शत्रु सैना के ऊपर शौर्य स्थापित किया था। वि० सं० १६७१ (ई० स० १५७४) में मेवाड़ और दिल्ली दरबार के वीच संधि होगई। महाराणा अमरसिंह का ज्येष्ठ महाराज कुमार कर्णसिंह, शाहजादा खुर्रम के साथ अजमेर के मकाम शाही दरबार में जाकर बादशाह पास पहुँचा। इसके बाद महाराणाओं के एक सहस्र सवार जमीयत के रूप में दक्षिण में रहने लगे और महाराणा के बड़े बड़े उमरावों, सरदारों, भाइयों तथा राजकुमारों का शाही दर्बार में आमोदरफ्त होने लगा। अपने वीरता पूर्ण कार्यों के कारण उपरोक्त भीमसिंह की शाही दर्बार में अच्छी पहुंच हो कर उसने मेड़ता का इलाका जागीर में पाया वह राजा-उपाधि प्राप्त कर पांच हजारी मंसवदार बन गया, तथा वह शाहजादा खुर्रम का तो अत्यन्त ही विश्वास पात्र होगया। तदनन्तर राजा भीमसिंह को टौंक-टोडा आदि परगने उपलब्ध हुए। वादशाह जहाँगीर के पिछले समय में नूरजहाँ वेगम के बहकाने में आकर वादशाह खुर्रम से अप्रसन्न होगया तथा उसको सजा देने के लिये शाही सेना रवाना हुई। खुर्रम के पक्ष पर वीर भीमसिंह शाही सेना से, जिसका सेनापति शाहजादा परवेज था और महरवतखाँ, मिली राजा जयसिंह तथा राजा राजसिंह आदि कितने ही वीर साथ थे, भिड़ गया वि० सं० १६८१ कार्तिक शुक्ला १५ को वनारस के समीप टौंस नदी के किनारे हाजीपुर के पास शाहजादा परवेज तथा भीमसिंह की सेना से भयंकर युद्ध हुआ प्रबंधवेग से तलवार चलाते हुए भीमसिंह ने शत्रु सैन्य को विचलित कर दिया। शाही सेना के पैर उठ गये ही थे कि भीमसिंह जोधपुर के राजा गजसिंह से उलझ पड़ा और टुकड़े टुकड़े होकर रणक्षेत्र में कट पड़ा। उसके साथी शक्तावत मानसिंह, गोकुलदास आदि बहुत से वीर मारे गये तथा आहत हुए। भीमसिंह के संबंध के गीतों में इसी विषय का विस्तृत वर्णन है।

भीमसिंह कटते २ भी अपने साथियों से आगे बढ़ गया, उसके उड़ते हुए (टूटते हुए) श्वासों की साक्षी सूर्य दे रहा है। उसका धड़ शत्रुओं की (आहसे) धार द्वारा छिल-छिल (कट-कट) कर पड़ गया है और उसका सिर पड़ा पड़ा भी उसे शाबासी दे रहा है।

तेरे भिड़ते हुए धड़ ने भी पांच हजार शत्रुओं को धराशाई कर दिया और तेरे बोलते सिर को शिव ने अपनी मुण्ड माला में पिरो लिया। हे अमरसिंह! तू ने अपना यश कौरव-पांडवों की भाँति अमर कर दिया है।

३१. राजा भीमसिंह सिशोदिया टोड़ा

गीत

अंग लगै बाण जूजुवा उडै ।
गै गाजै वाजै गुरज ॥
भाजै नहँ दली दल़ भड़तां ।
भीमड़ा हणमत तणा भुज ॥ १ ॥

त्रुट पड़ै ऊधड़ै बगतर ।
चौधारां धारां खग चोट ॥
ओट होय मंडियौ अमरावत ।
कालो पड़ै न मैमत कोट ॥ १ ॥

गोली तीर आछटै गोला ।
दोला आलम तणा दल़ ॥
पड़ दड़ियड़ चड़ियड़ चहुँ पासै ।
खुमाणौ लूंबिया खल़ ॥ ३ ॥

पातल हरा ऊपरा पराभव ।
खल़ खूटा टूटा खड़ग ॥

पंडव नामी नीठ पाड़ियौ ।
लग उगमण आथंमण लग ॥ ४ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:—युद्ध भूमि में वीरों के बाण लगने लगे, तोपें चलने लगीं और वज्र के समान प्रहार से हाथी चिंघाड़ने लगे। इस स्थिति में दिल्ली की सेना को पीठ न दिखा कर भिड़ते हुए हे भीमसिंह! तूँ हनुमान के समान दिखाई दिया ॥१॥

तेरे वीरों की तलवारों से घोड़े धराशायी होकर प्रति पत्तियों के बगतर टूट-टूट कर पड़ने लगे और शत्रुओं की तलवारों से तेरी ओर के वीरों के शरीरों से चारों ओर रक्त प्रवाहित होने लगा। अमरसिंह का पुत्र मदमस्त काल-सदृश, शहर कोट की तरह अडिग रह कर शत्रु-समूह से युद्ध करने लगा ॥२॥

चारों ओर से शाही सेना से घिरे हुए तेरे वीरों पर तीरों, गोलियों और गोलों की बौछारें होने लगीं और यौद्धाओं के सिर गेंद के समान युद्ध-भूमि में पैरों तले भटकने लगे। हे सिशोदिया! तेरे चारों ओर इस प्रकार शत्रु भूम गये थे ॥३॥

हे प्रतापसिंह के पौत्र! तेरे परलोक जाते जाते शत्रुओं का विनाश होने ही वाला था कि इतने में तेरे हाथ में से खड्ग टूट पड़ा और हे यौद्धा भीम, पाण्डु-पुत्र भीम की भांति प्रातः से सायंकाल तक युद्ध करता हुआ कठिनाई के साथ तूं धराशायी हुआ ॥४॥

३२ राजा भीमसिंह सीसोदिया, टोडा

गीत (बड़ा साणौर)

प्रलै होवै भड़ भिड़ज रिणताल लेखा पखै,
खत्रीपत भीम आवाहतें खाग ।

गिरन्द वजराखियां तणी परियड़ी गज,
नीजूड़े सूंड पांखावा नाग ॥१॥
अरि चंचल घणा लाखां गने आवटै,
अमर रे खाग आवाहते एम।
ढ़ालिया सिखर गिर जेम हसती ढहै,
तूंड़ तूटै वहै परी रह तेम ॥२॥
पिसण हेमर कचर नीधा कायल पुरे,
निवह खग पछटते वलव नामी।
गिरंद वजराखियां पांखियां भुयंग पत,
गजधरां पोगरां गयण गामी ॥३॥
मिटते खूरम भीमेण मृत दिन मछर,
विढै वीछोड़ियां खाग वांहै।
पड़े गज सबल धड़ मंडल ऊपरा,
मिल गज कमल वाउ मंडल मांहै ॥४॥
(रचयिता:- चतरा मोतीसर)

भावर्थ:- हे क्षत्रिय धर्म की रक्षा करने वालों में शिरोमणि भीमसिंह; खुर्रम की सहायतार्थ तेरी तलवार चलते समय युद्ध-भूमि में असंख्य वीर और घोड़े प्रलय काल के समान नष्ट होने लगे। तेरी तलवार द्वारा पर्वत की चोटी के समान हाथियों के शरीर धराशायी होने लगे तथा हाथियों की शुण्ड, 'पर' आये हुए सर्प की भांति आकाश में इधर उधर उड़ने लगीं ॥ १ ॥

नोट:- नीचे के तीनों ही पद्य-खण्ड़ों का भावार्थ एक उपमान और उपमेय इसी प्रकार से चले आते हैं।

३३ राजा भीमसिंह सीशोदिया, टोड़ा

गीत (छोटा साणौर)

भाखे धिन मरण तुहालो भीमा,
मुड़ि संचरता भाग मठे।
जल़ भूलियां मिटे ग्रभ जेथी,
तूं धारा झीलियो तठे ॥ १ ॥

अंत अखियात वात अमरा सुत,
अवरे नरे न होए आन।
वार सनान जठे जगि वांछे,
सार तठे तें कियो सनान ॥ २ ॥

सिसोदिया सुम्रित कीत सारीख,
घण दल़ हुओ वहंतै घाय।
तांते लोह छोह गंगा तट,
मंजन कियो महा रिण माय ॥ ३ ॥

(रचयिताः- चतरा मोतीसर)

भावार्थः- हे भीमसिंह, तेरी मृत्यु को सभी देखकर धन्य धन्य कहते हैं और सराहना करते हैं। जिस भांति इस भूमि के गंगा स्नान से सांसारिक मनुष्यों का आवगमन मिट जाता है, उसी भूमि में तूं ने युद्ध कर घावों से रक्त रंजित हो शोणित की धार से तथा गंगा जल से स्नान कर, तूं पवित्र हो गया है। इस प्रकार की भूमि से तथा रण से विमुख होकर भागने वाले मन्द भागी ही होते हैं ॥ १ ॥

हे अमरसिंह के पुत्र भीमसिंह, जिस गंगाजल से स्नान करने की वांछना मनुष्य करते हैं। उसी गंगा के किनारे पर तूंने युद्धारंभ कर,

तलवार की धार से रक्त रंजित हो, स्नान किया। ऐसे सौभाग्य अन्य व्यक्ति को कम प्राप्त होते हैं। तूं ने इस युद्ध में भाग लेकर अपना नाम अमर कर दिया ॥ २॥

हे सिशोदिया, तूं आवेश में आकर शत्रुओं की असंख्य सेना में युद्ध कर, गंगा तट की युद्ध भूमि में शस्त्रों के आघात से धराशायी होकर वीर गति को प्राप्त हुआ ॥ ३॥

३४ शक्तावत मान सिंह
(बड़ा सारणौर)

समन्द पूछियौ गंग सूं रूप पेखे सुजल ।
वहै जमना किसूं नवल वांनै ॥

ऊजली धार पतसाह धड़ आछटै ।
मेलियो रातड़ौ नीर माने ॥ १ ॥

महोदय पूछियौ कहौ मो सहस मुख ।
जमुन की नवौ सँरागार जुड़ियौ ॥

भाग रै लोह सुरताग धड़ भेलियो ।
चलौ वल पंड मो पूर चड़ियौ ॥ २ ॥

टिप्पणी:— १ इस गीत का नायक मानसिंह महाराणा उदयसिंह का प्रपौत्र, और शक्तिसिंह का पौत्र तथा भाण का पुत्र था। यह बड़ा वीर और शक्तिशाली था। शाहजादा खुर्रम ने दिल्ली के खिलाफ जब विद्रोह किया और पटना हाजीपुर के पास गंगा के किनारे विक्रमी सं० १६८१ ई० सन् १६२४ में शाहजादापरवेज से युद्ध हुआ तब महाराजा भीमसिंह के नायकत्त्व में मानसिंह ने बड़ा पराक्रम बताया और स्वर्ग सिधार गया। इस गीत में उसी का उल्लेख है

थागियल पूछियौ भणौ भागीरथी ।
सांवला नीर किसां समोहां ॥
साहरी फौज सगता हरे सींघली ।
लाल रंग चढ़ियो मार लोहां ॥ ३ ॥

जोय जमुना जुगत रीजियो समंद जल ।
विगत हेकरण वड़ी गंग वाती ॥
हिन्दुवै राव ओतालियो लोह हद ।
रगत मेछां तणौ नदी राती ॥ ४ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:— समुद्र पूछ रहा है कि हे गंगा ! यमुना आज नया रुप (लाल रंग) धारण कर कैसे वह रही है ? गंगा (इसका) उत्तर देती है— मान सिंह ने चमकती तलवार से शाही सेना विनष्ट कर दी है। अतः उसकी रक्त धारा से यमुना ने नया बाना धारण किया है।

समुद्र पूछता है कि हे सहस्र मुखी यमुना ! तू ने यह नया शृंगार क्यों किया है ? (इस पर) यमुना उत्तर देती है कि भाण के पुत्र ने शाही दल पर शस्त्र प्रहार किया है। अतः मैंने नया शृगार वनाया है।

समुद्र पूछता है कि हे गंगा ! श्याम जल में लाल रंग कैसे आ गया ? गंगा उत्तर देती है— नर-केसरी पुत्र शक्ति सिंह ने शाही सेना विनष्ट कर दी है अतः उसके रक्त प्रवाह से लालिमा आगई है।

गंगा की यह उक्ति सुन समुद्र प्रसन्न हुआ। कवि कहता है कि— हिंदुओं के स्वामी ने मुगलों पर प्रवल शस्त्र प्रहार किया है; उससे यमुना का नीर रक्त रंजित हो गया है।

३५ शक्तावत मानसिंह

गीत

खूरा वहसिया कारिमा खूसिया।
नेहसिया नीसाणै ॥
मानड़ा! तो जस मेलियो।
आज रौ अवसाणै ॥ १ ॥

जाल़ खाधौ सहि जादे।
ढाल गज तूं ढाहि ॥
मानड़ा दल़ तणा मंडण।
मांडि पग रिण मांहि ॥ २ ॥

खुरम खान दराब खीसिया।
त्रहासिया आंबाट ॥
अवियाट दूजा बल़ अचल़ा।
थोभियौ गज थाट ॥ ३ ॥

फिरै मुहड़ै गजां फोजां।
धजां नेजां ढाहि ॥
भाण रौ गो गयण भेदे।
मान हरी पुर माहि ॥ ४ ॥

(रचयिता:- जैता महियारिया)

भावार्थः- हे मानसिंह ! कितने ही विपक्षी यौद्धाओं को रणभेरी वजा कर तूं ने भयभीत कर दिया तथा कितने ही यौद्धाओं को तलवार के घाट उतार दिया। इसी कारण आज तेरा बहुत यश है।

हे वीर ! शाहजादा खुर्रम ने जहाँगीर से धोखा खाया। उस समय जहाँगीर पक्षीय यौद्धाओं को ढालों सहित हाथी से गिराने में तू समर्थ हुआ। रणभूमि में बड़ी दृढ़ता के साथ तूने युद्ध किया।

हे भाण के पुत्र मानसिंह ! शाहजादा खुर्रम बादशाही दरबार से रूठ कर भाग गया। इसका पीछा करने के लिये बादशाह जहाँगीर ने नगारे बजवा कर आक्रमण किया। उस समय वल्लू और अचलदास जैसे हे वीर! तूने प्रतिपक्षी जहाँगीर की गजारूढ़ सेना को रोक दिया।

हे भाण के पुत्र ! तूने विरोधी सेना की ध्वजा गिरा कर उस सेना को पुनः लौटा दिया। हे मानसिंह ! तूने शत्रुओं के शस्त्रों द्वारा वीर गति प्राप्त कर आकाश के परे स्वर्ग में निवास किया।

३६. शक्तावत मानसिंह

गीत (छोटा साणौर)

मेवाड़ थको पुरब खंड मांहे।
अड़यो सगतहरा अनुमान ॥
जुग पर देस जीववा जाई।
मरवा गयो करारो मांन ॥ २ ॥

माटी पणौ तुहालौ मांना।
रहियौ घणा घणा दिन रोस ॥
कोस हेक मरवा जाई कुण ?
कविलो गयो हजारां कोस ॥ २ ॥

पहोवाद जहाँ गीर पातसा।
कहियौ धिन राणौ करण ॥

ऊगतां सुरज जिसोही ऊगौ।
मान सिंह वालौ मरण ॥ ३ ॥

(रचयिताः— अज्ञात)

पूर्व भाग में स्थित मेवाड़ खण्ड में रहने वाले हे शक्तिसिंह के पौत्र ! तुझे सदा युद्ध का उन्माद बना रहता है। युद्ध का नाम सुन कर अन्य लोग दूर भाग जाते हैं ! परन्तु हे मानसिंह !. तूं मृत्यु के हेतु बड़ी उमङ्ग से रण भूमि में प्रविष्ट होता है।

हे मानसिंह ! तेरा शौर्य एवं वीरत्त्व दिन प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। शत्रु के सम्मुख मरने हेतु एक कोस (दो मील का एक कोस) भी कोई नहीं जता है किंतु हे वाराह रूपी वीर ! तूं मरने हेतु हजारों कोस दूर भी चला गया।

हे मानसिंह ! जब महाराणा और जहाँगीर बादशाह के बीच युद्ध हुआ तब उस युद्ध में तेरी वीर गति का यश सूर्योदय की किरणों के समान प्रकाशमान हुआ और राणा कर्णसिंह ने तेरी मृत्यु की सराहना की।

३७. शक्तावत गोकलदास, सावर १

सौरठा

गोकल हेक गमेह, हेक गमै हिंदू अवर।
सत तोलियो समेह, भार कहिक भौ भाणवत ॥१॥

भावार्थः– हे गोकुलसिंह ! (जिस समय तेरे और अन्य हिन्दुओं के सत्य को तुला पर तोलने के लिये) एक ओर तुझे और दूसरी (एक) तरफ सब हिन्दुओं को (पलड़े में) रखा गया तब तेरा ही पलड़ा कुछ वजनी रहा।

३७ गीत [सुपङ्ख]

सेना साझियाँ दली हूँ सूधो बादसाह साहजहां।
आयौ अजमेर जंगां जीतरै ऊफाण॥
कविन्दां बुलाया घणा हेत सूं उमाह करे।
मौजां झड़ी देणै इसो दीधौ फुरम्माण॥१॥

पढावो कुराण आछां बणावो मलेछ पातां।
समापां जागीरी लाख लाख लख रौ सामान॥
सुणे वाण एहा माण-भंग व्हे पुकारचा सारा।
दोन वंधु छोडौ म्हे न चाहां लेणौ दान॥२॥

क्रुध भरे जेण वेला जेल खाने तंग कीधा।
विना अन्न-पाणी सारा थाविया वेहाल॥
हरी रूप जेण वेला आयौ सगतेस हरौ।
हात जोड़ स्वामी पणै सुण्या सारा हाल॥३॥

बादसाह हूँत कह्यौ छोड जे इणांने वेघा।
ऐ न छंडै हिन्दू धर्म विनादी आफेक॥
कह्यौ साह भाण नंद पातवां छुडावो किसां?
एक एक प्रती चहां माथौ एक-एक॥४॥

सुणे वाण गोकलेस पैज बंध हुओ सागे।
कीधी वात सारी वादसाह री कबूल॥
क्रीत काज दीधा सीस सामंतां उतार के ही।
देण लागौ जाणौ प्रभू द्रोपदां दुकूल॥५॥

ईहगां वचाया जठै दाखिया विरद एहा।
सगत्ताणी चिरंजीवो वंस रा सिंगार॥
दूसरा नरिन्दां हूँत कहावो दातार दूणा।
जंगा सार धार वागां चौगुणा जुंझार॥६॥

(रचयिता :— अज्ञात)

भावार्थः— दिल्लीश्वर शाहजहाँ सेना सजा कर युद्ध विजय की उमङ्ग लेकर सीधा अजमेर आया। वहाँ बड़े प्रेम और उत्साह से कवियों को बुलाया और उनके लिये बख्शीस वृष्टि का फरमान निकाला।

इन कवियों को कुरान पढ़ा कर अच्छी तरह मुसलमान बना कर लाख–लाख की संपत्ति के साथ जागीर बख्शीस में दी जावे। इस बात को सुन कर सब कवि नूर–हीन हो कहने लगे–दीन बंधु ! हमें मुक्त कर दीजिये; हम आपका दान नहीं लेना चाहते।

परन्तु बादशाह ने क्रुद्ध हो कर कवियों को कारागृह में बंद कर परेशान किया; बिना अन्न जल के वे व्याकुल हो गये। उस समय ईश्वर स्वरूप शक्तिसिंह का पौत्र गोकुलदास आया और (उसने सम्मान के साथ) कर बद्ध हो सहानुभूति से सारी चर्चा सुनी।

(सब कुछ सुन कर) बादशाह से कहने लगा– इन कवियों को शीघ्र छोड़ दीजिये; क्योंकि ये सनातन हिन्दु–धर्म का त्याग नहीं करेंगे।

टिप्पणीः— १. यह वीर तो था ही, साथ ही कवियों का सम्मान करने वाला और दानी भी था। एक बार शाही दरबार में चर्चा चली कि राजस्थान के कवियों को मुसलमान बना कर क़ुरान पढ़ाई जाय। इसके लिये कवियों को जेल में बंद भी कर दिया गया। गोकुलदास ने इसका बड़ा विरोध किया और कवियों को छुड़वाया।

इस गीत में उसी घटना का वर्णन है।

बादशाह ने उत्तर दिया—हे भाण पुत्र! कवियों को कैसे छुड़ाते हो! इनकी मुक्ति के लिये एक-एक के बदले एक एक सिर चाहिये।

बादशाह का उत्तर सुन गोकुलदास ने प्रतिज्ञा की और सारी बात मंजूर कर अपनी कीर्ति के हेतु कई सामन्तों के सिर उतार कर इस तरह देने लगा—जैसे द्रोपदी को भगवान ने चीर प्रदान किया था।

कवियों को बचाने से इस प्रकार उन्होंने यश फैलाया कि हे कुल भूषण शक्तावत! तुम दीर्घ जीवी हो, अन्य दानी राजाओं से दुगुने दानी और युद्ध करने वालों से चौगुने वीर हो।

३८ शक्तावत गोकुल दास, सावर

गीत (छोटा साणौर)

भीमा जल़ मोहोर झेलिया मारत,
घणे पेसि गज बोह घणौ।
लागा गोकल़ तणे जे लोहड़,
ताह दूखे भागिल़ी तणौ॥ १॥

त्रिजु जल़ां खल़ां विहरेतो,
मेलिया घाव पड़ंतां मार।
भजिया अंग तणौ भाणावत,
सालै पोहो तजिया त्यां सार॥ २॥

सगता हरा तणौ समरी गण,
व्रणिया तन व्है खंड विहँड।
रूक न लागा तियां रावतां,
पीड़ा न मिटै तियां पंड॥ ३॥

कूंत बाण केवाण कटारी,
कैलपुरे खामिया कंठीर ।
राजा मेल्हे गया तिके रण,
साजा न हुऐ तियां सरीर ॥ ४ ॥

(रचयिता:– मोतीसर चतरजी)

भावार्थ:– हे गोकुलदास, राजा भीमसिंह के युद्ध–काल में तूँने सेना के अग्र भाग में रह कर हाथियों के अनेकों समूहों में प्रविष्ट हो कर उस युद्ध का पूर्ण उत्तरदायित्व अपनी भुजाओं पर ले लिया था । उस युद्ध में विरोधियों के शस्त्राघात से तेरे शरीर में घाव लगे थे किन्तु उन घावों की पीड़ा युद्ध भूमि को छोड़ कर चले जाने वाले भीरू सैनिकों के शरीर में विशेप वेदना करने लगी ॥ १ ॥

टिप्पणी:— मेवाड़ के वीर शिरोमणि महाराणा प्रतापसिंह के छोटे भाई शक्तिसिंह का पौत्र और माण का छोटा पुत्र गोकुलदास था । वि० सं० १६७१ ई० सन् १५१४ के आस पास मेवाड़ के महाराणा अमरसिंह (प्रथम) और दिल्ली के बादशाह जहाँगीर के बीच में जब सन्धि हुई तब, महाराणा के पुत्र कर्णसिंह शाही दरबार में गये । इनके बाद अन्य सरदार भी शाही दरबार में प्रविष्ठ हुए । ई० सन १६२३ में जहाँगीर के तीसरे शाहज़ादा खुर्रम (बाद में बादशाह शाहजहाँ) ने विद्रोह किया तब, दूसरे शाहजादा परवेज की अध्यत्तता में पटना के समीप हाजीपुर के पास टोन्स नदी (गंगा) के किनारे शाही सेना का खुर्रम से युद्ध हुआ । इस युद्ध में मेवाड़ के वीरों ने महाराणा कर्णसिंह के छोटे भाई भीमसिंह के सेनापतित्व में शाहज़ादा खुर्रम का पत्त लिया । इस शाही सेना में आमेर (जयपुर) के मिर्ज़ा राजा जयसिंह और जोधपुर के राजा गजसिंह भी सम्मिलित थे जिन के साथ लड़ाई हुई । परिणाम यह हुआ कि राजा भीमसिंह शाहज़ादा खुर्रम के पत्त में युद्ध करता हुआ, शक्तावत मानसिंह आदि वीरों के साथ वीर–गति को प्राप्त हुआ । इन्हीं के साथ लड़ने में गोकुलदास आदि वीर भी थे । इस युद्ध में गोकुलदास भी घायल हुआ । उसी का वर्णन इस गीत में किया गया है । इनके वंशज सावर ठिकाने में हैं ।

हे भाण के पुत्र, जिस समय तूं शत्रुओं को तलवारों से नष्ट करने लगा उस समय तलवारों की पड़ती हुई धार से वच कर अन्य नरेश चले गये। तेरे शरीर पर शत्रुओं के शस्त्रों द्वारा घाव लगे थे उनकी पीड़ा भीरू सैनिकों के हृदय में खटकती है ॥ २॥

हे शक्तिसिंह के पौत्र, तेरा शरीर शस्त्रों के धावों द्वारा वहुत क्षत विक्षत होगया परन्तु इस युद्ध में जिन क्षत्रियों के घाव नहीं लगे और जो भाग गये थे, उन के हृदय से तेरे घवों की पीड़ा नहीं मिटी है ॥ ३ ॥

हे सिंह रूपी वीर सिशोदिया, तूंने शत्रुओं की तलवारों व भालों, कटारियों और वाणों के वार अपने शरीर पर सहे और घावों से रक्त रंजित हुआ। ऐसे घावों से वच कर वे राजा छोड़कर चले गये किन्तु तेरे घावों की पीड़ा के कारण उनका शरीर कभी भी स्वस्थ नहीं हुआ। अर्थात् अपनी भीरुता और अपयश का घाव उनके हृदय में वरावर पीड़ा देता रहा ॥ ४ ॥

३६ राठौड़ गोपालसिंह मेड़तिया, जावला १

गीत (छोटा साणौर)

व्रत अचड़ां करण सात्रवां मारण।
कटकां हटक आसुरां काल ॥
भागां तूझ तणौ भणकारो।
गोपाला न करे गोपाल ॥ १ ॥

सुरताणोत लियण व्रद सवला।
सवलां सत्र उतारण सीस ॥
मुड़ियां तूझ तणौ मेड़तिया।
दुवियण नहँ कहाड़ै जगदीस ॥ २ ॥

अन मुड़तां जुड़तां आवाहे।
सिरदारां मोहरे समसेर ॥
मरणौ दीह गजग्राह मंडांणौ।
मुड़ियौ न कहाणौ गिर मेर ॥ ३ ॥

जयमल हरा जाणता जिसड़ौ।
सांच पचो पूछियो सही ॥
विढे मुवौ कागदे वंचाणौ।
नीसरियौ वांचियो नहीं ॥ ४ ॥

(रचयिताः- गोकुलदास शक्तावत)

भावार्थः- गोपालसिंह ! युद्धभूमि में शत्रुओं को मारने हेतु मुगल सेना का काल बन कर तूने अपनी मृत्यु अमर करदी। किन्तु तेरा शत्रुओं से विमुख होने सम्बन्धी भी रुपन का स्वर जगदीश्वर ने कभी भी नहीं सुनने दिया।

हे सुल्तानसिंह के पुत्र ! तूने वीरता की परम्परा को रखने हेतु प्रबल शत्रु योद्धाओं के मस्तक शरीर से उतार दिये। हे मेड़तिया ! उन शत्रुओं के सामने युद्ध भूमि से पलायन करने के क्षीण-स्वर ईश्वर ने किसी के द्वारा भी नही सुन पाये।

हे वीर योद्धा ! युद्ध भूमि से विमुख न होने वाले शूरोंका सामना करने के लिये अपने सैनिक सरदारों के आगे रह कर तूने ही तलवार चलाई। उस समय गजग्राह युद्ध की भांति तेरा युद्ध शत्रुओं से छिड़ा।

टिप्पणीः- १. सम्भव है इस गीत का नायक गोपालसिंह मेड़तिया गीत के रचयिता गोकुल दास शक्तावत का कोई मित्र अथवा सम्बन्धी रहा हो। जिसकी प्रशंसा में गोकुल दास ने यह गीत बनाया।

इस युद्ध में तूं पर्वत के समान, अचल रहा, और शत्रुओं से लोहा लेता रहा। किन्त युद्ध से तेरा पलायन किसी के द्वारा नहीं सुनाई दिया गया।

हे जयमल के पौत्र! जैसा मैं तुझे जानता था वैसा ही तूं सत्य दिखाई दिया। शस्त्राघात से तेरी मृत्यु-सूचना प्राप्त हुई। किन्तु युद्ध भूमि त्याग कर जाने का पत्र मुझे कभी भी प्राप्त नहीं हुआ।

४० रावत मानसिंह सलूम्बर १

गीत (वड़ा साणौर)

धरे घोक खत्रवाट खुरसाण चाढै धकै।
एक एकाध पत वडौ औनाड़॥
वांकड़ै लीध पतिसाह डाढ़ां विचा।
मान वाराह जेम धरा मेवाड़॥ १॥
असमरां धारि आधारि दाढां अगरि।
वढियौ गाढ फोजां विडाणी॥
हलल हेकल जिंहि दियंते चुण्ड हर।
ऊथल पाथल हुई धरा आणी॥ २॥
भेट दाव तणै धकै आवै भिड़ण।
चाल़ वांधै न को जुड़ण चाल़ै॥
काल़ दाढां महा धरापुड़ काढते।
कियौ गिड़ जेम उग्राह काल़ै॥ ३॥
मान सुरताण हरणां मृग मेटवा।
छोह व्हे वे असुर भोम छांडी॥

जायती रसातल भुजां वलि जैत रै।
मेर चित्तौड़ गल आण मांडी ॥ ४ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:- एक प्रमुख विशाल काय वीर मानसिंह ने क्षात्रकुल गौरव एवं स्व भूमि के लिये अश्वारोही हो कर बादशाह के सामने चढ़ाई की और वाराह रूप बन कर अपनी भूमि दाढ़ों में रक्खी (अपने ही अधिकार में रक्खी) ॥ १ ॥

शत्रु की विशाल सेना में साहस धारण कर स्वयं घाव लगाये और तलवार की धार स्वरूप जमीन दांतों पर उठा कर बचा ली। चुण्डा का पौत्र एक ही शूकर के सदृश टक्कर लगा कर उथल पुथल हुई जमीन को ले आया ॥ २ ॥

उस शत्रु के सामने दांव पेच से भिड़ने के लिये कोई सैन्य-समूह नहीं आ सकता, ऐसे (प्रबल) काल-स्वरूपी यवन की डाढ़ों (अधिकार) से पृथ्वी को निकालने के लिये वाराह (शूकर) के तुल्य काल-पुरूप बन कर रावत ने जमीन बचा ली ॥ ३ ॥

वीर चुण्डा ने जोश में आकर दैत्य हिरण्यकश्यप रूपी बादशाह से मेवाड़ की जमीन छीन कर उसे गौरव हीन कर दिया और पाताल में जाती हुई पृथ्वी को जैत्रसिंह के पुत्र ने अपनी भुजाओं से विजय कर चित्तौड़ दुर्ग के अधिकार में की ॥ ४ ॥

टिप्पणी:- १. रावत मानसिंह सलूम्बर ठिकाने का स्वामी था और विक्रम संवत् की १७ वीं शताब्दी के अन्त में महाराणा जगतसिंह (प्रथम) के समय कई युद्धों में इसने भाग लिया।

४१ झाला चंद्र सेण, बड़ी सादड़ी

गीत (वड़ा साणौर)

अईची मैं भीत चंद्र सैण राणा अकल ।
आज संसार सहि क्रीत आखै ॥
अमर जै सींघ वेल मेल औरंग अगै ।
राज पाखै न को धरा राखै ॥ १ ॥

सोढ रा प्रवाड़ा भाग तो सारखा ।
पहलका अहलका प्रिथी पुणिया ॥
राण रै साह रै धकै थिर राखतै ।
वड़ा धर वाहरू विरद वाणिया ॥ २ ॥

मुदे हूँता तिसौ काम कीधौ मुदे ।
वधै वाखाण दुनियाण वीयौ ॥
धणी चित्तौड़ रा बोझ भुज धारियां ।
दलीपत भुजां तो बोझ दीयौ ॥ ३ ॥

छात चीतौड़ सथर राखे छता ।
जिका तो वात संसार जाणै ॥

टिप्पणी:—१ चंद्र सिंह, महाराणा का सामंत और बड़ी सादड़ी का स्वामी था। यह ठिकाना सौलह के उमरावों में प्रथम माना जाता है। मेवाड़ के महाराणा राजसिंह (प्रथम) का समकालीन था औरंगजेब ने जब मेवाड़ पर आक्रमण किया तो यह बराबर युद्ध करता रहा। इस संबंधी वीरता का कवियों ने वर्णन किया है-उसमें से यह एक है।

खेसि औरंग पहल विखो मेटे खत्री ।
राखियौ देस दुइ बार राणौ ॥ ४ ॥

(रचयिता:- पता आशिया, मंदार)

भावार्थ:- हे वीर चंद्र सिंह ! तेरी बुद्धि की प्रशंसा आज संसार में हो रही है। राणा अमर सिंह व जय सिंह की प्रथ्वी पर औरंगजेब अपना प्रभाव तेरी सहायता के अभाव में नहीं रख सकता था।

सोढ़ा के समान हे पराक्रमी वीर ! तेरे जैसे भाग्यशाली के गौरव की प्रशंसा पृथ्वी पर भूत और वर्तमान सभी करते हैं। महाराणा की वार्ता को बादशाह के सन्मुख व्यवस्थित रूप से रखने के कारण तूं राज घराने का सहायक माना गया।

जिस प्रकार का तूं वीर था उसी प्रकार का वीरत्व तूंने दर्शाया। तेरी इस प्रकार की चतुराई का वर्णन यत्र-तत्र सर्वत्र होने लगा। तेरी भुजाओं के सहारे ही चित्तौड़ पति महाराणा ने चित्तौड़ का कार्य-भार दिया। यह जान कर दिल्लीश्वर ने भी तेरी सम्मति को मान्यता प्रदान की।

हे राजराणा ! तूंने उदयपुर के महाराणा का स्वामित्व स्थाई रखने में जो सहयोग दिया। वह सर्व विदित है। हे राजराणा ! औरंगजेब के आक्रमणों को अपनी चतुरता से शान्त कर दो बार मेवाड़ देश के संकट को टाला ।

४२. शक्तावत रावत घासीराम, बावल का १

गीत (छोटा साणौर)

देवलियो वंस नयर अनै पुर डूँगर,
त्रिहूँ ऐ भूप अभावो ताम।
बांधै तेग घणा बरदायो,
राण वसायो घासीराम ॥१॥

सूरज मलां रावलां साले,
घांले घणां केत्रियां घांण।
आंगम नरां दूसिरां नावी,
पर घर घर आणी खग पाण ॥२॥

मंडियौ मेर अडिग मेवाड़ो,
जुड़े दुरंग त्रिहुँ कीधा जेर।
ओ जुध वेर हणू जिम आखां,
सुतन सुद्रसण पाखर सेर ॥३॥

थह पातल अजवा रामा थह,
दहल पड़ै दिन माहि दह।
आंगल थकौ राण घर आडौ,
थहियौ डागल तणौ थह ॥४॥

(रचयिताः- पता आशिया)

भावार्थः- कुल उजागर, खड्ग धारी, महाराणा का वंशज घासीराम देवलिया, वांसवाड़ा और डूँगरपुर के तीनों नरेशो के दिल में निरंतर खटकता रहता है ॥ १ ॥

टिप्पणीः— १ इस गीत का नायक घासीराम महाराणा उदयसिंह के छोटे पुत्र शक्तिसिंह के पुत्र दलपतसिंह का वंशधर था और महाराणा राजसिंह प्रथम के समय विद्यमान था। यह राज्य के बड़े सरदारों में से था और शाही दरबार में भेजा गया था। इसने डूँगरपुर, बांसवाड़ा और देवलिया प्रतापगढ़ को आधीन करने की कार्यवाही में उदयपुर के महाराणा की ओर से भाग लिया।

इस गीत में उसी का वर्णन है।

महाराणा के अन्य वीरों ने शत्रु भूमि पर अधिकार करने की जिम्मेवरी खुद पर ली, किंतु वे भूमि अधिकार में न कर सके तब इस वीर घासीराम ने अपनी खड्ग-शक्ति से शत्रु-संहार कर उन की भूमि पर महाराणा का आधिपत्य स्थापित किया। जिस से यह देवलिया के सूर्य्यमल एवं डूँगरपुर के रावल के दिल में खटकता रहता है ॥ २ ॥

मेदपाट के इस वीर पुरूष ने पहाड़-स्वरूप युद्ध स्थल में अडिग रह कर तीनों गढ़ों को आधीन कर लिया। युद्ध-स्थल पर पाखर पहने हुए यह सुदर्शन के पुत्र, जैसे खड्ग लिये और वीर हनुमान के सदृश दिखाई देता है ॥ ३ ॥

रामसिंह, अजबसिंह और प्रतापसिंह के दिल में घासीराम के आतंक से प्रतिदिन जलन होती है। महाराणा के कार्य के लिये शत्रुओं के सम्मुख खड़ा हुआ यह वीर रावत अपने सिंह पिता के समान ही मालूम होता था।

४३. शक्तावत कानसिंह

गीत (वड़ा सावझड़ा)

मरण देख कोरो न कियौ करे वढा मतो।
अवलै वले मोसर अणी आवते ॥
रूक धम चक धमक धड़ विहंड रावते।
सावलै खेलियौ फाग सगताउते ॥१॥

तूटि गिड़ ऊथलां गजां मिरजा तुरै।
सार वरगल वगल फूटी उर सौं सरे ॥
भाइयां हके हिकां मोहरी ऊभरै।
पतंग अत खेलियौ वसंता कायल पुरे ॥२॥

वाज फोजा गजां वीच लोकां वकी।
हू वकै ऊवकां कूंत हाको हकी॥
जसौ ने कान जगमाल पीथो जिके।
चोल होली हुवा रूक राह चके॥३॥

नरां रा वरां छील तन वज्र नीसरै।
वाघ रा खाग कुलां वाट नहँ वीस रै॥
किलंब दोय सहस अस खांत आंकल करे।
गाढि हुय ताती वाढी रहिया गरे॥४॥

(रचयिताः- अज्ञात)

हे शक्तावत! तूने यौवनारंभ में जब तेरी मूछें बढ़ कर वक्राकार भौंहों की ओर उठ रही थी, ऐसे समय में केवल युद्ध में जाने का विचार ही नहीं किया, अपितु युद्ध में जा कर तलवार और भालों से होली के रास की भांति युद्ध क्रीड़ा की और उस में धूम धाम मचाकर शत्रुओं को मौत के घाट उतार दिया।

हे सीशोदिया! तेरे वीरों की तलवारें और भाले यवनों के कंधों में प्रवेश कर वक्षःस्थल के पार निकलने लगे। शस्त्राघात से हाथी व घोड़े धराशायी होने लगे। रणांगण में तेरे बंधुओं ने एक से एक आगे बढ़ कर वसंत ऋतु में खेले जाने वाले 'गेर' (लकड़ियों से खेला जाने वाला ग्रामीण नृत्य) में अभी २ छिटकने से जो ललाई फैलजाती है उसी प्रकार तूने और उन्होंने शत्रुओं को रक्त रंजित कर लाल कर दिया।

टिप्पणीः—गीत में उल्लिखित कानसिंह, महाराणा प्रतापसिंह के भाई शक्तिसिंह के पुत्र बाघसिंह की चौथी पीढ़ी में था। १८ वीं शताब्दी में जब औरङ्गजेब से युद्ध हुआ तब उस युद्ध में यह शामिल था। यही इस गीत में है।

हे शक्तावत वीर ! जसराज, कान्हा, जगमाल और पीथा, तुम शत्रुओं के ऊपर तलवार चलाते हुए स्वयं भी रक्त रंजित होगये और भालों के प्रहार से शत्रुओं के शरीर से रक्त प्रवाहित होने लगा।

नर-देहों को वज्र के समान तलवार छीलती हुई पार हो जाती थी और सिंह के समान हे शक्तावत वीर ! तूं तलवार चलाने में और शौर्य प्रदर्शन करने की अपने कुल की रीति को नहीं भूला और दो हजार शत्रुओं के घोड़ों के दग्ध चिन्ह लगाकर और उनके वीरों को आहतकर घर पर लौट आया।

४४ शक्तावत विठ्ठलदास

गीत (छोटा साणौर)

सकता हर साधिर निमो सूरा तन ।
प्रिथी सराहे तेण प्रमाण ॥
विठ्ठलदास देखि धड़ विढ़तौ ।
विठ्ठल माथौ करे वाखाण ॥ १ ॥

कलहण दोखि तणो केल पुर ।
आखै सह कोई अचड़ ॥
मेयण गो हलकारै माथौ ।
धार वाव रै कहै धड़ ॥ २ ॥

खंगारोत तूझ धिन खत्रवट ।
आखे जगि हुई अविध ॥
वसुधा थकौ सीस वाखाणै ।
कमंधां सूं कलहै कमंध ॥ ३ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थः—हे शक्ति सिंह के पौत्र ! तेरी धीरता एवं वीरता को नमस्कार है। तेरे इन गुणों की संसार प्रशंसा करता है। हे विट्ठल दास ! तेरा धड़ शत्रुओं पर प्रहार कर रहा है और मस्तक पृथ्वीपर पड़ा हुआ उसकी प्रशंसा करता दिखाई दे रहा है।

हे सिशोदिया ! तेरे रण कौशल को देखकर सभी तेरी प्रशंसा करते हैं। धरती पर पड़ा हुआ तेरा मस्तक वीरों को ललकारता है तथा धड़ शत्रु संहार कर रहा है।

हे खंगार सिंह के पुत्र तेरे क्षत्रियत्व का लोहा सभी लोग मानते हैं। पृथ्वी पर पड़ा हुआ तेरा मस्तक धड़ की प्रशंसा करता है और धड़ शत्रु से भिड़ रहा है।

४५ उगरसिंह राठोड़

गीत (छोटा साणौर)

जल चाढण अगर धरा जोधाणे ।
छल राणा कुलवाट छल ॥
र वदां तणा खांभिया रहिया ।
दहवारी थांभिया दल ॥ १ ॥

राखण रूप वड़ा राठौड़ा ।
चितौड़ा दाखण चटक ॥

टिप्पणीः— वि० सं० १७३६ ई० सन् १६१६ में महाराणा राजसिंह प्रथम के समय ल्ली के बादशाह औरङ्गजेब ने चढ़ाई की और देवारी के पास युद्ध हुआ। जिस में अनेक राठौड़ वीर शाही सेना से लड़ते हुए काम आये। उनमें इस गीत का नायक अगरसिंह राठौड़ भी एक था।

रणमल थाटी वार रोकिया ।
किल माचा घाटी कटक ॥ २ ॥

उदा हरा वडौ अब आखां ।
पाया हद सु तूठा परम्म ॥
महो राखी जाड़ी मेवाड़ा ।
सवल पहाड़ां तणी सरम्म ॥ ३ ॥

सावल तणा ऊपर जे सारा ।
घूमै अवरंग साह घड़ ॥
कालै मरण सिंघाले कीधौ ।
उदयापुर वाला अनड़ ॥ ४ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:— हे उमरसिंह देवारी के निकट पहाड़ों की आड़ में मुगल सेना को रोक कर तुम ने महाराणा के राज्य की रक्षा की, जिससे अपने कुल-गौरव को बढ़ाया और जोधपुर राज्य की प्रतिष्ठा रखी ॥ १ ॥

हे रणमल के वंशज ! तूंने सिशोदिया के वचन सुनकर शीघ्रता पूर्वक देवारी की घाटी में मुगल सेना के समूह को रोक लिया और राठौड़ों के गौरव क बनाये रखा ॥ २ ॥

हे उदयसिंह के पौत्र ! वह दिन तेरे लियें बड़े पुण्य का था, जब तुम ने मेवाड़ के विकराल पहाड़ों और उस जमीन की लाज रखी थी ॥ ३ ॥

हे सांवलसिंह के पुत्र ! जब औरंजेब की समस्त सेना तुम पर टूट पड़ी थी, उस समय साक्षात यमराज और सिंह के समान तूं युद्ध कर उदयपुर के पहाड़ों में धराशायी हुआ ॥ ४ ॥

४६. भाटी माहसिंह, मोही

गीत (वड़ा साणौर)

समर धुवे आंवांट होय नाद सिंधू सवद,
खहण लागै गयण भुगत खाथै।
खैंग ओतोलियौ सवल रै वड़ खत्री,
माहवै मूगलां घड़ा माथै ॥१॥

राण छल़ करण भारथ एकण रहण,
थर करे यल़ा सिर क्रीत थाटी।
अरी आड़ा खंडां वहण जुध ओरियौ,
भिड़ज जाडा थंडां बीच भाटी ॥२॥

जुड़े अर तंडल़ राण दूजा जगड़,
ढाहण दल़ां बीजू जल़ां ढांण।
अभंग राण तणै नमख अजुआलियौ,
पसंग आतां लियो बीच पीठाण ॥३॥

वरे रंभ मन वंछत वसे सुर थान वच,
एल़ा सर सुजस दध कड़ां अड़ियौ।
असण खग पाछट समर माहव पड़े,
चाए जेसल़ गरां नीर चढ़ियौ ॥४॥

(रचयिता:- अज्ञात)

टिप्पणी:— भाटी माह सिंह जैसलमेर के रावल मनोहर दास का पौत्र और सबलसिंह का पुत्र था। महाराणा राजसिंह (प्रथम) का विवाह जैसलमेर हुआ था। उसी के कारण यह मेवाड़ में आकर रहने लगा। राजनगर के पास मोही ठिकाने के ठिकानेदार इसके वंशज हैं। संभव है कि ये महाराणा जगतसिंह दूसरे के समय नादिरशाह के चढ़ाई करने पर युद्ध करते हुए मारे गये हो।

भावार्थः– युद्ध में जोशीले नक्कारों के साथ वीर रस की सिंधुराग की ध्वनि सुनाई देने लगी। युद्ध स्थल में वीरों के सिर आकाश की ओर स्पर्श करते हुए आतुरता से लगे और वीर क्षत्रीय माहवसिंह ने उस युद्ध–भूमि में मुगलों की सेना में अपने घोड़ों को प्रविष्ट किया।

इस देश को राणा के अधिकार में रखने के लिये उन की सहायता कर अचल रूप से भूमि रखने के लिये युद्ध कर माहवसिंह ने सुयश प्राप्त किया। अश्वारोही वीर भाटी ने सैन्य–समूह को नष्ट कर सेना में प्रवेश किया।

दूसरे जगतसिंह के समान वीर क्षत्रीय ने शत्रु–सेना से भिड़कर अपनी तलवार द्वारा शत्रुओं के टुकड़े–टुकड़े कर दिये। वीर भाटी ने महाराणा का नमक उज्जवल (सार्थक) करने के लिये सेना में प्रविष्ट होकर घमासान युद्ध किया।

अप्सराओं ने स्वेच्छानुसार वीरों का वरण किया, वीरों ने अपना यश समुद्र पार पहुँचा दिया और वीर माहवसिंह ने शत्रु–संहार कर जैसलमेर का गौरव बढ़ा, वीर गति प्राप्त की।

४७ रावत कान्धल चुण्डावत (द्वितीय), सलूम्बर [१]

गीत (वड़ा साणोर)

अदललियोबदलोनिकुं राखग्योउधारी।
राव इम मार जे जाणियों राण॥
केहरी झड़ी कांधल ऊवर कटारी।
चूक मझ उबारी अचड़ चहुवांण॥ १॥

प्रवाड़ो खाट दरबार न आयो सुपह।
कथन आंय नरां दूसरा कहिया॥
पांचलणी झड़ी कमर सूं पाकड़े।
राव रावत बिनै खेत रहिया॥ २॥

राम रो साझ नां यो कुशल रेण रो ।
दुवांने एक साथै दियो दाग ॥
उहीज रावत तणे धरे आलापियो ।
रावरे घरे गायो जिको राग ॥ ३ ॥

वैर रो शोव मेले न ग्यो वांसला ।
वलू हर पिसण लेगौ भरै बाथ ॥
भीच सुत मीत भाई अनै भतीजा ।
हमै जस सुणौ मूछां धरै हाथ ॥ ४ ॥

(रचयिताः- अज्ञात)

भावार्थः—रावत ने उधार न रख राव को मार कर अच्छा बदला लिया, जिस की जानकारी महाराणा को भी हो गई। चौहान केसरीसिंह ने चुण्डावत कांधल के वक्षःस्थल पर कटारी से वार किया उसके कारण कांधल ने भी चौहान केसरीसिंह पर वार कर यह कीर्ति अमर कर दी ॥ १ ॥

युद्ध विजय कर राव केसरी सिंह, महाराणा के पास जीवित नहीं आ सका, जिस से यह वृत्तान्त दूसरे मनुष्यों ने आकर उन्हें सुनाया। रावत ने कमर से कटारी निकाल वार किया, जिससे राव और रावत दोनों युद्ध-क्षेत्र में ही रह गये ॥ २ ॥

कांधल ने केसरीसिंह को ईश्वर की ज्योति में मिला दिया परन्तु वह भी घर पर रहने के लिये कुशलता से नहीं आ सका और दोनों का एक

टिप्पणीः- १. यह रावत रतनसिंह दूसरे का पुत्र था और महाराणा जयसिंह का समकालीन था। वि० सं० १७४८ के पीछे धूर (उदयपुर से ६ मील दूर) के तालाब पर चहुआन राव केसरीसिंह को मार कर स्वयं भी मारा गया। इस गीत में इसी घटना का वर्णन है।

साथ ही दाह–संस्कार किया गया। जिस प्रकार रावत के घर रोना धोना हुआ उसी प्रकार राव के घर भी रोने की आवाज सुनाई दी ॥ ३ ॥

आपसी शत्रुता को वे पीछे छोड़ कर नहीं गये। अपितु केसरीसिंह और कांधल दोनों अपनी शत्रुता को बाथ (अपने साथ) में भर कर ले गये, जिस से दोनों पक्षों के शूरवीर, पुत्रादि, मित्र और भाई-भतीजे आदि अपने अपने पक्ष की ख्याति सुन कर मूछों पर ताव देते रहे।

४८. रावत माधोसिंह चुण्डावत, आमेट १

गीत

माधै हेलवी दखणी दल़ मांहें,
मुगलां ठलां मझारी।
अरियाँ उअरि विचै धसि आधी,
कूंपलै चरे कटारी ॥१॥

भूखी डाकणी जेम भभकंती,
रहे न रोकी रूकां।
ढुक गिलै कालिज धाराली,
बूथ न मेल्हे बूकां ॥२॥

पातल हरा निमो पुरुपातन,
कल़ दल़ सबल़ कल़ासै।
उरड़ै फौज धजा विच आधी,
गुण की गजां गरासै ॥३॥

माडिया मार अनड़ मानावत,
कलिहण वार कराली।
मैंगल कवां चगचगा मध कर,
धांपावी धाराली ॥ ४ ॥

(रचयिता:- नाहरसिंह आशिया)

भावार्थ:- माधवसिंह ने दक्षिणी मुगल सेना के समूह पर वार किया और कटारी को शत्रुओं के हृदय में प्रवेश कर उनके कलेजे का आहार कर वाया ॥ १ ॥

क्षुधा-युक्त डाकिणी जैसी आतुर हो, रोकने पर भी न रूक शक्ति जैसी धार वाली कटारी ने दुश्मनों के वक्षःस्थल में घुस कर कलेजे का आहार करना शुरू किया और शत्रुओं के मांसयु दिल को खाती हुई पार हो गई ॥ २ ॥

युद्ध-काल में सेन के बीच प्रविष्ट हो बहादुरी दिखाते हुए झण्डे तक पहुँच कर तूने भाले और कटारी के सम्मुख शत्रुओं के हाथियों का निवाला करवा दिया। हे प्रतापसिंह के पुत्र! तेरे पुरुषार्थ को नमस्कार है ॥ ३ ॥

हे मानसिंह के वीर पुत्र! युद्धारम्भ में तूने वार कर मद चूते, और गुञ्जार करते हुए गज कुम्भ स्थलों को कटारी का निवाला बना (उसकी) क्षुधा शान्त की ॥ ४ ॥

टिप्पणी:- रावत मानसिंह का माधवसिंह पुत्र था। आमेट के रावत चुण्डावतों की जगावत शाखा के वंशज है। औरङ्गजेब ने मेवाड़ पर चढ़ाई की तब इसने बड़ा शौर्य दिखाया।

इस गीत में इसी सम्बन्ध का उल्लेख है।

४६. रावत केसरीसिंह चुण्डावत [प्रथम], सलूम्बर [१]

गीत (बड़ा साणोर)

कहर मेल लसकर डमर जेतहर कलोधर,
अवर नहँ धरपती धरै आंटा।
केहरी ग्रहै करमाल कांधालरै,
कीध ऊथल पथल वन्हे कांठा ॥ १ ॥

वांस पुर भांजतां सोच पड़ चहूँ चल,
सकल खल माण तज सेव साधै।
दुरै डूँगर परो थर कियौ देव गरे,
वाँह बर भलां तूं खड़ग बांधै ॥ २ ॥

धमकता पाखरां घसण लीधा घणा,
पोहव गज धजां तूं खेत पाड़ै।
मछर मन मेल सकतेस पाधर मुडै,
जूंझ कर खगां चहुवाण भाड़ै ॥ ३ ॥

सुरिन्द सीसोद दिल समंद रावत सकज,
गढ़ पती गांजिया त्रयह वड़ गात।
प्रगट दइवाण दीवाण भुज पूजिया,
छलै खत्र वट चूण्डा तणी छात ॥ ४ ॥

(रचयिताः— मानसिंह आशिया)

टिप्पणीः— १ यह रावत कांधल दूसरे का पुत्र था। १८ वीं शताब्दी के मध्य युग में मेवाड़ के महाराणा ने डूंगर पुर और वांसवाड़ा पर चढ़ाई की तब यह सेनापति बनकर गया था। उसी का गीत में उल्लेख है।

भावार्थः– हे जैतसिंह के कुलीन पौत्र ! तू आडम्बर के साथ सैना का संगठन कर हाथ में तलवार धारण करता है। तेरे साहस को देख कर अन्य नरेश तुझ से शत्रुता नहीं करते। हे कांधल पुत्र केसरसिंह ! तूने हाथ में तलवार लेकर मेवाड़ के पड़ोसी नरेशों को उथल पुथल ('डांवाडोल) कर दिया ॥ १ ॥

बांसवाड़ा को परास्त करने पर चारों ओर के नरेशो पर आतंक छा गया और सब शत्रुओं ने गौरव हीन हो तेरी दासता स्वीकार करली हे प्रबल–श्रेष्ठ बाहु वाले वीर ! तू तलवार कसता है सो अच्छा ही है, तेरे तलवार कसते ही डूँगरपुर और देवलिया तक कंपायमान हो जाते हैं ॥ २ ॥

पाखरों से सज्जित भड़भड़ा हट करता हुआ अश्व–सैन्य–समूह तेरे साथ है, तूँ शत्रु–सैन्य के हाथियों पर जो ध्वजाएं लहरा रही हैं उन्हें झुकाता है। तेरे साथी शक्तावत चाहुआनों से सांठ–गांठ कर सीधे मुड़ गये और तूने अपने बाहुबल से युद्ध कर तलवारों द्वारा चाहुआनों का नाश किया ॥ ३ ॥

हे दरियादिल वाले इन्द्र तुल्य सिसोदिया ! तीनों बड़े नामधारी राजाओं को पराजित करने का अच्छा कार्य किया। क्षात्र कुल गौरव से छलते हुए महाराणा और देश के प्रधान ने हे चूण्डा–कुल मणि ! तेरे बाहुओं की पूजा की।

५०. रावत संग्रामसिंह चुण्डावत, देवगढ़ १

गीत (छोटा साणोर)

थापै वधनौर खगां वल थांणा।
थागरां तणा धूजिया मेर ॥
खान तणा हिया विच खटकै।
सांगा ! तूझ तणी समसेर ॥ १ ॥

पावै सुख प्रजा, राण सुख पावै।
दोख्यां घरे गल्ं तो डाव ॥
दवारां तणौ करै नत देखौ।
चुण्डौ करै अचूण्डा चाव ॥२॥

वांदे वाट घाट पण वांदे।
जालम किया श्रीसणां जेर ॥
आपो डंड न हुऔ आगलियां।
मांटी पणै न छूटा मेर ॥३॥

मारे लिया सेद फल माहै।
आवे कटकां मेर अणी ॥
सेलां पाण धूपटी सांगा।
तैं सैंभर सुरताण तणी ॥४॥

गढ़ रछपाल दूसरा गोकल।
पालण सत्र दिली दल पूर ॥
रावत तणै भरोसे राणौ।
सैलां रमै हिंदवौ सूर ॥५॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ :— खड्ग वल से वदनौर के ऊपर अपना थाना नियुक्त किया, जिससे वहाँ के पहाड़ी-मेर लोग कम्पायमान हो गये, हे सांगा! तेरी तलवार मुगलों के हृदय में हमेशा खटकती रहती है ॥ १ ॥

टिप्पणी:- यह देवगढ़ के रावत द्वारिकादास का पुत्र श्रौर गोकुलदास का पौत्र था। महाराणा संग्रामसिंह (द्वितीय) के समय में मेरवाड़ा के मेरों को दवाने में इसने वीरता दिखाई थी जिसका उक्त गीत में वर्णन है।

बहादुरी एवं दाव-पेंच से शत्रुओं का गर्व नाश होजाता है। राणा और उनकी प्रजा सुख प्राप्त करती है। चुण्डा द्वारिकादास का पुत्र शत्रुओं के साथ नित्य अजीब तरह का युद्ध करने को इच्छुक रहता है ॥ २॥

जुल्म करने वाले शत्रुओं को रास्ते और घाटियों की मोर्चा बन्दी कर (उन्हें) जकड़ देता है। प्रान्तीय स्थानों के मेर शत्रु न तो दंड देकर मुक्त हो सकते हैं; न बल बताकर पीछा छुड़ा सकते हैं-अर्थात् उन्हें पराजय माननी पड़ती है।

हे सांगा! मेरों की जितनी सेना तेरे सामने आती थी उसे साधारण कष्ट से मार ली। तूने भालों की ताकत से बादशाह की सैंभर नदी पर भी अपना अधिकार जमा लिया।

हे दूसरे गोकुल सिंह! शत्रुओं को पराजित कर स्वामी के गढ़-देश की तूं रक्षा करने वाला है, तूं दिल्ली पति की सेना को रोकने वाला है। इसलिये तेरे भरोसे हिंदु-सूर्य महाराणा निश्चित हो पहाड़ों पर सहज-शिकार करता है।

५१. ठाकुर जयसिंह राठोड़ (मेड़तिया), बदनौर ?

गीत (बड़ा साणोर)

खड़े ज्यार महाराज, मगरां सरै खेड़िया।
लागियां चार चक त्रपत लारां ॥
बोल जैसाह हूंता जिके बोलियो।
थिर रह्या बोल जे साह थारा ॥ १ ॥

धणी माहरौ नह कूरम, राणो धणी।
अवरता वयण नहं तूंझ आलूं ॥
आपरा वयण हूं थाणो नहँ आदरूं।
आदरूं वयण जो राण वालूं ॥ २ ॥

सरोतर अंग नयर मिंढतो सदा ही।
घाय घड़ मोड़वा आद घाणो ॥
एक छत्र पत तणौ हुकम नहँ थापियौ ।
थापियौ राण रै हुकम थाणौ ॥ ३ ॥

आंट रा कोट मन-मोट मेरू अचल।
सूर तन ताप दे सीत सवायौ ॥
कहै जैसिंघ-जैसिंघ ! राणा कटक ।
एक रजपूत मो नजर आयौ ॥ ४ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:-जयपुर के महाराजा मेवाड़ की सीमा का पहाड़ी प्रदेश मेरवाड़ा के ऊपर अपना अधिकार स्थापित किया। चारों ओर के नरेश इस प्रकार से हठ पूर्वक अधिकार करने के कारण जयपुर नरेश से रुष्ट थे। उस समय हे राठौड़ जयसिंह ! तूने अपने वचन का बड़ी दृढ़ता के साथ निर्वाह किया।

हे जयसिंह ! तूने जयपुर नरेश से कहा कि मेरे स्वामी कछवाहा जयसिंह नहीं किन्तु मेरे स्वामी महाराणा हैं। इन वचनों को तूने असत्य नहीं होने दिया। साथ ही जयपुर नरेश की यह आज्ञा कि अमुक स्थान

टिप्पणी:- यह वदनौर के ठाकुर जसवंतसिंह का पुत्र था और राणा संग्रामसिंह (द्वितीय) के समय रणबाजखां मेवाती से बांदरवाड़ा में युद्ध हुआ, उस में इस जैत्रसिंह ने वीरता पूर्वक युद्ध कर रणबाजखां को मार कर उसकी ढाल छीनली (जो विजय चिन्ह स्वरूप वदनौर में मौजूद है)।

जयपुर महाराजा सवाई जयसिंह ने मेरवाड़ा में अपने थाने नियुक्त करने चाहे थे जिसका इसने प्रतिरोध किया। उक्त गीत में यही बतलाया गया है।

पर थाणा (सैनिक व्यवस्था) स्थापित करो, न मान कर महाराणा की आज्ञा के अनुसार ही तूने थाणा स्थापित किया।

जयसिंह ने जयपुर नरेश से कहा-कि "आप आमेर और उदयपुर को समान स्तर का नहीं समझ सकते क्यों कि उदयपुर शत्रुओं को रण-भूमि में परास्त करने वाला है।"

इस प्रकार जयसिंह ने कछवाहा जयपुर नरेश की आज्ञा की अवहेलना की और मेवाड़ नरेश की ही आज्ञा को शिरोधार्य किया।

हे राठौड़ जयसिंह ! तूने वीरता का परकोटा बन कर और पर्वत के समान अटल रह कर अपनी वीरता का प्रभाव चारों ओर फैला दिया। जिस से जयपुर नरेश कहने लगा कि "मेरी दृष्टि में महाराणा की सेना में जयसिंह राठौड़ एक ही क्षत्रिय है॥"

५२. ठाकुर जयसिंह राठौड़ (मेड़तिया), बदनौर

गीत [सु पङ्ख]

गाजै त्रंबालां निहाव घाव पिनाकां भणंके गांण।
धारियां उनाग खाग खत्री ध्रंम धोड़॥
दूठ जसो हुओ हेक आविया दक्खणी दलां।
राणा दलां आडौ कोट सारंभै राठौर॥ १॥

फरक्कै झंड नेजां आविया लड़ंग फौजां।
घूरतां त्रंबालां रणं तालां दाव - घाव॥
लोहड़ा दे्यंतो झाट ऊससे गैणाग लागौ,
सेवा भड़ां हूँत वागौ जैमाल सुजाव॥ २॥

बंदूकां गोलियां सोक झोक कूंता सोक बाण।
साकुरां तड़च्छे लोहां तूटे खलां संध॥

डोह घड़ां चौवड़ां अभंग भीच चाड़ राणा।
केवा हूंत जुटो वेवाणां कमंध ॥ २ ॥

मेदपाटां तणौ नीर राखियौ दूसरा मधा।
साम धमा तणी वेल म्हाड़ी सकत्त ॥
सोहिया बिरद मोटा जेसाह जीव संभ।
पाई फतै जीत जंग रहाई प्रभत्त ॥ ४ ॥

(रचयिताः- दानाजी. बोगसा)

हे राठौड़ जयसिंह ! नक्कारों के निनाद से और धनुष बाण के शब्दों से आकाश गूंज उठा। उस समय तूं क्षत्रिय धर्म के पालनार्थ नग्न तलवार ले कर युद्ध स्थल में उपस्थित हुआ। दक्षिण के आक्रमण कारी सेनाओं के सामने तूं काल के समान रहा और महाराणा की सेना की रक्षा के लिये तूं लोह-दीवार के समान खड़ा हो गया।

हे जयमल के पुत्र ! लहराते हुए ध्वज और नक्कारे बजाती हुई सैना के साथ तूने रण भूमि में प्रवेश किया। उस समय तूं शत्रुओं के सैनिकों के शरीर में शस्त्रों द्वारा घाव लगाने लगा और वीर योद्धा की भांति गर्व से आकाश की ओर मस्तक ऊँचा करता हुआ युद्ध करने लगा।

हे राठौड़ ! तूं बन्दूकों की गोलियों और तीक्ष्ण तीरों द्वारा शत्रुओं के अश्वारोहियों के तिरछे घाव लगा कर उनको नष्ट करने लगा। जिससे अश्वारोही और घोड़े दोनों ही धराशायी होने लग गये और राणा के हे अजेय वीर ! योद्धा राठौड़ ! तूं शत्रुओं की चतुरङ्गिनी सेना को शस्त्राघात द्वारा विचलित करने लगा।

माधवसिंह के सामने हे वीर ! स्वामी धर्म पालन करने हेतु तुझे शक्ति ने सहायता दी; जिससे तूने मेवाड़ के गौरव को बढ़ाया। हे

जयसिंह ! युद्ध में विजय प्राप्त कर अपने वंश को चिरायु करता हुआ लौट आया । जिससे तेरे शौर्य का यश चारों और फैल गया ।

५३. रावत माहसिंह सारंगदेवोत, कानोड़ [१]

गीत [वड़ा साणौर]

धूवे रोद सीसोद धर वेद मच धमाधम,
पीड़ न खमे कर जतन पाटै ।
माहवा सुवर कज अच्छर वर आंटे मले,
मले रुद्र अग्यारह कमल माटै ॥ १ ॥

चौल चख किया असमर धूवै चाचरै,
सुनर भमके पड़ै कुनर सांसे ।
सदन कज फरै ग्रहिया फलां सुरत्रियां,
वदन कज वड़ा सिध फरै वासै ॥ २ ॥

उरड़ भड़ सुभट थट मांन सुत ऊपरां,
खगां भट घाघरट रमे खेला ।
ऊभै खट सुवर वट निकट देखे अच्छर,
अगुट वट जोवे भट धार भेला ॥ ३ ॥

टिप्पणी:— १ माहसिंह, बाठरड़ा के रावत मानसिंह का पुत्र था । वि० सं० १७६८ में महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय के समय मेवाती रणबाज खां ने पुर और मांडल के परगने पर अधिकार करने के लिये चढ़ाई की । उस समय बांदनवाड़ा (खारी नदी) के पास होने वाले युद्ध में माहसिंह महाराणा के पक्ष में लड़ा और काम आया, जिसका इस गीत में वर्णन है ।

जगाहर बीजलां ऊजला करै जुध,
लू लेवर अपछरां कनै लीधा ।
गले शिवरतन जिम करे गल गेहणां,
कमल चागले सणगार कीधां ॥ ४ ॥

(रचयिताः- अज्ञात)

भावार्थः- सिशोदिया की जमीन के लिये जिस समय युद्ध आरम्भ हुआ, उस समय राणा के वीर सैनिकों ने मुगल शत्रुओं पर खचा खच तलवारें चलानी शुरू की। अनेक वीर घावों की वेदना को वर्दाश्त नहीं कर सके और उनका उपचार करवाने लगे। वीर महावसिंह रणांगण में युद्ध करता रहा। उसको वरने के लिये अनेक अप्सरायें और सिर को प्राप्त करने के लिये ग्यारह शंकर युद्ध-स्थल में आये ॥ १ ॥

लाल लाल नैत्र कर माहसिंह शत्रुओं के सिर पर तलवार चलाने लगा, उस समय वहादुर आग के समान गुस्से से भभकने लगे और कायर चिन्तित हो निःश्वासे डालने लगे। उस वीर को देव वालायें अपने घर ले जाने के लिये उसका पल्ला (कपड़ा) पकड़ने लगी और सिद्धराज शंकर सिर के लिये उसके पीछे फिरने लगे ॥ २ ॥

यवन योद्धा मानसिंह के पुत्र पर तलवारों के घाव करने के लिये दौड़ने लगे, उस समय आठों अप्सरायें उसको वरने के लिये और शंकर सिर लेने की प्रतीक्षा में थे ॥ ३ ॥

जगतसिंह के पौत्र ने अपने शरीर पर घाव लगवाकर शत्रु तलवारों की धारों को उज्ज्वल कर दिया। अप्सराओं ने उस वीर को वर कर पास में ले लिया तथा शंकर ने सिर रूपी रत्न को गले में धारण कर शृंगार किया ॥ ४ ॥

५४. सारंग देव (द्वितीय), कानोड़

गीत (वड़ा साणोर)

समर धूवे त्रां।।ट होय नाद सिधू सवद ।
जंगम अंग ओर जुथ जड़ा जाडौ ।।
दूठ सारंग हुऔ आवियां दखण दल़ ।
अभंग भड़ धरां चत्रकोट आडो ।। १ ।।

गाज गुण पनाकां वाण गोलां गड़ड़ ।
खलां सिर खीज जिम त्रीज खवते ।।
अभनमै भाण घमसांण विच और अस ।
राण धर राखवा काज रवते ।। २ ।।

अभंग तोखार गज भार विच और तो ।
सुतन महाव उत नृप काज सूरै ।।
रिम हरां झाड़खग पाड़ दल़ रहायो ।
भलाई सँहस दस लाज भूरै ।। ३ ।।

डिये मुख दाद दीवांण आलम दुनी ।
पारावार तटै चढ़ क्रीत पांगी ।।
अंव पख चाढ़ सारंग घरे आवियां ।
जीत खल़ राड़ वाजाड़ जांगी ।। ४ ।।

(रचयिता:—अज्ञात)

टिप्पणी:— यह रावत महासिंह का पुत्र था । महाराणा संग्रामसिंह (द्वितीय) ने महासिंह के वीरता पूर्वक युद्ध में काम आने की सेवा से प्रसन्न हो कर उपरोक्त साङ्गदेव को कानोड़ की बड़ी जागीर प्रदान की । उपरोक्त महाराणा के समय में उस (सारङ्गदेव) ने कई युद्धों में भाग लेकर वीरता दिखलाई थी । जिस का इस गीत में वर्णन है ।

भावार्थः–युद्ध के नक्कारे की आवाज और सिंधु राग सुन कर वीर सारंगदेव घोड़े पर चढ़ उस विषम युद्धः स्थली में आगया और दक्षिण की सेना के आने पर पराजित नहीं होने वाला वह वीर चित्तौड़ की भूमि के लिये दीवार (आड़-स्वरूप बन गया।

धनुष की टंकार और तोपों की गड़ गड़ाहट के समय महाराणा के राज्य के निमित्त, वीर भाण के समान घोड़े सहित, कड़कती हुई विजली के समान शत्रुओं पर क्रुद्ध होकर वीर सारंग देव ने उस भयंकर युद्ध में प्रवेश किया।

महावसिंह के अपराजित पुत्र ने घोड़े सहित हाथियों के समूह में प्रवेश किया और विपक्षियों को तलवार के घाट उतारते हुए शत्रुओं को धराशाई कर स्वयं जीवित रहा। उस समय सिशोदिया ने अपने देश की लज्जा (रक्षा) सारंग देव के हाथों में सौंप दी।

हिन्दुओं के स्वामी राणा ने अपनी ओर से उसे धन्यवाद दिया। सारंग देव अपने कुल का गौरव बढ़ाता हुआ और शत्रु ओं को जीतता हुआ तथा विजय वाद्य बजाता हुआ वापस घर लौट आया, जिससे उसकी कीर्ति समुद्र पर्यन्त फैल गई।

५५. रावत सारंगदेव (दूसरा) कानोड़

गीत—(बड़ा साणोर)

तुरां पाखरां समे सलहां भड़ां ततखरां,
दुजड़ जुध अर हरां वहण दावे।
थाट थंभ अभंग सारंग नाहरां थाहरां,
अला तो सारखां हाथ आवे॥ १॥
अमनमां भांण घमसाण जीपण अभंग,
सुजस जग रखण दध कड़ां सारे।

कलम दल़ वहण खग भीड़ छकड़ा कड़ां,
धरा तो सारखां भड़ां धारे ॥ २ ॥
तई सुपहां घड़ा मोड़ माहव तणा,
ल्हसै अर किता रहिया होण लोग ।
जड लगां पाण माना हरा तो जसा,
भरै कमल़ां जियां ऊजल़ा भोग ॥ ३ ॥
(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:- हे सिंह रूपी योद्धा सारंगदेव, तूं युद्ध-काल में शत्रुओं पर खड्ग चलाने के लिये पाखर (लोहे का चार जामा) सहित बख्तर से (वीरों की लोह निर्मित वेश भूषा) शूर वीरों को सुसज्जित रखने वाला है। प्रति-पक्षियों के समूह में स्तम्भ के समान पूर्ण रूप से अडिग रहने वाले हे योद्धा, यह पृथ्वी तेरे समान वीरों के ही हस्तगत होती है।

हे भाण के समान ही वीर, तूंने शत्रुओं से युद्ध में विजयी होकर, समुद्र के उस पार अपने यश को फैला दिया है। तूं बख्तर बांध कर मुगल सेना पर तलवार चलाने वाला है। यह पृथ्वी तेरे जैसे वीरों का ही आधिपत्य स्वीकार करती है।

हे माहवसिंह के पुत्र, तेरे सम्मुख अनेकों नरेश युद्ध भूमि से पलायण कर गये और कितने ही युद्ध-स्थल से भाग कर तेरी जनता के साथ दर्शकों में मिल गये। हे मानसिंह के पौत्र, तलवारों की शक्ति से ही तेरे जैसे योद्धा देदीप्यमान होकर इस धरती का उपभोग करते हैं।

टिप्पणी:- १ वि० [illegible] की १८ वीं शताब्दि के अन्त में महाराणा संग्रामसिंह (द्वितीय) के सामन्त कानोड़ के रावत सारंगदेव (द्वितीय) ने युद्ध आदि किये और तत्कालीन दिल्ली-दरबार में जाकर अपनी बुद्धिमत्ता का परिचय दिया था। इस गीत में अज्ञात कवि ने सारंगदेव के गुणों पर प्रकाश डाला है।

५६. रावत सारंगदेव (दूसरा), कानोड़

गीत (सु पंख)

सदा चढाड़े सीसोदा नीर बिरदां दीहाड़े सांके।
दशावे सहंसा धणी रहाड़े दुरंग॥
गजां ढाल पाड़ै जुड़ै गवाडै सवाड़ा गीत।
रूकडां विभाड़े रोदां अखाड़े सारंग॥ १॥

गड़ंवके जंगालां नालां कुण्डालां भणंके गोण।
तोड़वे तेजाला रणं ताला मे नत्रीठ॥
दलां पेलां वालां सजै दंतालां ढाहते दिये।
राव तो बंगालां मांथे करम्मांला रीठ॥ २॥

कहाड़ै वीरद् बंका भीड़ियां छकड़ा कड़ां।
वधै रोले भड़ां आगा वाधे वंशवान॥
विछोड़े गयंदां घड़ा दूजड़ां ओझड़ां वाह।
मुगल्ला मूंडड़ां दड़ां मेले दूजो मांनं॥ ३॥

ताड़यां विभाड़ खगां ओनाड़ माहव तणा।
मातंगां वरीस राजे पहां सारां मोड़॥
अंस धारी हिदवांण रांण भांण एम आखे।
चितौड़ा तो हाली भुजां नचितो चितोड़॥ ४॥

(रचयिताः– अज्ञात)

भावार्थः– हे सिशोदिया। तूं प्रतिदिन बहादुरी के साथ अपने स्वामी के दुर्ग की रक्षा करता है और अपने कुल–गौरव को बढ़ाता है। हे सारङ्गदेव! अखाड़े के समान युद्धःस्थल में गजा रूढ़ ढालों

सहित मुगल वीरों को, तूं अपनी तलवार से धराशायी कर सिन्धु राग के गीत गवाता है ॥ १ ॥

जिस समय युद्धःस्थल में नक्कारों और बन्दूकों की भयंकर गर्जना से आकाश गूंज उठता है, उस समय क्रुद्ध होकर तूं, शत्रुओं के टुकड़े टुकड़े कर देता है। हे रावत, तूं विपक्षियों की सेना के सजे हुए हाथियों और उन पर-आरूढ़ बङ्गालियों के सिर पर तलवार चला कर उन्हें धराशायी कर देता है ॥ २ ॥

शिर-त्राण कसे हुए हे वीर ! तूं प्रतिष्ठा (विरुद) प्राप्त करने के लिये शत्रु वीरों से युद्ध कर उनको छिन्न भिन्न कर अपने कुल-गौरव की वृद्धि करता है। मानसिंह के समान हे दूसरे वीर ! तूं, मुगलों की सेना के हाथियों सहित योद्धाओं पर तलवार-वर्षा कर दड़ियों के समान उनके मस्तकों को जमीन पर गिरा देता है ॥ ३ ॥

हे माहवसिंह के पुत्र ! तूं, ऐसे वीरों का विनाश कर हाथियों को दान में देता है और युद्ध-वीरता तथा दान वीरता में दूसरे राजाओं का सिर ताज है। हे शक्ति शाली योद्धा ! इसी कारण चित्तौड़ के स्वामी हिन्दुआ सूर्य महाराणा ने अपने राज्य का समस्त उत्तरदायित्व तेरे कन्धों पर डाल रखा है ॥ ४ ॥

५७. रावत-सारंग देव (द्वितीय), कानोड़

गीत (वड़ा सावझड़ा)

विरद धारियां भुजां भड़ लियां ऊबावरां।

हचै खल ढाल पांखर जड़ै हेमरा ॥

धणी छल स्याम भ्रम रखण चत्र गढ़ धरा।

धुपटी नाहरे खगां ईडर धरा ॥ १ ॥

मरद घमसाण पुह लिये आलोमलां।
वढण कज वाढ फेरी जीये वीजलां॥
डोह घड़ चोवड़ा फतह जंग खलां डलां।
खत्री गुर रौ छएल करै नत धूंकलां॥ २॥

कलह अवियाट धन सूर माहव काल।
वाजता त्र्यंबाटां सत्रा रां फाटै वकां॥
धूण जे दुरंग फौजां लड़ंग हिक धकां।
असुरची धरा मझ पड़ै नत ऊदकां॥ ३॥

वहादर कुल छलां रखण सारंग विया।
कैलपुर ऊधरा करां जग सिर किया॥
लोहड़ां साहरा मुलक लूटे लिया।
पटा वहतां गजां राण भुज पूजिया॥ ४॥

(रचयिताः-अज्ञात)

भावार्थः- शत्रुओं की सेना ढाल-तलवारों सहित घोड़ों पर पाखरें सजाकर पड़ी थी, वहाँ अपनी भुजाओं की कीर्ति लिये हुए उमरावों सहित वीर सारंगदेव चढ़ चला। स्वामी भक्त नाहरसिंह ने चित्तौड़ के भू भाग को रखने के लिये ईडर राज्य पर आक्रमण किया।

उल्टी रीति से युद्ध करता हुआ वीर सारंग देव शत्रुओं को मारने योग्य घाव देता हुआ तलवार चलाने लगा। शत्रु-सेना को चार-चार बार विचलित कर युद्ध स्थल में विजय प्राप्त करने के लिये शत्रुओं के टुकड़े२ करने लगा। इस प्रकार क्षत्रिय-कुल के गौरव की रक्षा करने वाला गुरु (मुखिया) अपनी मर्यादा की रक्षा के लिये नित्य शत्रुओं से युद्ध आरंभ करता रहता है।

हे महासिंह के पुत्र! तेरी युद्ध की तैयारी के लिये बजाये हुए नक्कारे की घोषणा सुन कर शत्रु बेहोश हो जाते हैं। ऐसे हे वीर पुरुष! तू धन्य है! शत्रुओं के दुर्ग को सेना की एक ही टक्कर से तू विचलित कर देता है, जिससे शत्रु शिविरों में सदैव अशान्ति बनी रहती है।

हे (द्वितीय) सारंगदेव वीर! अपने कुल की रक्षा के लिये तुमने दान वीरता और युद्ध वीरता प्रदर्शित कर संसार में अपना यश फैलाया है और बादशाह के प्रदेशों को हाथियों द्वारा लूट लिया; जिससे महाराणा ने तेरी भुजाओं की पूजा की।

५८. रावत पृथ्वीसिंह सारंगदेवोत, कानोड़ १

गीत-(बड़ा साणोर)

खरा हेमरा भड़ां पीथल चढ़े खेड़िया।
दूरत गत घेरीया फरे दोले॥
रूकड़ां पाण उफडां खियां रोलिया।
धोलिया धकाया दीह धोले॥ १॥

समर रा भमर सारंग तणा सींध ली।
कहर गत बजाड़े गजर केवाण॥
होलियां जेम फर दो लिया होबिया।
अरि हरां घुबिया भला आघाण॥ २॥

महा उमराव राणा तणे मेढ़रा।
वेढ़रा डाव वप चड़ेवानी॥
शाखरा भड़ां भिड़ज्जां चढ़े शावता।
मरद मेवाशियां हार मानी॥ ३॥

धके शिशोद मेवास चढ़िया धटा।
गोलियां गाज वड राग गवता॥
हामला धरां छल कीया माहव हचे।
राण रे मामला जीत रखता॥४॥

(रचयिताः—दल्ला मोतीसर)

भावार्थः— हे वीर पृथ्वीसिंह, तूं ने अपने योद्धाओं के साथ अश्व पर चढ़कर प्रयाण किया और चारों ओर घेरा डालकर भयंकर गति से मेर जाति को घेर लिया। तलवार की शक्ति से, धोलिया गोत्र के उन मेर उदण्डों का सर्वनाश करने हेतु दिन दहाड़े उन्हें ललकारने लगा॥१॥

हे सारंग देव के पुत्र, युद्ध-भूमि में तीव्र-गति से खड्ग चलाकर मानो पुष्प-रूपी युद्ध का तूं भ्रमर बन युद्ध के आनन्द-रूपी रस का पान करने लगा। शत्रुओं को चारों ओर से घेर कर 'फाग' (फाल्गुन का नृत्य विशेष "गेर") रूपी आक्रमण कर तूंने भली प्रकार उनके स्थानों को नष्ट कर दिया॥२॥

हे उच्च श्रेणी के उमराव, महाराणा के समान ही सम्मान पाने वाले, तूने युद्ध में विलक्षण प्रहार कर अपने शरीर की प्रचण्ड शक्ति सिद्ध कर दी और भिन्न-भिन्न जाति के अश्वारोही वीरों को सुसज्जित कर शत्रुओं पर आक्रमण किया, जिससे शत्रु तेरे सामने पराजित हो गये॥३॥

टिप्पणीः— १. महाराणा संग्रामसिंह (द्वितीय) के समय मेरवाड़ों का उपद्रव बढ़ गया था। तब कानोड़ के रावत पृथ्वीसिंह के नायकत्व में 'मेरों' को दबाने के लिये सेना भेजी गई थी। इस युद्ध में पृथ्वसिंह ने अपना शौर्य प्रदर्शित किया; उसी का वर्णन इस गीत में है।

हे सिशोदिया, उन मेर जाति के उद्दण्ड आक्रमण-कर्ताओं पर तूने ललकार कर गोलियों की वर्षा करदी। हे माहवसिंह के वंशज, तूने सिन्धु राग गाते हुए, पृथ्वी की रक्षा के हेतु युद्ध कर महाराणा को विजय प्रदान की ॥४॥

५६. रावत पृथ्वीसिंह सारंगदेवोत, कानोड़

गीत (बड़ा साणोर)

पड़े वेध कूरमजदे राण छल पीथलो ।
खलां सर बीज जिम वहै खवतां ॥
जागरण भड़ा भड़ छूट गोलां जठै ।
रूक भड़ डंडे हड़ रमै रवतां ॥ १ ॥

पीथलौ राण रा भड़ां सारंग पहल ।
वरे घड़ कुँआरी आय वागौ ॥
धसे आघो करे खाग नागो धजां ।
लड़ै सीसोद असमान लागौ ॥ २ ॥

वहै गोलां हुलां कून्त भटकां वहै ।
अनत रूधरा वहै नीक अभड़ां ॥
घणूं घमसाण दल हीक चाड़े घणां ।
दिये सारंग तणौ भीक दुजड़ां ॥ ३ ॥

छवे गोलो भुजां करे रोलौ अछक ।
फते कर ऊगरे धरम फलियाँ ॥
कहावे वोल माहव हरैं कीतरां ।
वजावे जीत रा वरां वलियाँ ॥ ४ ॥

(रचयिता—रावल वसराम)

भावार्थः– हे पृथ्वीसिंह ! महाराणा और कछवाहों के मध्य युद्ध प्रारंभ होते समय, तूं महाराणा की सहायतार्थ रणभूमि में तत्पर होकर बिजली के समान कड़कड़ाहट करता हुआ शत्रु-सेना पर टूट पड़ा। हे रावत ! युद्ध भूमि में भयंकर तोपों की गर्जना के मध्य तू तलवारों से 'गेर' (ग्रामीण नृत्य विशेष) खेलता हुआ युद्ध में लगा रहा।

हे पृथ्वीसिंह सारंगदेव ! महाराणा के युद्ध आरंभ करने के पूर्व ही तू ने युद्ध में तलवार चलाना प्रारंभ कर दिया, अबला और अबोध कन्या के समान सेना के साथ तूने एक अनुभवी वर की भाँति सभी उत्तरदायित्व अपने ऊपर लेकर युद्ध आरंभ कर दिया।

हे सारङ्गदेव ! उस भयंकर युद्ध में शत्रुओं के तोप के गोले, भालों तथा तलवारों के घाव लगाने लगा। जिससे शत्रुओं की सेना क्रुद्ध होकर भयंकर युद्ध करने लगी। परन्तु तूने फिर तलवार के वार की झड़ी लगा दी, जिस से उनके घावों में से अविरल रक्त धारा प्रवाहित होने लगी।

हे महासिंह के पौत्र ! युद्ध भूमि में भयंकर तोपों के गोले आकाश में आच्छादित हो गये; किन्तु फिर भी तूं अपने पुण्य तथा रण-कौशल से विजयी होकर नगारे बजाता हुआ अपने निवासःस्थल पर लौट आया।

६०. रावत पृथ्वीसिंह चुण्डावत, आमेट १

गीत (छोटा साणोर)

पुह रावत धनो पराक्रम पीथल।
घण वल़ पौरस दाख घणा॥
भड़तै समर भांजिया भाला।
तैं जुड़ दल़ दखणियां तणा॥ १॥

निछट पांण घड़ड़ धुव नालां।
धर राणा होए तो धक चाल़॥
माझी अवर मुड़ंतां मंडियौ।
तूं तेगां पाधर रण ताल़॥ २॥

चौरंग वार अचल़ चूण्डावत।
वागो काहूल़ चाहूँ घल़॥
सदा भड़ां हरवल दूलह सुत।
दुजड़ां भांजै – सवा दल़॥ ३॥

कुल़ अजुआल़ अभ नवा मधुकर।
सत्र थाटां गांजै सघण॥
वसुह सुजस दुनियाण वदीतो।
रूकां जीतो माहा रण॥ ४॥

(रचयिता:–अज्ञात)

भावार्थ:– हे राना के उमराव पृथ्वीसिंह ! तेरे पराक्रम को धन्यवाद है। तुझ में साहस शक्ति विशेष दिखाई देती है तूं दक्षिणियों की सेना से भिड़ने को युद्ध स्थल में प्रविष्ट हुआ और उनके भालों के टुकड़े कर दिये।

तीरों की बौछार, बन्दूकों की भयंकर आवाज होने लगी और महाराणा की देश भूमि को शत्रु शोणित से रंजित कर दिया और सेना

टिप्पणी:– १. यह रावत दुलहसिंह का पुत्र था और राणा संग्रामसिंह के समय मालवा की रक्षा के निमित्त होने वाले युद्ध में उक्त रावत ने भाग ले कर जीरण का गढ़ (परगना) अपनी जागीर में प्राप्त किया।

के वीर नायकों के मुड़ने पर तूने तलवारों की बौछार करते करते तलवारें भी तोड़ दीं।

हे चूण्डावत ! चतुरङ्गिनी सेनामें अडिग रहने वाले तूने युद्ध स्थल में वीर वाद्यत्रादि की भयंकर आवाज होते समय अग्र भाग में रह कर अपनी तलवार से शत्रु सेना को विनष्ट कर दिया।

हे माधवसिंह (द्वितीय) ! अपने कुल को उज्ज्वल रखने के लिये शत्रु-समूह को तूने पराजित कर दिया और तलवार की ताकत से विजय प्राप्त कर इस संसार में अपना यश फैलाया।

६१. रावत जसवंत सिंह चूंडावत देवगढ़ १

गीत (वड़ा साणौर)

अभंग पाथ हातां जसा खली लू आंगमण।
कहहर नर का जलै भड़ै कामू॥
आठ ही नगारा ांध हेकण उरड़।
हीक घर ले गयो बिया हामू॥ १॥

सालिया घणा छाती वचन साल रा।
वेतरफ कालरा नाद वागा॥
हटाला सांदवत मोहर भड़ हाल रा।
भीम जैं माल रा बिने भागा॥ २॥

खगाटां भाट वैंडाक तीखा खड़े।
मगज करता जिके गणू मन में॥
जसा धजरेल हूंतां समर जेटियाँ।
दोय तड़ हेटिया हेक दन में॥ ३॥

वखेड़ा सहत कीध समर जूझ वट।
कूंडला झोक नग जड़त कूण्डा ॥
अभंग कमंघ तणौ गुमर उतारियौ।
चमर बँध धारियौ गुमर चूण्डा ॥ ४ ॥

(रचयिता:-अज्ञात)

भावार्थ:- द्वितीय हम्मीर सिंह के समान हे योद्धा ! तूं वीर अर्जुन के समान बलशाली हाथों वाला है और किसी से भी परास्त नहीं होने वाला-अजेय है। तू ने शत्रुओं का सामना करते हुए कितने ही योद्धाओं को नष्ट कर दिया है।

शत्रुओं के कटु वचन तेरे हृदय में खटकने लगे और तूने नगारे बजवा कर शत्रुओं से सामना किया उस समय दोनों पक्षों के नगारे बज रहे थे। हे सांगा के वंशज ! प्रण पालन करने वाले ! तूं सेना के अग्रभाग में स्थित होकर युद्ध करने लगा। उस समय तेरे सामने से भीम सिंह बनेड़ा वाले ने तथा जयमल के वंशज बदनौर वाले दोनों योद्धाओं ने रण भूमि छोड़ दी।

तेरे विपक्षी-अश्वारोहण और तलवार चलाने की कला में अपने आपको निपुण समझते थे। उनको तूने ही अपने रण-कौशल से युद्ध भूमि से भगा दिया।

हे चूण्डा ! बनेड़ा के राजा शत्रुओं के घाव लगाने में निपुण कहे जाते थे तथा युद्ध भूमि में शत्रुओं के सन्मुख अडिग रहने वाले योद्धा

टिप्पणी:-१-यह रावत संग्राम सिंह का पुत्र था और अट्ठारहवीं शताब्दी के अंत में होने वाले मेवाड़ के सरदारों में विद्रोही दल का प्रमुख व्यक्ति था। महाराणा प्रताप सिंह (द्वितीय) से लगा कर अरिसिंह तक प्रायः उसके बीच विरोध ही रहा। जिसका इस गीत में वर्णन है।

समझे जाते थे। इसी प्रकार बदनौर के राठौड़ भी अजेय योद्धा समझे जाते थे। उनका सारा अभिमान उन्हें परास्त कर तूने नष्ट कर दिया। तत्पश्चात् तू चँवर ढुलाता हुआ युद्ध भूमि से विजय प्राप्त कर घर पर आया।

६२. रावत वुद्धसिंह चौहान, कोठारिया [१]

गीत (छोटा साणौर)

सलहां समझड़ां पाखरां साकुर।
धड़ चण खलां वीजलां धींग ॥
ऊदा हरौ अंद्र छजे अत।
साजे दन राजे व्रुध सींग ॥ १ ॥

कंगल भड़ां घड़े केकांण।
धाय भाजण किलमां घमसाण ॥
सुजस रखण दईवाण भाणव सुत।
चक्रवत एम वोजे चहुवाण ॥ २ ॥

सुजल वरद चाढण धर सैंभर।
अण भंग आप वंस अजुआल ॥
रूकां जीत अखाड़ै रावत।
रांणा तणां घरां रखवाल ॥ ३ ॥

(रचयिताः—अज्ञात)

टिप्पणः—१—यह रावतदेवमाण का पुत्र था और महाराणा अरिसिंह के समय में टोपल मगरी के पास होने वाले युद्ध में विद्रोहियों को दबाने में महाराणा के साथ रहा। जिसका गीत में वर्णन है।

भावार्थः– हे उदय भाण के पौत्र वुद्धसिंह ! तूं शूर वीर के समान वीर वेष धारण कर घोड़ों पर पाखर डाल कर युद्ध में गया। इन्द्र के समान तेरा जीवन यशस्वी है. मानो तूं ने अच्छे नक्षत्रों में जन्म प्राप्त किया है।

हे भाण के पुत्र ! कवच धारी योद्धा ! तूं मुगल सेना को शस्त्राघात द्वारा नष्ट करने हेतु घोड़ों पर पाखर डाल कर युद्ध भूमि में प्रवेश करता है। हे चाहुआन ! तूं चक्रवर्ती के समान महाराणा के यश को चिरायु करने वाला है।

हे रावत ! (चाहुआनों की राजधानी के यश को) तूं अजेय रह कर सांभर के यश को वढ़ाने वाला हैं। अपने वंश को उज्ज्वल, महाराणा की पृथ्वी की रक्षा करने के लिये युद्ध भूमि में तलवारों की शक्ति से विजय प्राप्त करता है।

६३. महाराज कुशालसिंह शक्तावत, भीण्डर [१]

गीत [सु पङ्क]

मिले गनीमां अकारी फौज भयंकारी हींता माथै।
ढल्लकै सवारी भारी सूंडां डंड ढाल़॥
धीवतौ दुधारी खल़ां अहंकारी दीह धोलै।
खारी वार रासा वेल आवियो कुसाल॥ १॥

वाजतां त्रंवाल़ौ भ्रीह नरातालो खड़े वाज।
तोलियां छडाल़ौ पाण पंखालै सुताण॥
वा कारियौ पाट री हटाल़ौ खल़ां भूरो वाघ।
आवियौ उमेद वाल़ौ सींघाल़ो आराण॥ २॥

धीवतौ अठेल सेल गजां वेल फूल धारां।
झेलतो पेलतो साथां सामंतां उमेल॥

रूक झाटां वेल थियौ गनीमां अठेल राजा।
बिरदां अघायौ आयौ महाराज वेल ॥ ३ ॥

खेड़िया न त्रीठ बाज पीठ कीना भड़ां सूर।
दहूँ दिल्ली दीठ धीठ मांटी पणौ दाव ॥
जाणता भरोसौ थारौ गरीठ दूसरा जैता।
रीठ बाग् वला माथै दीनो गाढ़े राव ॥ ४ ॥

कीरती जहाज गढ़ां–कोटां कविराज करे।
तयौ सगतेस दूजौ सूरेस दराज ॥
आगै कर राजनेस काज महाराव आयौ।
लोहां पाज बांध पाड़ै सतारा री लाज ॥ ५ ॥

(रचयिताः–पहाड़ खान आढा)

भावार्थः– शत्रुओं ने तीव्रगति से विशाल सेना का संगठन कर हींता ग्राम पर आक्रमण किया। उस समय गजारोही शत्रु सैनिक एवं विशाल काय हाथी धराशाई होने लगे। हे क्रुद्ध कुशाल-सिंह ! उस समय दुधारी तलवार चलाकर केवल तूं ही रण-भूमि में उद्यत रहा।

हे उम्मेदसिंह के पुत्र ! जिस सगय युद्ध वाद्य व नगारे वजने लगे उस समय वायु के समान वेग वाले घोड़ों को युद्ध स्थल में उपस्थित किया। तब पक्षी के समान द्रूत गति से शत्रु सेना पर भाले से प्रहार किया और भूरेसिंह की भाँति शत्रुओं को ललकारता हुआ तूं युद्ध भूमि में उपस्थित हुआ।

टिप्पणीः–१–यह महाराज उम्मेदसिंह शक्तावत का पुत्र था और महाराणा राजसिंह (द्वितीय) के समय मरहठों के युद्ध में इसने अपना शौर्य बताया था। जिसका इस गीत में वर्णन है।

हाथियों के समूह की पंक्ति पर तीक्ष्ण भालों से प्रहार करते हुए तथा साथियों सहित स्वयं शत्रुओं के वार को सहन करते हुए तूने अपने कुल गौरव को अधिक बढ़ा दिया। तलवारों के वार से शत्रुओं को धकेलता हुआ, गौरवान्वित हो तूने महाराजा की सहायता की।

द्रुतगामी घोड़ों से शत्रुओं का पीछा कर तूने दिल्ली पति को अपने शौर्य और साहस का परिचय दिया। हे जैत्रसिंह के समान योद्धा ! जिस तरह का लोगों का तेरे पर विश्वास था ठीक उसी के अनुसार तूने कर दिखाया ।

हे शक्तावत ! समुद्र के उस पार कवियों ने तेरे यश को व्याप्त कर दिया है। दूसरे शक्तिसिंह के समान हे वीर ! तू इन्द्र के समान, शस्त्रों की बौछार करता हुआ, महाराणा राजसिंह का कार्य करने में अग्रगण्य हुआ है। हे महाराजा ! तेरे शस्त्रों की भीषण वर्षा से शत्रुओं के शस्त्रों द्वारा बनाई हुई पाल को तूने तोड़ डाला और उनके गौरव रूपी जलाशय को नष्ट कर डाला।

६४. शक्तावत कुशलसिंह, विजयपुर [१]

गीत (छोटा साणोर)

नारियण जोय पछे दूसरै नर हर।
देखो सगता भाल़ हुआ॥
भारत कुसलै बलां भराड़िया।
खल़ दांतां खोखल़ा हुआ॥१॥

टिप्पणी:—१—यह महाराणा प्रताप के भाई शक्तिसिंह के बेटे अचलदास का पौत्र और विजयसिंह का पुत्र था। विजयपुर वाले इसी के वंशज हैं। मरहटों के आक्रमण होने पर युद्धादि में इस ने बड़ी वीरता दिखाई थी और सतारा के बादशाह के पास महाराणा ने इसे अपने प्रतिनिधि (वकील) के रूप में भेजा था।

माहेचा अकेला जुध मारे।
रूक वजाड़ वदीतो राण॥
केवी तणा गलिया कैल पुरा।
डाठां डगमगती दहवाण॥२॥

रूक दुवाह विजावत रावत।
वीस हती जोय दियो वर॥
जूनी डाढ़ां कमंध जारिया।
नवल बतीसी तणा नर॥३॥

(रचयिताः—मोतीसर पूर जी)

भावार्थः— हे कुशल सिंह शक्तावत ! तेरे पूर्वज नारायण दास और नर हर दास के बाद उन जैसा योद्धा तू ही दृष्टि गोचर हुआ है। तू ने युद्ध में प्रति पक्षियों को चूर-चूर कर दिया, और उनके दांत ढीले कर दिये हैं।

माहेचा गोत्र के अकेले वीर ने युद्ध भूमि में तलवार चलाकर शत्रुओं को नष्ट कर महाराणा को विजयी किया, जिससे उस (महाराणा) ने उसे (वीर को) धन्यवाद दिया। सिशोदिया दंत-रूपी तलवार से शत्रुओं को उसने विनष्ट कर दिया, जिससे उस वृद्ध वीर की डाढ़ें हिलने लगीं।

हे विजयसिंह के पुत्र ! तलवार चलाने का तेरा साहस देख कर युद्ध-चंडी ने तुझे वरदान दिया, जिस से बूढ़ी दंत रूपी तलवार से नये दांतों वाले राठौड़ों व उनकी सेना को विनष्ट कर दिया।

६५. आशिया चारण दयाराम १

गीत (छोटा साणौर)

हुए उदेपुर राड़ नर असत चल चल हुए,
गहर वल वल हुए जांगियां घाव।-

ईस ऊभो कहे सीस दे आशिया,
अछर कहि आसिया विवाणां आव ॥१॥

राण दल कमंध खागां खहे रूसिया,
ढ़हे धरां धकै मैंगलां ढाल।
कमल दे आस नत चवै यूं कमालो,
चवे रंभ आस उत रथां चढ़ चाल ॥२॥

वाहता खग जुध दिवस दोय वदीता,
गढ़ां कोटां सुणी वात वड़ गात।
पुणे सिवनाथ धारांम माथो समप,
पुणे रंभ नाथ तू रथां चढ़ पात ॥३॥

सत्रहरां रहे रण महे पदमेस संग,
समपियो ईसनूं सीस साहे।
चढे रथ पात अछरां वरे चालियो,
मालियो इंद्रा पुरा मांहे ॥४॥

(रचयिताः–अज्ञात)

भावार्थः- उदयपुर में युद्ध–आरंभ होते समय वार वार नगारों की भयंकर ध्वनि होने लगी और नगर–निवासी भयभीत होकर इधर

टिप्पणीः–१–वि० सं० १८०२ ई० सन् १७४५ में घाणेराव के ठाकुर राठौड़ पद्मसिंह पर उदयपुर के महाराणा जगतसिंह (द्वितीय) ने सेना भेजी और उदयपुर स्थित उनके निवास-स्थान को घेर लिया तब, ठाकुर पद्मसिंह राठौड़ अपने साथियों सहित युद्ध करता हुआ मारा गया। राठौड़ ठाकुर के पास रहने वाला चारण कवि आशिया दयाराम अपने स्वामी के साथ युद्ध करता हुआ रण खेत रहा। उसी दयाराम की स्वामीभक्ति का वर्णन इस गीत में किया गया है।

उधर भागने लगे। उस समय संग्राम के मध्य शंकर स्वयं खड़े होकर पुकारने लगे, " हे आशिया, मेरे कण्ठ में धारण करने के लिये तेरा मस्तक मुझे समर्पित कर–अप्सराएं कहने लगी "हे आशिया तूं हमारे विमान में आकर बैठ जा" ॥ १ ॥

महाराणा की सेना राठौड़ों पर क्रुद्ध होकर तलवारें चलाने लगीं और तलवारों के वार से गजारूढ़ योद्धाओं को ढालों सहित धराशायी करने लगी। उस समय शंकर पुकार–पुकार कर कहने लगे, "हे वीर! तेरे शीश के लिये सदैव मैं इच्छुक रहता था, इसलिये आज तूँ मेरी मनोकामना पूर्ण कर। इसी भांति अप्साराऐं भी पुकार कर कहती हैं–कि–हे आशा के पुत्र, तूं विमान में बैठ कर हमारे साथ प्रयाण कर। ॥ २ ॥

युद्ध होते–होते दो दिवस व्यतीत हो गये। चारों दिशाओं के दुर्ग–स्वामियों तक इस का खबर (समाचार) पहुँच गया। पार्वती नाथ कहते हैं, कि हे दयाराम, तेरा मस्तक मुझे अर्पित कर और मेरे कण्ठ को उससे सुशोभित कर। अप्सराएं तुझे 'स्वामी के नाम से संबोधित कर कहने लगी हे चारण कवि, हमारे रथ (विमान) में चल कर हमारे साथ स्वर्ग के लिये प्रस्थान कर ॥ ३ ॥

वीर दयाराम शत्रुओं का विनाश करता हुआ अपने स्वामी राठौड़ पद्मसिंह के साथ युद्ध–स्थल में धराशायी हुआ और अपने हाथ से शंकर को मस्तक समर्पित कर, अप्सराओं को वरण कर इन्द्रपुरी में निवास करने लगा ॥ ४ ॥

६६. आशिया चारण दयाराम

गीत (छोटा साणौर)

नाळा पड़ धमक अंवलां नीद्रस।
राण जगो कम धज सिर रूठ ॥

भार पड़ंत पदम नहँ भागौ।
दया राम खग वागौ दूठ॥ १॥

ऊडै धोम आरवां आतस।
खल दल सबल लूंविया खूर॥
पातल तणा मोहर उदया पुर।
सुत आसा टलियो नहँ सूर॥ २॥

तोपां धड़क जाग जल तोड़ां।
रीठ पड़ै गोलां धुज रैण॥
वीरम देव हरौ रिण विढतां–
भिलियौ लोह हरो भीमेण॥ ३॥

आसल कमंध लूंण उजवाले।
खिसियौ नहीं वंदे चहुँ खूंट॥
राजां पदम पातरण रसिया।
वर अपछर वसिया वैकूंट॥ ४॥

(रचयिताः– अज्ञात)

भावार्थः–हे दया राम, जिस समय महाराणा जगतसिंह ने क्रुद्ध होकर राठौड़ पद्मसिंह पर आक्रमण किया तब वीरता से सामना करता हुआ राठौड़ रणभूमि में अडिग वना रहा उस समय तूंने भी बड़ी वहादुरी से तलवार चलाई।

हे वीर! आतिशवाजी के समान आकाश में असंख्य तोप के गोले छागये, चारों ओर धुँआ छा गया और शत्रु सेना झूमने लगी, उसमें प्रतापसिंह का पुत्र पद्मसिंह वरावर युद्ध कर रहा था तूंने भी उसका साथ दिया और बड़ी वीरता से युद्ध करता रहा।

जलने हुए तोड़ों से चलने वाली तोपों की गर्जना से उनके गोलों की सनसनाहट से पृथ्वी कंपित होने लगी। वीरम देव के पोत्र पद्मसिंह घावों से आहत होकर वीर गति को प्राप्त हुए और साथ ही भीमराज का पौत्र दयाराम आशिया भी उसी के साथ शत्रुओं को नष्ट करता हुआ धराशाई हुआ।

हे आशिया! तूंने अपने स्वामी राठौड़ का नमक सच्चा करने हेतु, युद्ध भूमि को नहीं त्यागा, जिससे चारों ओर तेरी प्रशंसा हुई। राजा पद्मसिंह और उसका कवि दयाराम ने युद्ध-रस के उपभोग करते हुए तथा अप्सराओं का वरण कर वैकुण्ठ निवास किया।

६७. चहुआन उदयसिंह, गढी-बांसवाड़ा

गीत (सुपंखरो)

चंडी छाक ले आमखां गूद कोण चीलां रंजां चले।
धू काज दाकले गणां भूत राट धींग॥
पैराक चमूरां केक ऐराक छाक ले पूरी।
साकुरां हाकले उसी वेलां उदै सींग॥१॥

सनाहां खणंके कड़ी दड़ी वड़ी नचे सूरां।
हूरां रंभ खड़ी खड़ी रचे सुभ्र हार हीर॥
महा घोर घड़ी वागां लागां जोर अड़ी मेले।
वाजंदां ऊपड़ी वागां चाहुआण वीर॥२॥

कोम पीठ भोम भार घूमै घड़ा नाग कालां।
वरं माला लूंबै रथां रंभ चाला वेस॥
वाजतां त्रंबाला के कर माला झालां बीच।
नेज बाजां नरा तालां संभरी नरेस॥३॥

धू तोम मंडी रे वीरां लाग हाक लोह धोम।
बोम वड़ा वड़ी रे उम्मरू डाक्र वाग ॥

रोस आग जाग प्रलै रूद्र से अड़ी रै रूप।
विड़गां गडी रै दूजो केहरी ग्रजाग ॥४॥

वज्र खूटो इन्द्र के, विछूटो रामचंद्र–बाण।
कूदत्रा सामंद्र वाण टूटो हणू क्रोध ॥

कालीनाग घड़ा हूँ विहँग नाथ जूटो कना–
जटी की जटा सूं छूटो भद्र जोध ॥५॥

वाजै बंकी रोड़ के अखाड़ौ रूधौ खास त्राड़।
जंगी होदां सूधा के पनागां पाड़ै जूथ ॥

जोम आड़ै लागो चौड़े धाड़ै झाड़े विजू जलां।
विधू से विभाड़े ताड़े गनीमां विरूध ॥६॥

तेग झालां छोड़े केक विछोड़े वैकूंट ताला।
गोड़े गणा धीस माला जोड़े धार गंग ॥

तेगां पाण अग्रनंद सतारा नाथ सूं तोड़े।
मोड़े मारहट्टां घड़ा मरोड़े मतंग ॥७॥

टिप्पणी:–१–यह उदयसिंह अमरसिंह, चहुआण का पुत्र, और अच्छा वीर था। यह वागड़ इलाके का रहने वाला था। उक्त गीत में उसके वीरत्व और युद्ध कौशल का वर्णन है। अपनी वीरता से इसने सूंथ के कुछ इलाके पर अधिकार कर गद्दी का ठिकाना बना लिया।

तोर जंगां तुरंगां जसूंत जोम काढै तूं ही।
घावां क्रोध गाढे तूं ही रचे रुद्र घाण॥
तपो वली ऊदा ए जाजुली फौजां थाढ़ै तूं ही।
चांढ़ै तूं ही कली दली विरदां चूहाण॥८॥

(रचयिताः—हुक्मीचंदजी, खिड़िया)

भावार्थः— हे उदयसिंह ! जिस समय रक्त पान करने—चंडी अपनी प्यास तृप्त करने के लिये आई और चील पक्षी मांस भक्षण करने के लिये आकाश से धरती पर आ रहे थे तथा मस्तक के लिये शंकर अपने गण सहित रण भूमि में आये और वीरों को मस्तक देने के लिये उत्तेजित करने लगे। सेना में कई वीर सुरापान किये हुए के समान युद्ध में उन्मत्त होकर युद्ध कर रहे थे। उस समय तूने अश्वारोही होकर रण भूमि में प्रवेश किया।

बख्तरों और लोह शृंखलाओं की ध्वनि में वीरों का अंग अंग नाच उठा। अप्सराएँ हीरों के हार से शृंगार करने लगीं। ऐसे समय में तूने अपने प्रण पर अटल रहते हुए अश्वारोही होकर, बड़े साहस से युद्ध भूमि में प्रवेश किया।

हे चौहान, सेना के भार से, पृथ्वी का भार वहन करने वाले शेष नाग और कछुए डोलने लगे। वीरों का भयंकर युद्ध देख कर अप्सराएँ आकाश मार्ग से विमान में बैठ कर अपने हाथों में वर माला झुलाती हुईं युद्ध भूमि में उपस्थित हुईं। रण भूमि में नगारों का भीषण घोष होने लगा। चारों और शत्रुओं के क्रोध की ज्वाला फैल रही थी। ऐसे समय में हे वीर ! तू तलवार व भाले से वार करता हुआ रण भूमि में आगे बढ़ा।

हे वीर चौहान ! युद्ध में तेरे पक्ष के योद्धाओं के मस्तक में क्रोध की ज्वाला धधकने के कारण घमासान युद्ध होने लगा। जिसमें वीरों

की हुंकार से तथा डमरू और डाक की ध्वनि से आकाश गूंज उठा। उस समय वीरों के नेत्रों से शिव के तृतीय नेत्र के समान क्रोध की ज्वाला उत्पन्न होने लगी। हे योद्धा तू उस समय सिंह और यमराज के समान होकर 'गढ़ी' स्थान के दुर्ग पर शत्रुओं से अश्वारोही हो युद्ध करने लगा।

हे चाहुआन! तू इन्द्र के वज्र के समान कठोर और राम के बाण के समान तीक्ष्ण शस्त्रों द्वारा, हनुमान के सिंधु पार जाने के साहस के समान साहस करके शत्रुओं पर वार करने लगा। तू काले नाग से गरुड़ के समान रुष्ट हो तथा शंकर की जटा में से उत्पन्न वीर भद्र के समान क्रोध भर कर, शत्रुओं को तलवार से प्रलय के समान नष्ट करने लगा।

हे रावत! विलक्षण रूप से नगारों की ध्वनि कराते हुए अखाड़े रूपी युद्ध भूमि को अपनी सेना द्वारा कुचल दिया। हाथियों को होदे सहित भूमि पर गिराने लगा। हे वीर। तूने आवेश में आकर शत्रु-सेना का पीछा कर अनेकों वीरों को तलवार चलाकर धराशायी किया तथा अनेकों को रणभूमि से भगा दिया॥

अग्नि की ज्वाला के समानचम चमाती हुई तलवारों से योद्धागण वैकुण्ठ के ताले तोड़ने लगे। शंकर अपने साथ अपने पुत्र गणपति को लिये, मुण्डमाला पिरोने लगे। हे अमरसिंह के पुत्र तूने अपनी तलवारों के बल से सतारा के स्वामी मरहठों को उनके हाथियों सहित नष्ट कर डाला।

हे साहसी उदयसिंह! तूने युद्ध भूमि में अश्वारोही होकर मरहठों के साथ बड़े क्रोध से युद्ध में अनेक शत्रु सैनिकों के शरीर में शस्त्रों के घाव किये! रण-भूमि में मरहठों के रक्त को बहा कर जसवंत राव होल्कर के अभिमान को नष्ट किया। हे योद्धा! ऐसी विशाल सेना को नष्ट कर तूने पृथ्वीराज के वंश का तथा अपना गौरव अमर कर लिया॥

//

६८ रांज राघवदेव सिंह झाला, देलवाड़ा १

गीत (वड़ा साणौर)

अलग हूँत आया भला राणरा ऊमरा,
नगारां बाजतां प्रशण नमिया ।
रुधे कुरम कटक डगंतो राखियो,
डीगरां धणीरा कटक डगिया ॥१॥

मानसुत धनो फौजां तणो मोड़वी,
वाग ऊपाड़तां खाग वागो ।
पाटरा धणीरा थाट रहिया पगां,
झाटरा कटक सिर आग जागी ॥२॥

वहोत अरियांण तु हीज समंद विरोल्ले,
तूं ही दल डूवता थका तारे ।
राण रा भीच ढुढ़ाड ओले रहे,
धणी चीत्तौड़ रो अंजस धारे ॥३॥

आदरे नहीं भारत सजा अभ नमा,
छंडालां खवंता वात छोटी ।

टिप्पणी:—१ जब जयपुर के महाराजा माधोसिंह और भरतपुर नरेश जवाहिरमल जाट के बीच वि० सं० १८२४ ई० सन् १७६७ में युद्ध हुआ। तब जयपुर के राजा माधोसिंह ने उदयपुर के महाराणा अरिसिंह के साथ सैनिक समझौता किया। इस समझौते के अनुसार महाराणा की सेना जयपुर की सहायतार्थ भेजी गई जिसमें देलवाड़ा का सामन्त राघवदेव भी था। इस युद्ध में झाला राघवदेव ने जिस वीरता का परिचय दिया; उसी का इस गीत में उल्लेख किया गया है।

समर री जाण वाजी भली सुधारी,
महीपत व धारी बात मोटी ॥४॥

कुल़ ऊजल़ो करे घरे आया कुशल़,
भड़ां सह कसूम्बल कीध भाला ।
हीये अवर प्रसण घणो हालियो,
झालियो उगंतो आभ झाला ॥५॥

भलो जल़ चाडियो चित्तौड़ रा भाखरां,
लाखरा दल़ां विच उरस लागो ।
तेंही जीताड़ियो धणी जैपुर तणौ,
भरतपुर तणो सिरदार भागो ॥६॥

पाटड़ी छात रजवाट धर्म राखतां,
करतां उवेलण घणी कीधी ।
हेक राजा तणी पीठ सबल़ी हुई,
दूठ राजा बीयां पीठ दीधी ॥७॥

(रचयिताः—अज्ञात)

भावार्थः— हे राघव देव ! जयपुर के कछवाह नरेश की सेना के चरण, शत्रुओं के सामने युद्ध-भूमि से डिगने लगे । उस समय हे राणा के उमराव, इतनी दूर से अपनी सेना लेकर ओज पूर्ण नगारे बजाता हुआ तू जयपुर के युद्ध में जा पहुँचा, तेरे प्रेरणादायक नगारों के स्वर सुनकर प्रति पक्षियों ने शीश झुका दिये और जयपुर की सेना का पक्ष प्रबल कर तूंने डींगर के स्वामी की सेना के पग डिगा कर उन्हें भगा दिया ॥१॥

शत्रु सेना को भगा देने वाले हे मानसिंह के पुत्र ! तूं धन्य है। तूंने अश्वारोही होकर घोड़ों की रासे तानते हुए शत्रुओं पर तलवारों की वर्षा करदी। जिससे जयपुर नरेश की सेना के चरण दृढ़ होने लगे, और जाट सैनिकों (वीरों) में क्रोधाग्नि भड़क उठी ।।२।।

हे महाराणा के योद्धा ! समुद्र के समान अपार सेना को विचलित करने वाला और जयपुर नरेश की रक्षा करने वाला-तू ही था। तेरी वीरता के कारण ही ढूंढाड़ प्रदेश की रक्षा संभव हुई और इससे चित्तौड़ के नरेश भी गौरवान्वित हुए ।।३।।

श्री सजा ! (राघवदेव के प्रपितामह) के समान ही हे वीर राघव-देव, तू कभी साधारण युद्धों में भालो का प्रहार नहीं करता है। तूने इस भयंकर युद्ध को असाधारण जान कर जयपुर नरेश के सम्मान को रख लिया ।।४।।

हे झाला ! गिरते हुए आकाश के समान तूने इस युद्ध का भार अपनी प्रबल भुजाओं पर उठा लिया। जिससे प्रति पक्षियों के हृदय में तेरा साहस खटकने लगा । तू सभी वीरों सहित भालों को रक्त रंजित कर अपने कुल को उज्जवल कर पुनः आ गया ।।५।।

हे वीर ! तूने असंख्य सैना में आकाश की ओर अपना शीश ऊपर उठा कर युद्ध किया। जिस का गौरव चित्तौड़ की शैल मालाओं तक छा गया। तूने ही भरतपुर नरेश को पराजित कर जयपुर नरेश की विजय-ध्वजा फहराई ।।६।।

हे पाटड़ी-स्वामी के वंशज ! तूने जयपुर नरेश की सहायता कर क्षत्रिय-कुल-गौरव एवं धर्म की रक्षा करली। हे नरेश ! इस युद्ध में अन्य नरेश पीठ दिखाकर विमुख हो गये केवल तेरी सहायता ही सफल हुई ।।७।।

६६. राजा उम्मेदसिंह सिशोदिया, शाहपुरा १

गीत- (सु पंख)

वग आवरत पवन महाराज वखते विढण,
सरोतर तोलतां पाण अवसाण ।
नगां पत कूरमां नाथ चलतां नगां,
खगां पत हुऔ अवछाड़ खूमाण ॥ १ ॥

वायधिक अधिक दूजो गजण वाजतां,
हूंता दहुवै तरफ पाण हमराह ।
मेर गिर चल-विचल थयौ जैसींध महि,
गुरड़ भारथ रै ढके गज गाह ॥ २ ॥

अनिल बल चहूँ वहतां प्रबल अजावत,
सिखर नूं ऊपड़ै गज धजा सामेत ।
गिरन्द कछवाह होतां कदम चलत गत,
खगिन्द्र दूजे दले ढाँकिया खेत ॥ ३ ॥

समर महि धाड़ अवनाड़ ऊमेदसी,
इतो जग तीख जोतां सबल आज ।

टिप्पणी:—१—वि० सं० १७६७ ई० सन् १७४० में अजमेर के पास गंगवाणे में जयपुर के महाराजा सवाई जयसिंह और जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के बीच युद्ध हुआ, उसमें नागोर का स्वामी राजा बख्तसिंह भी शामिल था। इस युद्ध में जयपुर की ओर से शाहपुरा के राजाधिराज उम्मीदसिंह ने भी भाग लिया और अपने प्रचण्ड पराक्रम से नागोर के स्वामी बख्तसिंह को परास्त कर उसकी सामग्री छीनली। इस गीत में उपर्युक्त युद्ध का उल्लेख है !

आठमो भाग गिर-राज रो गयो उड,

राखियो अडिग अणियाँ सहित राज ॥ ४ ॥

(रचयिताः-कविया अनूपराम)

भावार्थः- हे सिशोदिया उम्मेदसिंह, जिस समय जोधपुर नरेश-बख्तसिंह ने तुलारूपी भुजाओं पर अपना साहस तोलते हुए, पवन के के समान प्रचण्ड वेग से जयपुर की ओर युद्ध करने हेतु प्रस्थान किया, उस समय पर्वत के समान अटल जयपुर के स्वामी के चरण भी डग मगाने लगे। तब तूँ ने गरूड़ के समान द्रुत-गति से जाकर युद्ध-भूमि में जयसिंह की रक्षा की ॥ १ ॥

हे भारतसिंह के पुत्र। जिस समय गजसिंह का वंशज प्रचण्ड पवन के समान जयपुर नरेश-रूपी पर्वत को विचलित करने लगा था। उस समय तूने भी, जिस प्रकार गरूड़ पर्वत की अपने पंखों से रक्षा करता है, उसी प्रकार पर-रूपी अपनी भुजाओं से जयपुर नरेश की रक्षा कर उसके गौरव को बचाया ॥ २ ॥

द्वितीय दलेलसिंह के समान हे वीर उम्मेदसिंह, जिस समय अजीत-सिंह का पुत्र प्रचण्ड पवन के समान युद्ध भूमि में पर्वत के समान अटल जयपुर-नरेश के ध्वज को उखाड़ने लगा और जयसिंह के पैर डग मंगाने लगे, उस समय तूने गरूड़ के समान द्रुतगति से आकर जयपुर नरेश की रक्षा की ॥ ३ ॥

हे उम्मेदसिंह, जिस समय युद्ध मि में मेरु के समान जयसिंह की सेना का आठवां भाग नष्ट हो गया और सेना सहित कछवाहा युद्ध-भूमि से पराजित हो भागने लगा, उस समय रणागंण में जयपुर नरेश की भीरुता को तूने छिपा लिया। राज्य की भूमि रक्षा हेतु इस प्रकार वीरता और शौर्य द्वारा जो तू ने किया, उसकी सब प्राणी प्रशंसा करते हैं ॥ ४

७० राजा उम्मेदसिंह सिशोदिया, शाहपुरा

गीत [सु पङ्ख]

झंडौ ऊघड़ै बयंडां घाट तंडां सूरवीरां झुरण्डै,
भासै मार तंडां पूर पतंगां सुमेद।
जाडा थंडां क्रोध चाढ मिलाया वखते जोध,
आडा खंडां मारू थंडां जिलाया उमेद ॥१॥

आतसां जागियां झाला झंवां चाढ़ कूलां ऊंडै,
दंडांला कराला दान रूड़ै धोलै दीह।
नीमजे वाणासां आयो अजारो विहूतो नाग,
सार वोहरतो खेत भारथ रौ सीह ॥२॥

चोल में वणावं सूरां कायरां अकूटा चाला,
एकठा वारंगां झुण्डां होवंतां उछाह।
छूटां धोम आत सां दुरद्दां तूटां कंध छकै,
बूठा लोहा अणी धारां रूठा महा वाह ॥३॥

हाको हाका ऊपडै वैंडाकां साम्हा खेत हक्कै,
छाकां सूर लोहां वोहां दुरद्दां विछोड़।
डाकां वागां ईजालै जोधाण जोध धौले दीह,
चाका वंध भल्ला भलो दिखाड़े चितौड़ ॥४॥

जमा डाढां साचवै हकालै वलां महा जोध,
नीहसै वाणां सां वाढ़ गाजियो निहाव।

अथायो उमेद रोलै गाढ़ थंभ रहे ऊभौ,
रोलै धाप हालियौ गाढे मारू राव ॥५॥
(रचयिता:-भादा हरदान)

भावार्थ:- शंकर के ताण्डव नृत्य के समान युद्ध क्रीड़ा करने के लिये शत्रुओं का समूह घोड़ों पर अपनी ध्वजा लहराता हुआ एकत्रित हुआ और इस कुतूहल प्रद युद्ध को देखने के लिये सूर्य भी स्थिर हो गया। तब अपने बलवान वीर-समूह के साथ क्रोध में आकर बख्तसिंह भी युद्ध-भूमि में आ शामिल हुआ और उम्मेदसिंह शत्रु-वीर-समूह के तिरछे घाव लगाकर उसे युद्ध-भूमि में घुमाने लगा ॥ १ ॥

आतिश बाजी की तरह तोपें और बन्दूकें चलने लगीं। उनके बारुद से प्रकाश होने लगा। वीर अपने कुल-गौरव को ऊँचा उठाने के लिये मध्यान्ह में भयंकर नगारे बजाने लगे। उस समय ऐसे भयंकर सैन्य-समूह से भिड़ने के लिये खिजाये हुए सर्प की तरह अजीतसिंह का पुत्र बख्तसिंह हाथ में तलवार उठा कर आया और इधर से भारतसिंह के पुत्र उम्मेद सिंह ने तलवार से रणक्षेत्र भाड़ते हुए सामना किया ॥ २ ॥

लाल वस्त्र धारण किये हुए कायरों के साथ वीर-गण बेहद छेड़छाड़ करने लगे। उस समय अप्सराओं का समूह एकत्रित हो गया और प्रचण्ड वीरों द्वारा शस्त्रों की चोटों से, तोपों और बन्दूकों के प्रबल प्रहार से-मदोन्मत्त हाथियों के कंधे टूटने लगे ॥ ३ ॥

अश्वारोही योद्धा वीर हुंकार करते हुए युद्ध-क्षेत्र में प्रविष्ट हुए और घावों से छके हुए वीरों ने हाथियों को धड़ों से अलग कर दिया मध्यान्ह में नगारे बजाकर जोधपुर-नरेश के सैनिक वीर जोधपुर को उज्जवल करने लगे और उधर चित्तौड़-पति के वीर भी उन्हें चारों ओर से घेर कर विशेष बहादुरी दिखाने लगे ॥ ४ ॥

युद्ध में बड़े-बड़े योद्धा, सैनिक वीरों को ललकारते हुए कटारियों के वार करने लगे और शत्रुओं के घाव करती हुई तलवारों की झंकार

से आकाश गूंज उठा। ऐसे समय में उम्मेदसिंह युद्ध-कौतूहल के बीच स्तंभ की तरह अड़िग पैर जमा कर खड़ा रहा और युद्ध से तृप्त होकर अडिग रहने वाला राठौड़ रणांगण से वापस लौट गया ॥ ५ ॥

७१. राजा उम्मेदसिंह सिशोदिया, शाहपुरा

गीत

पंथिया वातड़ी न जिण तणी पढ़, जिण दिन भारथ जागा।
दिखण दलां राण छल दारण, विजड़ां कुण कुण वागा ॥ १ ॥
लाखां तणा पटायत लड़िया, चूण्डा झाला चंगा।
एकण भूप उमेद ऊपरा, असमर वगा अढंगा ॥ २ ॥
माधोराव तणा भड़ माझी, ग्रल सवलां विप वूठा।
भारथ तणा तणौ सिर भारा, त्रिजड़ां अगणित तूठा ॥ ३ ॥
सूज्यां जहीं असनमो सूजो, कलहण गजां कलेगो।
धड़ धजवड़ां मिलेगो धारां, मनसा जौत्र मिलेगो ॥ ४ ॥ ४ ॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:- कवि पूछता है कि "हे पथिकों, अन्य वातों को छोड़कर, महाराणा और दक्षिणियों के मध्य भयंकर युद्ध हुआ, उस में किन किन वीरों ने तलवार चलाई, उसका वृत्तान्त मेरे सम्मुख करो ॥ १ ॥

उज्जैन से आने वाले पथिकों ने कहा "शिरोमणि चुण्डावत एवं झाला जो कि लाखों रुपये की सम्पत्ति के जागीरदार है" उन्होंने तलवार चलाई। किन्तु केवल मात्र उम्मेदसिंह के ऊपर ही शत्रुगण भयंकर तलवार चलाते थे ॥ २ ॥

माधवराव की सेना के मुख्य-मुख्य साहसी योद्धाओं ने शस्त्रों की बोछार कर दी और भारतसिंह के पुत्र उम्मेदसिंह पर असंख्य तलवारों को प्रहार करते करते तोड़ डाली ॥ ३ ॥

सुजानसिंह और सूर्यमल के समान वीर उम्मेदसिंह, तूं शत्रुओं के हाथियों को धराशायी करता हुआ, अन्त में वीर गति को प्राप्त हुआ। उम्मेदसिंह के शरीर के अं।। छिन्न भिन्न होकर रण भूमि में मिल गये तथा उनकी आत्मा परमात्मा की दिव्य ज्योति में लीन हो गई ॥ ४ ॥

७३. राजा उम्मेदसिंह सिशोदिया, शाहपुरा

गीत (वड़ा साणौर)

लियां भूप ऊमेद गज गाह लड़ लोहड़ां,
लागियाँ डाण गज गाह लटकै।
वेख गजराज गत राणियाँ वखतसी,
खांत तण हिये गज राज खटकै ॥१॥

तड़ कमंध गाँजिया लिया भारथ तणौ,
भांजिया कटक बनराव भूखै।
सम गयन्द नारियाँ चाल पेखे सुपह,
दुआ रड़माल उर गयन्द दूखै ॥२॥

पामिया मोड़ सामंत कायल पुरे,
मग वणै दंत वग पंथ माला।
कामणी गवण मैमंत उमंगां करै,
कंथ चित चुभै मैमंत काला ॥३॥

गजां गत वेख गजराज चूड़ा गरक,
सोभ गज मोतियाँ भार सारा।

जीवड़ै आद गिरि गजां जािणया,
बखतसी राणियाँ न दे वारा ॥४॥

(रचयिताः—कृपाराम महड़ु)

भावार्थः—हे उम्मेदसिंह; तूं ने शत्रुओं से लड़ कर शस्त्रों द्वारा हाथियों को कुचलते हुए कुछ हाथियों को अपने पराक्रम से हस्तगत कर लिया तथा कुछ को घायल कर जब जोधपुर के राजा बख्तसिंह अन्तःपुर में जाता था तो उसे गज- गामिनी रानियों को देख कर, युद्ध स्थल के हाथी स्मरण में आते थे। जिससे हाथियों की स्मृति निरन्तर हृदय में खटकती थी ॥ १ ॥

हे भारतसिंह के पुत्र! तू क्षुधातुर सिंह की भांति सेना को पराजित कर तू ने राठोड़ नरेश को परास्त कर दिया। हे दूसरे रणमल के समान वीर बख्तसिंह, जिस समय अन्तःपुर की गजगामिनि रानियों की चाल देखता तो उसे युद्ध स्थल में खोये हुए हाथियों की स्मृति हो आती थी। यह स्मृति उसके हृदय में बड़ी पीड़ा करती रहती थी ॥ २ ॥

हे सिशोदिया, उम्मेदसिंह तेरे द्वारा नष्ट किये हुए हाथियों के दांत इस प्रकार पंक्ति में पड़े हुए थे मानों श्वेत बगुलों की पंक्ति हो। इस पंक्ति को देख कर उनके मदोन्मत्त हाथी की स्मृति हृदय में खटकती रही ॥३॥

बख्तसिंह—जिस समय अन्तः पुर में जाता उस समय गज-गामिनि रानियों के वक्षस्थल पर गजमुक्ताओं के हार तथा हाथों में हाथी दांत की चूड़ियों को देखता तो उसे अपनी पराजय और हाथियों की स्मृति हो आती थी। अतः वह रानियों को अपने अन्तःपुर में निश्चित तिथि और समय पर भी आने से मना कर देता था ॥४॥

७३ राजा उम्मेदसिंह सिशोदिया, शाहपुरा

गीत-(सु पंख)

दोला दूसरा उमेदसिंघ आवला मेलिये दला ।
चोट इक हकै सु चंचला धकै चाढ़ ॥
मेली खाक साख में अंजली जोड़ आण मली ।
वली डली डली की खुमांण खला वाढ़ ॥१॥

कटांवेल झाड़ झाड़ा पहाड़ सैंलोट कीधा ।
वंस रांण मेवाड़ा अहाड़ा चढ़े वांन ॥
वड़ा आसवासी जिके वांकी ठोड़ तणां वासी ।
मीणां खासी रेत किया मेवासी अमान ॥२॥

धाड़-धाड़ पाथ रुपी भाराथ रां गादी धणी ।
पंजाया देखाया मेले सेनां साथ पूर ॥
अरी वाढ काढिया आठूं ऐराकियां ।
सूधा कियां त्रंबाकियां बजावै राजा सूर ॥३॥

(रचयिताः-अज्ञात)

भावार्थः- दूसरे दौलत सिंह के समान उम्मेदसिंह ने सेना सहित एक ही वार घोड़े पर चढ़ कर शत्रुओं पर आक्रमण किया और विपत्तियों की शाखा को खाक में मिला दिया जिससे शत्रु हाथ जोड़ कर सामने आ गया । सिशोदिया ने युद्ध स्थल में प्रवेश कर शत्रुओं के घाव लगा उनके टुकड़े २ कर दिये ॥

मेवाड़ के राणावंशज सिशोदिया ने अपने गौरव को बढ़ाने के लिये पहाड़ों के झाड़ झंखाड़ों को साफ करा खुला मैदान बना दिया और विकट पहाड़ों में रहने वाले मीणों, गरासियों और भीलों (जो डाके डाला करते थे) को अपने अधीन कर लिया ।

हे भारत सिंह के उत्ताराधिकारी उम्मेदसिंह ! अर्जुन के समान तेरे साहस को धन्य है। हे शूरवीर नरेश ! तुमने आठ अश्वारोहियों से शत्रुओं को मार कर निकाल दिया और न जाने कितनों को नक्कारे बजवा कर सीधा कर दिया ॥

७४ राजा उम्मेदसिंह सिशोदिया, शाहपुरा

गीत [बड़ा साणौर]

दुरंग बणहड़ा सहित सरदार अड़ते दियो ।
जमी असमान विच सबद जड़ियौ ॥
हाथियां तणौ ऊमेद बड़ हीड़ाऊ ।
पड़ाऊ लियण रौ व्यसन पड़ियौ ॥ १ ॥
बरूथां बीर चाला करण बुलावै ।
थरहरां डुलावैं पिसण थांनां ॥
मदझरां भारथ रौ टका नहँ मुलावै ।
खाग बल खुलावै फील खानां ॥ २ ॥
सूजहर मिले अधियामण साज सूं ।
जेत खंभ आज रौ किला जेरे ॥
बारण लियण हेरे नहं बिसाती ।
हथीड़ां दूकलां खला हेरे ॥ ३ ॥
तड़ां अन तड़ां सीसोद कीधां तंडल ।
रहचकां रांण सुरताण रीधां ॥
सिंधुरां पड़ाउ लियण बंध सेहुरां ।
देहुरां देहुरां चाढ़ दीधां ॥ ४ ॥

[रचयिता:—अज्ञात]

भावार्थ—युद्धारंभ होते ही सरदारसिंह ने बनेड़ा सहित किला सौंप दिया। जिससे हे उम्मेदसिंह ! धरती और आसमान के बीच तेरी कीर्ति फैल गई है। बड़े २ हाथियों को खुलवा कर छीनने की तेरी आदत ही पड़ गई है।

शूरवीर शत्रुओं से छेड़छाड़ कर उनको अपने स्थान से डांवा डोल कर देता है और कंपा देता है। हे भरतसिंह के पुत्र ! तू मूल्य देकर हाथियों को खरीदता नहीं है। तू तो अपनी तलवार की ताकत से ही दुश्मनों को हस्तिशाला से हाथी खुलवा लेता है।

हे सुजानसिंह के पौत्र ! तू अजीब तरह से अपनी सेना को सजाकर चढ़ाई करता है और विजय का स्तंभ बन कर शत्रुओं के किलों को जीत लेता है। तू हाथियों को खरीदने के लिये उनके व्यापारियों को ढूढता किंतु तू हाथियों सहित शत्रुओं को खोजता है।

संगठित और असंगठित शत्रुओं को तू ने नष्ट कर दिया है। तेरे शौर्य को देखकर बादशाह आश्चर्यान्वित हो गया और राणा ने प्रसन्नता प्रकट की। हे उम्मेदसिंह तू ने शत्रुओं से हाथियों को लेकर बहुत से देव मंदिरों को भेंट कर दिया है।

७५. राजा उम्मेद सिंह सिशोदिया, शाहपुरा

गीत (छोटा साणौर)

सफरा असनान खाग धारां सिर—
उतरा रिव क्रम क्रम असमेद ॥
जुध में भड़ा चाहिजे जतरा।
अतरां अब पामिया उंमेद ॥१॥
बांधे नेत राण छल बागो।
मग मग जग साधे धर मोद ॥

ईसर-गवर मिलिय आराधे ।
सही मो सिर लाभौ सीसोद ॥ २ ॥

जसह्रो हो तो देग वट जाहर ।
तेग वगां मृत कियो तिसो ॥
भारी लोण रांण छल भिड़ियो ।
जुड़ियो खेत उजेण जसो ॥ ३ ॥

केलपुरा कमंधां कछवाहां ।
भविया ऊगे सदा धन ॥
जुड़वे मरण हुवो जूड़ारां ।
दातारां तणौ इसो दन ॥ ४ ॥

सूरां नरां मरण रौ सरायो ।
कवि गाया सुजस जे कंठ ॥
मारी छल पाया भारथाणी ।
वधाविया देवां वैकुंठ ॥ ५ ॥

(रचयिता:—अज्ञात)

भावार्थ:— क्षिप्रा नदी के पवित्र स्थान की गंगा का स्नान, तलवार की धार से रक्त रंजित होना, सूर्य की चाल उत्तरायण को देख कर युद्ध भूमि में तूं प्रति कदम अश्व मेध यज्ञ का फल प्राप्त करते हुए हे उम्मेद-सिंह, तूं ने ऐसे पुण्य का दिन प्राप्त किया। वीरों के लिये युद्ध भूमि में पुण्य प्राप्त करने के लिये जितने साधन होने चाहिये उतने ही तुझे उप-लब्ध हुए ॥

महाराणा के लिये तूं ने मस्तक पर विजय चिन्ह धारण कर युद्ध किया और युद्ध में हर्ष युक्त बढ़ते हुए अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त करने

की साधना की। हे सिशोदिया ! युद्ध भूमि में शंकर और पार्वती मिल कर तेरे मस्तक के हेतु तेरी आराधना करते थे उसी प्रकार उनको तेरे सिर का लाभ मिला ।।

गौरव के साथ जैसा तू युद्ध करता है वैसा ही तूं शत्रुओं पर तलवार चलाता है और महाराणा का नमक उज्ज्वल करने के लिये तू ने प्रतिपक्षियों के शस्त्रों द्वारा अपनी मृत्यु प्राप्त की ।।

हे सिशोदिया ! राठौड़ और कछवाहा नरेशों से समय समय पर तू लोहा लेता रहता था। हे वीर ! तूं दानवीर और युद्ध वीरता में निपुण था, जिससे तुझे यह पुण्य समय प्राप्त हुआ ।।

स्वर्ग लोक में देवताओं ने और पृथ्वी पर मनुष्यों ने तेरे इस मृत्यु के अवसर को देख कर तेरी सराहना की और कवि लोगों ने मुक्त कंठ से तेरा यशोगान किया है। हे भारतसिंह के पुत्र। उक्त समय अच्छा प्राप्त किया जिससे स्वर्ग में देवता लोगों ने तेरा भली प्रकार स्वागत किया ।।

७५. राजा उम्मेदसिंह सिशोदिया, शाहपुरा

गीत—(सुपंख)

पला बांध रायजादा पणे दोय सोवा पातसाई ।
खहे कला हूंत जे उथाप दीधा खेद ।।
माण धारे दूजा भूप इस हेक मामला सूं ।
अनेक मामला सूं इसा खाटिया उमेद ।।१।।

जसो नाथ कुरम्भां कमंधां अभो जेठी ।
वानेत चीतोड़ नाथ जगो महावीर ।।
केही वेलां खिजाया या तीना हूंतां झूठो कलं ।
केही वेलां हरोलां न्हे रिझाया कण्ठीर ।।२।।

बखचोस वाला दलां वाढाक वाण सा वागो ।
हुवौ बूंदी हूंतौ दलो काढाक हीकोट ॥
बारा सूं भूठो क्रोध गाढाक गनीमां आगे ।
माभी धके चाढाक गनीमां माल कोट ॥३॥

भाराथ ढीकोला कीधा भांजिया भुरट्यो भीच ।
सेन दोला कीधां कींधो जनकूं साकेल ॥
राघोदेव सुधां सोला भागे सात रोलो कीधा ।
ओलो लीधा जसो वाथ ऊबरे आंकेल ॥४॥

जाजनेरां, सांवरा, नूं लूटिया जेहान जाणे ।
सारा जोम हीण होय छूटिया सीमाड़ ॥
वणोडो, कोठियां कला तूटिया जे धके वागां ।
वलीरा मेवासां माण खूटिया वेछाड़ ॥५॥

दे दे रीभ हजारां कविन्दां नूं नवाज दीधा ।
सोभाग हजारां लीधा ताल सोभवान ॥
हजारां भाराथ कीधा भूरै ऊभे राहां हूंत ।
ऊभे राहां हूंतां कीधा हजारां आसान ॥६॥

हिंदवाण नाथ हूंता हिंदवाण द्रोही व्हेता ।
जोधाण आंम्बेर सोही पालटे जे वार ॥
दाखियो दिवाण राज मो थंभे न कोही दूजो ।
भारात रा महाबीर तोही भुजां भार ॥७॥

वाज डंकां त्रंबाला आतंका लाग वेरी हरा ।
रसा बोध काज धंकां धारियां सीरी सोद ॥
पृथी नाथ बाला बांज बावां माथै वेल पूगौ ।
सदा वीर हाकां माथै वाहरू सीसोद ॥८॥

आंबानेर जोधाण नाथरौ भेद खेद ऊठो ।
सतारा नाथरौ भूल हे जमां समाग ॥
ऊठी सारा साम द्रोहां साथ रौ संगाथ एतो ।
भाराथ रौ अठी हेका हेकी भूरौ बाध ॥६॥

खूंटा भंडां हबोला हे थंडां भू वेहरी खुरां ।
सूर ढंकां खेहरी भू मंजं नसा तेम ॥
रोला काज तेहरी थटेत आया राजा माथै ।
जटेत केहरी दोला फीलां टोल जेम ॥१०॥

एहा थोक लाखां उदेनेर दोला आंय लागे ।
ताम तोपां ताव वागै कायरां धू तांम ॥
पतो बीजो चढ़े रूकां न्याय वागे जठे पैलां ।
सारा एके धाय भागै पाधरै संग्राम ॥११॥

मार दीधा हेकले नीसाण लम्बी मूछा किया ।
तेग पाण सूधा किया छाकिया तो सेल ॥
ईखे तेज राजारो धाखिया संघी ओट लधी ।
जटे राजा संधी माथे हाकिया जो सेल ॥१२॥

खुरा मेल घटालां पतांला घू नेजालां खूटा ।
रव ताला माध वाला दीठा काल रूप ॥
लाय झाला क्रोध भूरो वूठतो वरालां लोह ।
भूरो वीर चाला काज पूगो एमं भूप ॥१३॥

जोधारां तोखारा व्हे दवासूं भेखां जरद्दालां ।
दवा सूँ कराला नाद वाजिया दुजीह ॥
कड़े चढ़े भड़ां फौजां दवा सूं देठालां कीधा ।
आंमां सांमा फीलां झंड़ा फाविया अवीह ॥१४॥

ईखे वेढ लंका ज्यां अपारां कंकां थोक आया ।
काली वीर कलक्के श्रोण का प्याला काज ॥
हूरा रंभ हजारां गैणाग ढका रथां हूंत ।
सोभ गणंकां नाथ धाया नाथ डेरू डंका साज ॥१५॥

लाखां बाण गोला खें नखत्रां ज्यूं तूटवा लागा ।
सेसरा तूटवा लागा भार हूँ सुमेद ॥
लागा सरां सेला फील सजोड़े फूटवा लागा ।
यूं चौड़े जूटवा लागा माध ने उमेद ॥१६॥

दूठ ऊभां वाकारे पेखतां काचा प्राण दाभे ।
भड़ां नाथ जागे तेज जाणे जेठ भाण ॥
रूक वाजे वां अनेक हजारां गनीमां रोले ।
साजे एक हजारां सूं दूसरो सुजाण ॥१७॥

धूमे धोम अरावां गेणाग तांई धोम लागे ।
कंध कोम लागो फौजां मचोल काराथ ॥

वेरी हरा तणा थाट सामो खड़े घोम लागौ ।
भूरो जोम जठी लागो आहुड़े भाराथ ॥१८॥

घाव आप छकै पैलां हजारां छकावे घावे ।
घू घोम अड़क्के चीत जोम हूँ धारीक ॥
श्री हथां जड़क्कै खाग गेधड़ां वड़क्कै सीस ।
सांमला पहाड़ां बीज कड़क्कै सारीख ॥१९॥

हाक मार मांरा सारां धारां वेसुमारां हुवै ।
धके व्हे कटारां उरां परां फूटे सकोधार ॥
विग्रहे सामंत प्रथीराज आगे काम वागा ।
ज्युँही राजा आगे खहे राजारा जोधार ॥२०॥

लोही धारां आपगा अपारां आंट पांटा लागी ।
चंडी पीवे पत्रां कंठां लागी बंधे चाल ॥
भखै घाया ग्रीध का अंकाया फील थाटां भागी ।
नाराजां अभागां भाटां वागी नरा ताल ॥२१॥

भाण ऋषि जंत्र धारी ने तमासा दीध भारी ।
दीधा ज्ये भूतेस नूं सारां सीस हारां दान ॥
महा खेत उजेण तीरथां सारां राज माहे ।
सिद्ध राज कीधो धारां दुधारां सनान ॥२२॥

लंका महा भाराथ सरीख तीजा राड़ लड़े ।
सोभा चाड़ वंसां चड़े रथां साम राथ ॥
सादना वजाड़ सुधा भंजाड़ घू जाड़े सेलां ।
पाड़ लाखां भाड़ खेत पड़ै प्रथी नाथ ॥२३॥

इन्द्र गे अरूढ़ गिर त्राण भूल सामां आया।
सारां हे बधाया कीधां भलूसा समाज ॥
सारधारां वढ़ेगो ऊजलो लाखां खलां सूधौ ।
दलां सूधो विमाणां चढ़े गो दलां राज ॥२४॥

ऊभो राहां सीस भास माण जेते अंत ऊगो ।
अनोखा अंदरां गोखां पूंगो आसमान ॥
भूरो जसा काम जोगो हंतो वेढीगारो भूप ।
जसे काम काम आयो जाणियो जिहान ॥२५॥

(रचयिताः—चावण्ड दान महड़ू)

भावार्थः— हे उम्मेदसिंह, तू ने बादशाह की ओर से सूबेदार का पद बड़े सम्मान के साथ प्राप्त किया। अनेकों युद्ध में योद्धाओं को परास्त किया। ऐसे भयंकर युद्ध में विजय प्राप्त कर अन्य नरेश अभिमानी हो जाते हैं, किन्तु हे वीर, अनेक युद्ध में विजयी होने पर भी तू ने कभी अभिमान नहीं किया और ऐसे अनेकों पद प्राप्त किये ॥ १ ॥

जयपुर के कछवाहा जयसिंह, जोधपुर नरेश अभयसिंह राठोड़ और चित्तोड़ के महाराणा जगतसिंह के विरुद्ध युद्ध कर इनको तू ने क्रुद्ध कर दिया। किन्तु पुनः तू ने इन तीनों की सेना के हरावल में रह कर, शत्रुओं का नाश कर प्रसन्न कर लिया ॥ २ ॥

हे वीरों में मुख्य वीर, जोधपुर नरेश वख्तसिंह की सेना पर तलवार चलाकर उसे परास्त किया और बूंदी नरेश दलेलसिंह को मार भगाया। इसी प्रकार जयपुर नरेश जयसिंह की सहायता तू ने जोधपुर नरेश वख्तसिंह के विरुद्ध युद्ध कर के की। मालपुरा के युद्ध में भी तू ने विजय प्राप्त की ॥ ३ ॥

ढ़िकोड़ा स्थान पर भूरख्या नामक शत्रु पर चढ़ाई कर, उससे भयंकर युद्ध किया। हे वीर, तू ने उस को भयभीत कर दिया।

रावोदेव झाला और सौलह उमरावों द्वारा महाराणा ने देवगढ़ वाले जसवन्तसिंह के ऊपर आक्रमण करवाथा। उस समय हे वीर उम्मेदसिंह, तू ने जसवन्तसिंह का पक्ष लेकर उसकी ओर से युद्ध किया ॥ ४ ॥

हे वीर, तू ने जहाजपुर व सावर को लूट कर सारे प्रान्त में आतंक फैला दिया। जिस से शाहपुरा के समीपवर्ती राजा इधर उधर भयभीत होकर आश्रय लेने लगे। बनेड़ा नरेश ने तेरा सामना किया पर तू ने बड़ी वीरता से नरेश का राजप्रासादों सहित विनाश किया। पर्वत प्रदेशीय डाकुओं को नष्ट कर उनके अभिमान को नष्ट कर दिया ॥ ५ ॥

हे भाग्यशाली वीर, तूने सहस्रों कवियों को दान देकर उन से प्रशंसा प्राप्त की। हिन्दुओं और मुगलों से अनेकों समय तू ने युद्ध कर निर्बल पक्ष की सहायता की। जिससे तूने दोनों जातियों से समय-समय पर प्रशंसा प्राप्त की ॥ ६ ॥

जोधपुर और आमेर नरेश ने जब मिल कर मेवाड़ के महाराणा के ऊपर आक्रमण किया। उस समय हे वीर, महाराणा ने मेवाड़ की रक्षार्थ, इस युद्ध का समस्त उत्तरदायित्व तेरे कंधों पर ही छोड़ा। महाराणा कहने लगे कि, हे भारतसिंह के वीर पुत्र, मेवाड़ राज्य का भार तेरे ही कंधो पर छोड़ता हूँ क्योंकि अन्य में इस भार को वहन करने की सामर्थ्य नहीं हैं ॥ ७ ॥

हे योद्धा, तेरे नगारों के घोष से शत्रु भय से कम्पित हो जाते थे। मेवाड़-भूमि की रक्षा के लिये तू ने चारों और आतंक फैला दिया। हे सिशोदिया, तू ने नक्कारे बजाते हुए योगियों से भी युद्ध किया। इसी प्रकार तू सदैव निर्बल पक्ष की सहायता रण-भूमि में बड़ी वीरता के साथ करता था ॥ ८ ॥

जयपुर के कछवाहा एवं जोधपुर के राठोड़ वीरों के मन में ईर्ष्या होने के कारण सिंधिया के साथ मिल कर जिन में मेवाड़ के विद्रोही

सामन्त भी थे, मेवाड़ के ऊपर आक्रमण किया। उस समय हे भारत-सिंह के पुत्र, तूने सिंह के समान क्रुद्ध होकर स्वामी के हेतु-रणस्थल में प्रयाण किया ॥ ६ ॥

उस समय रण-भूमि में झंडे लहराने लगे और अश्वों के खुरों से पृथ्वी कुचली जाने लगी। घोड़ों के पैरों द्वाराउड़ती धूलिकण की आड़ में सूर्य छिप गया और पृथ्वी पर अन्धकार ही अन्धकार छा गया। जयपुर, जोधपुर और सिंधिया आदि सैनिक वीरों से शाहपुरा के विरुद्ध युद्ध करने के लिये सिंह रूपी शाहपुरा नरेश को गजरूपी सैनिकों ने चारों ओर से घेर लिया ॥ १० ॥

हे उम्मेदसिंह, प्रतापसिंह के समान वीर, अनेकों समय शत्रुओं द्वारा उदयपुर को घेरे जाने पर तू ने प्रचंड तोपों की गर्जना के मध्य युद्ध किया। अपनी तलवार के वार से शत्रुओं के शरीर में तू ने अनेकों घाव लगाये, यह देख कर भीरु सैनिक कम्पित होने लगे ॥११॥

हे वीर, तू अकेले ही शत्रु सेना से युद्ध करता हुआ, उनके नगारे और झण्डों को नीचे गिराने लगा। इस प्रकार सिंधिया सैनिकों पर क्रुद्ध होकर हे उम्मेदसिंह तू आक्रमण करने लगा। जिस से सिंधिया के सैनिक अपनी प्राण रक्षा हेतु आश्रय लेने लगे ॥ १२ ॥

माधवराव सिंधिया की सेना में घोड़ों की इतनी भरमार थी कि घोड़ों के खुर से खुर मिलने लग गये तथा हाथियों पर अनेकों ध्वज लह-राने लगे। सिंधिया की सेना का विराट समूह काल के सदृश दृष्टि गोचर होने लगा। उस समय प्रज्वलित अग्नि के समान क्रोध में आकर तू शत्रु सेना पर प्रहार करने लगा और हे वीर, विरोधियों को चुनौती देने के लिये उनके सम्मुख जा पहुँचा ॥ १३ ॥

रण भूमि में दोनों ओर के अश्वारोही वख्तर पहने हुए अद्भुत वेष घोड़ो पर पाखर डाले हुए नगारे बजने लगे। दोनों पक्ष की ओर हाथियों

पर ध्वज लहराने लगे। इस प्रकार दोनों ही पक्ष के योद्धा अपने-अपने निश्चय पर दृढ़ प्रतीत होने लगे ॥ १४ ॥

लंका के युद्ध के समान भयंकर युद्ध जानकर गिद्धनियों के समूह दौड़ दौड़ कर आने लगे। कालिका और वीर रक्तपान करने के लिये अट्टहास करने लगे। आकाश-मार्ग से सहस्त्रों अप्सराएँ विमान से आकाश को आच्छादित करती हुई रण-भूमि में उपस्थित हुईं। उस समय नौ नाथ सहित शंकर भी डाक के डंका लगाते हुए शीघ्र ही रण-भूमि में उपस्थित हुए ॥ १५ ॥

लाखों तीर और तोप के गोले युद्ध में इस प्रकार से गिरा रहे थे मानो आकाश मार्ग से तारे टूट टूट कर गिर रहे हों। इस प्रकार की युद्ध की धूमधाम से शेष नाग का मस्तक डोलने लगा। वीरों के तीक्ष्ण भालों और बाणों के वार से दो-दो हाथी एक साथ धराशायी होने लगे। हे उम्मेदसिंह, तू ने इस प्रकार की भयंकरता से माधवराव-सिंधिया से युद्ध किया ॥ १६ ॥

इस प्रकार शूरवीर यमराज के समान भयंकर रूप धारण कर परस्पर ललकारने लगे। इस भयंकरता को देखकर भीरु सैकिन के प्राण धक्-धक् करने लगे। हे उम्मेदसिंह शूर वीरों का स्वामी, तू ने ज्येष्ठ मास के सूर्य के ताप के समान तेज धारण करते हुए युद्ध जागृत कर, अपने हजारों सैनिक वीरों द्वारा शत्रुओं का नाश किया। हे सुजानसिंह के समान वीर, तूं ने केवल एक हजार सैनिकों से ही युद्ध प्रारंभ कर दिया ॥ १७ ॥

भयंकर घोप का उत्पन्न करने वाले नगारों के बजने से आकाश गूंज उठा। दोनों ओर की सेनाओं के भार से तथा परस्पर टक्कर से कछुए की पीठ लचकने लग गई। उस समय हे वीर तू क्रुद्ध होकर आकाश की ओर अपना मस्तक उन्नत कर शत्रुओं के संमूह में जाकर युद्ध करने लगा ॥ १८ ॥

उस समय हे वीर क्रोध के आवेश में आकर आकाश की ओर उन्नत मस्तक किये हुए और घावों को सहन करते हुए विरोधियों को शस्त्राघात द्वारा रक्त रंजित करने लगा। विरोधियों की सेना के काले पर्वताकार हाथियों के समूह पर आकाश की विजली के समान प्रहार करते हुए उनको धराशायी किया। जिससे हाथियों के मस्तक रण-भूमि में टूट-टूट कर गिरने लगे ॥ १६ ॥

रण-भूमि में यौद्धा "काटो" मारो शब्द का उच्चारण करते हुए तलवारों से शीघ्रता पूर्वक प्रहार करने लगे। अनेकों यौद्धा शत्रु सैनिकों के वक्षः स्थल में कटारी का तीक्ष्ण वार कर पीठ के पीछे कटारी को निकालने लगे हे यौद्धा, जिस प्रकार पृथ्वीराज चौहान के सामन्तों ने युद्ध किया था उसी प्रकार तेरे यौद्धा तेरे प्रति पक्षियों के सामने युद्ध करने लगे ॥ २० ॥

रण-भूमि में असीम रक्तप्रवाह नदी के रूप में बहने लगा। चण्डी और योगनियों ने समूह पंक्ति बनाकर रक्त-पात्र भर कर रक्त पीना आरंभ किया। भालों व तलवारों के वार से शत्रु सैन्य का संहार होने लगा। युद्ध भूमि में मृत हाथियों के शव को गिद्ध खाने लगे और युद्ध भूमि में त्रिकोणाकार नुकीलेदार तीक्ष्ण भाले परस्पर वीरों द्वारा चलाये जाने लगे ॥ २१ ॥

शूर वीरों ने सूर्य एवं नारद ऋषि को युद्ध का कौतुहल देखने का अवसर दिया तथा शंकर को कण्ठ में मुण्ड-माल धारण कराने हेतु अपने मस्तक काट कर समर्पित किये। सभी तीर्थों में श्रेष्ठ तीर्थ उज्जैन की रण-भूमि में, भयंकर युद्ध करता हुआ ऋषि राज के समान रक्त धारा में और सफरा नदी की धारा में तू ने स्नान किया ॥ २२ ॥

महाभारत और लंका के समान तू ने यह तीसरा भयंकर युद्ध कर, अपने कुल के गौरव को बढ़ाया। हे सामन्त, तू ने नगारों की भीषण गर्जना के मध्य शत्रुओं का नाश कर अन्त में तू शत्रुओं के भालों

के वार से वीर गति को प्राप्त हुआ, अप्सराओं के विमान में विचरण करने लगा।

स्वर्ग लोक से गजा रूढ़ होकर इन्द्र आदि देवता तेरे स्वागत के लिये सम्मुख आये और स्वागत किया। हे सेना नायक उम्मेदसिंह, तू ने लाखों शत्रुओं को नष्ट कर कुल को उज्जवल करते हुए तलवार से कटकर सेना सहित विमानों पर आसीन होकर स्वर्ग की ओर प्रयाण किया ॥२४॥

जब तक सूर्य हिन्दुओं और मुगलों को प्रकाश देता रहेगा तब तक तेरा यश इस संसार में व्याप्त रहेगा। हे योद्धा इन्द्रलोक के अद्भुत झरोखे में बैठने के लिये आकाश मार्ग से तू पहुँच गया। हे वीर, जिस प्रकार रण के लिये तू प्रसिद्ध था उसी प्रकार से तू ने रण-भूमि में युद्ध किया। जिस की प्रशंसा संसार में विद्यमान रहेगी ॥ २५ ॥

७७. रावत पहाड़सिंह चुण्डावत, सलूम्बर [१]

गीत—(सुपंख)

आयो उरेड़ियो जोम रो पटेल माथै धारे आंट।
रवत्तेस दूर हूँ तेड़ियौ काथै राग ॥
सांकलां हूँ लांधणीक हेड़ियो वीहतो सेर।
पूंछ चांप सूतो फेर छेड़िया पैनाग ॥ १ ॥

घाट ओढी पाहड़ेस धकेलतो नोढी धड़ा।
जड़ां खलां ऊखेलतो धरा छलां जाग ॥
गजां वोह वीच तुरी मेलतो बराथी गाढो।
लोह जाय मेलतो उरांथी द्रोह लाग ॥ २ ॥

वजाई कुवेर चढ़े वींद ज्यूं अनोप वाने।
अगोप गे भांजे यसो हाथलां उठाय ॥

अताल़ा करंतो होफ जंगां रोसा वक्र ओप,
कोप–तोप झाल़ां लोप आयो महा काय ॥ ३ ॥

धूत नाल़ां उछाजतो भांजतो हाथियां धक्के,
धारू जल़ां गांजते अनेक घड़ा धींग ।
काल़ क्रीट ऊभांजतो ऊठियो लोयणां कोप,
नरवेधा दोयणां खंभ गांजतो त्रसींग ॥ ४ ॥

चूंडै सोभादार किया खागरा ऊछाज चौड़े,
दिहूँ पासे चसम्मा आग रा तेज दीस ।
हेमरां अजेज वेग वाग़ रा उठाण हूँत,
सको हुआ नागरा मजेज हीण सीस ॥ ५ ॥

सन्नाहां न मावै सूर वड़ी–वड़ी नाच सूंडे,
आग झड़ी द्रोह ऊंडै चसम्मा अटेल ।
भड़ी खड़ी मूंछ भ्रहां लोहरे हद्दूंडे भांत,
पड़ी अड़ी राड़ चूण्ड़े अचूण्डै पटेल ॥ ६ ॥

आस मेद जागरा अमाप पांत्र देत आघा,
आछै खांप हूँत देत ओनागा अत्रीठ ।
लड़ाक सीसोद नेम गनीमां अहेत लागा,
नेत वंध वागा खेत अखाड़े नत्रीठ ॥ ७ ॥

रोक रोक तुगी भाण आराण विलोक रीझे,
विभ्र मोक त्रलोक गंवोक घोक वाज ।
वेध वेध सोक झोक तोक वाण सेल खाग,
सीसोद गनीम तणा थोक हुं चोक सकाज ॥ ८ ॥

वांरगां उमंगां रंगां विमाणंगा सोक ग्राज,
रारंगां अभंगां भड़ां दमंगां रो सार ।
पनंगां विहंगां ढंगां नारंगां अभीच पड़ा,
सारंगां खतंगां अंगा मातंगां दू सार ॥ ६ ॥

खत्री कंध जेम केही रो सार चसम्मां खोले,
सार तोले केही सार साचवै समंध ।
धार पड़े पूठ केही माथा मार-मार बोले,
काया तेग धार ऊठ डोले के कमंध ॥१०॥

सूर गैण बाथ घाले घणा तेग छूटै संध,
रोस छूटा घण सूर माले गाडे राव ।
घणा सेल फूटां सीस करे खाग वाढां घांव,
घणा खाग टूटां करे जम्मां डाढां घाव ॥११॥

नारांजां के भड़े सूर अच्छरां लगावे नेह,
छेह पेले केही सूर आभड़े न छोत ।
देह त्यागै केही सूर जीरणां वसत्रां दाय,
सैं देह वेवाणां वैठ जावे के साजोत ॥१२॥

दुभाल रा संध ज्यूं रहे न कोइ खीज ओटी,
करे के लाल रा जके छोटी बूथ कूंत ।
धाराला भालरा नागां अगोठी काल रा धूवै,
हाल रा चौसटी दे अनोठी वाण हूंत ॥१३॥

महाराग छंडेव छंडेव व्हे न दे न गूंड,
वजंडेव डम्मरु चंडेव हत्ती वीस ।

संडेव छंडेव मेख पाथ वाण पाय साच,
उमंडेव मंडेव तंडेव नाच ईस ॥१४॥

ईख लंका चेत्रां त्रेता जुगेतां सग्राम असो,
उरधरेत केता धू अनेता उनन्द्र ।
रुद्र छाक लेता वीर देता राह जेता फरे,
मलै हास हेता वेता अनेता मुनन्द्र ॥१५॥

पंथ आसमाण हूंत झपट्टी अपट्टी परां
वरां कंठ लपट्टी अपट्टी जेणवार ।
सामठी झड़ फके गीध जठी तठी गणा सूधौं,
धूर जट्टी चुणै धू हजारां हाथ धार ॥१६॥

भद्र जाती चुणै सीस मोती स्त्रोण पंका भलै,
खात मोती मुराली नसंकां चुगै खूद ।
अंका कीध लंका राम मलै बंका खेत एम,
ग्रीध कंका असंका नसंका लिये गूद ॥१७॥

जूंझवां फुहार टक्र उडै धके आय जेता,
अंग चक्र वार हुआ वक्र के अथाण ।
केल पुरै अठी उठी चक्र वेग फेर कीधो,
मार टक्र मार हटी सेन रो मथांण ॥१८॥

चात्रदंत दीह अगां समा जूझ लाग चालै,
नरा तालै साम ध्रमी तणे साचो नेम ।
क्रोध वाले रूप गनीमाण री त्रिधूंस कीधो,
जोध वाले वीर भद्र दक्ष जाग जेम ॥१९॥

सीसोद उमंडे सुरां लोक लीधो सीस साटे,
हत्ती त्रीस मंडै ओक घाटा स्त्रोण हेत ।

रूतौ सार दूल खांत अखाड़ै उपाट रोस,
खलां दांत खाटा करे छूतो बीर खेत ॥२०॥

बीत त्यागी जेम सूर भी राण सीसोद बढ़ै,
आभ क्रीत लागी चढ़ै निराणां धकायो ज्वाद ।
जुधा जुधा खलां तणा जिराणां एकूंट,
बीराणा चखावे स्वाद हालियो बैकूंट ॥२१॥

हुओ जोखंत कांकलै ओत ओत जोत हूंतो,
जोत हूंतां रही नकां भंतका जुहार ।
सरै छांहां मही पुरी सातमी तंतका सार,
अंत समै लही पुरी अतंका उदार ॥२२॥

धरी खरी सरीत नवाही वाज फूल धारां,
गोलकूंडे रीत चूंडे अरी करी गाह ।
परी वरी हंस बैठ बिमाणां सैं जोत पूगौ,
मरी-मरी टूक होय उडो प्रथी माह ॥२३॥

(रचयिता:—बद्रीदास खड़िया)

भावार्थ:— हे रावत, माधवराव पटेल के ऊपर क्रुद्ध होकर, तू युद्ध करने लगा। तू ने बड़ी दूर से आकर भी आतुर हो युद्ध किया। उस समय तू श्रृङ्खला से छूटे हुए भूखे सिंह के समान अथवा सुप्त सर्प की पूंछ पर चरण लग जाने के समान भयङ्कर रूप से शत्रु सेना पर क्रुद्ध हुआ ॥ १ ॥

टिप्पणी:— १. यह रावत जोधसिंह का पुत्र था और वि० सं० १८२१ में सलूम्बर का रावत हुआ। वि० सं० १८२५ में महाराणा अरिसिंह के समय उज्जैन में सफरा नदी के तट पर माधवजी सिंधिया से मेवाड़ की सेना का युद्ध हुआ, तब बड़ी वीरता से युद्ध करता हुआ छोटी अवस्था में स्वर्गवासी हो गया।

हे पहाड़सिंह, तू ने असीम सेना को विलक्षण रूप से पीछे धकेल दिया और पृथ्वी से शत्रुओं को निर्मूल करने लगा। हाथियों के समूह में अश्वारोही होकर शस्त्रों सहित प्रविष्ट हो युद्ध करने लगा ॥ २ ॥

हे कुवेरसिंह के समान वीर, तेरा विवाह के वर के समान तेजोमय पुष्ट शरीर दृष्टिगोचर होने लगा। सिंह के पंजे के समान अपने हाथ उठाकर तलवार से हाथियों को नष्ट करने लगा। युद्धः स्थल में क्रुद्धसिंह की भांति दहाड़ता हुआ युद्ध करने लगा। तेरी वक्र दृष्टि से तू युद्धः स्थल में शोभित रहता है। हे दीर्घ स्कंधधारी वीर, तू शत्रु सेना की अग्नि उगले वाली तोपों से भी अपनी रक्षा कर शत्रु के सामने जा पहुँचा ॥ ३ ॥

हे चुण्डावत, बन्दूकों की गोलियों का सामना कर शत्रुओं के हाथियों का नाश करता हुआ तू सुशोभित हुआ। सहस्रों वीरों का नाश करता हुआ तू अपनी तलवार को माँजने लगा तू यमराज के समान क्रुद्ध होकर शत्रुओं को ललकारने लगा और सहज ही नृसिंह अवतार के समान हिरण्यकश्यप रूपी शत्रु सैन्य को चीरने लगा ॥ ४ ॥

हे चुण्डा, तू ने सेना में सूबेदार का पद प्राप्त किया और प्रत्यक्ष रूप से तलवार उठाकर विरोधियों पर वार करने लगा। तुरन्त ही तू ने अश्वारोही होकर अपने नेत्रों में क्रोधाग्नि भर कर घोड़ों की वागों को अपनी सेना से उठवाने लगा। शेष नाग भी जो पृथ्वी का भार वहन करने का गौरव प्राप्त किये हुए था। उनका भी गौरव तेरी इस चपलता के कारण, पृथ्वी कम्पित हो जाने से, क्षीण हो गया ॥ ५ ॥

तेरे सैनिक वीरों के वलिष्ट शरीर बख्तरां में नहीं समा रहे थे। उनका अंग प्रत्यंग युद्ध के आनन्द से प्रफुल्लित हो रहा था। सैनिक वीर नैत्रों में क्रोधाग्नि भर भोहों को टेढ़ी कर शत्रूओं पर इस प्रकार तलवार से प्रहार कर रहे थे मानो वे 'गैर' (ग्रामीण खेल) खेल रहे हों। इस प्रकार हे चुण्डा, अपने प्रण पर अटल रह कर तू पटेल से युद्ध करने लगा ॥ ६ ॥

हे चुण्डा, तू नंगी तलवारों से शत्रुओं पर प्रहार करता हुआ ऐसा लगता था मानो अश्वमेध यज्ञ कर रहा हो। इस प्रकार तू रण चातुर्य दिखाता हुआ शत्रुओं की सेना चीरता हुआ आगे बढ़ गया। हे सिशोदिया, तू विजय चिन्ह धारण कर, इस प्रकार युद्ध कर रहा था मानों अखाड़े में दंगल हेतु मल्ल भिड़ रहे हो॥ ७॥

उस समय आकाश-मार्ग में सूर्य अपने रथ को रोक, बड़ी प्रसन्नता से युद्ध देखने लगा। रण-भेरी एवं नगारों के तीव्र घोष से तीनों लोक भयभीत होने लगे। हे सिशोदिया वीर, तू ऐसे समय पर भयंकर रूप से शत्रुओं का पीछा करता हुआ, उन पर, तीर, भालों और तलवारों से प्रहार करने लगा॥ ८॥

रण भेरी सुन कर वीरों का वरण करने हेतु अप्सराएँ विमान सहित युद्ध स्थल में उपस्थित होने लगीं। उनके विमानों की सन् सन् करती हुई ध्वनि स्पष्ट सुनाई देती है। तेरे नेत्रों में क्रोधाग्नि भभक उठी। सर्प के ऊपर जिस प्रकार गरुड़ तीव्र गति से आक्रमण करते हैं, उसी प्रकार हे सिशोदिया वीर, तू ने बाणों की वर्षा से उन्मत्त हाथियों के ऊपर प्रहार कर उनके शरीरों को भेद डाला॥ ९॥

अनेकों वीर अपने मस्तक के कट जाने पर भी धड़ सहित उठ कर युद्ध करते रहे और अनेकों योद्धाओं के कटे हुए शीश अपने धड़ की ओर मुख खोलकर कहने लगे 'मारो' 'मारो'। इस प्रकार रण भूमि में वीरों के शरीर मस्तक के न होते हुए भी इधर उधर बड़ी तीव्र गति से चलते फिरते हैं॥ १०॥

अनेकों योद्धाओं के धड़ आकाश में उछलने लगे। अनेकों योद्धा अपने चरण दृढ़ता से टिका कर युद्ध स्थल में भयंकर रूप से भागने लगे। अनेकों वीर भालों से अपने मस्तक के चकनाचूर होने पर भी तलवारों से युद्ध करने लगे। यहाँ तक कि तलवारों के टूटने पर वे कटारों से युद्ध करते रहे॥ ११॥

अनेकों धनुर्धारी वीरों के साथ अप्सराएँ प्रणय बन्धन करने लगी। स्पर्शास्पर्श का ध्यान किये विना ही वीर रण भूमि के उस पार सेना को चीरते हुए चले जाते थे। अनेकों यौद्धा अपने प्राण शरीर से इस प्रकार छोड़ देते थे मानों फटे हुए वस्त्र को छोड़ रहे हों। अनेकों वीर सदेह अप्सराओं के विमानों पर आसीन होकर परम ब्रह्म में अपनी आत्मा लीन कर देते थे ॥ १२॥

क्रुद्ध समुद्र की भांति वीरों के नेत्रों में कोध सीमा छोड़ कर उबलने लगा। जिससे किसी की भी रक्षा नहीं हो सकी। वीरों ने भालों एवं अन्य शस्त्रों के प्रहार से शत्रु सैनिकों के शरीरों के टुकड़े २ कर दिये। इस प्रकार के तलवारों के विलक्षण युद्ध में नगारों का भयंकर घोष होने लगा। वीरों की इस प्रकार की रण-क्रीड़ा को देखने हेतु चौंसठ योगनियाँ रण-भूमि में हालरा (वीर गीत) को नवीन ढंग से गाती हुई रण भूमि में आने लगी ॥ १३॥

बीस भुजाओं वाली चण्डी, हाथ में डमरू का भयंकर घोष करती हुई रण भूमि में विचरण करती है। अर्जुन के समान धनुष में प्रवीण यौद्धाओं का युद्ध देख कर शंकर अपने वाहन वृषभ को छोड़कर ताण्डव नृत्य करने लगे ॥ १४॥

यह युद्ध त्रेता युग के राम-रावण-युद्ध की भांति भयंकर रूप से होने लगा और रणांगण में शंकर अपने कण्ठ में कितने ही मुण्डों की मुण्डमाला धारण करने लगे। बावन वीर और पिशाच रक्तपान कर युद्ध भूमि में विचरने लगे। अनेकों ऋषि, नारद आदि आदि हास्य विनोद करने हेतु रणभूमि में सम्मिलित हुए ॥ १५॥

युद्धः स्थल में अनेकों अप्सराएँ वीरों के वक्षःस्थल पर झूमने लगी। गिद्धनियों के समूह मांस भक्षण हेतु इधर उधर झपटने लगे। शंकर सहस्रों भुजाओं को धारण कर सहस्रों मुण्डों को प्राप्त करने लगे ॥ १६॥

हाथियों में उत्तम जाति के भद्र हाथियों के मस्तक चूर चूर होने के कारण उनके मस्तक से मोती रक्त प्रवाह में वहे जारहे है। जिन को हंस वड़ी प्रसन्नता से चुगने लगे। गिद्ध धराशायी यौद्धाओं के मांस का भक्षण निशंक होकर करने लगे। हे सिशोदिया वीर, जैसा युद्ध राम और रावण ने मिलकर किया वैसा ही युद्ध तू ने किया ॥ १७॥

वृत्ताकार तलवारों की धार से शत्रुओं के शरीर के तिरछे टुकड़े उड़ने लगे तथा शत्रुओं के धड़ से रक्तधार फव्वारे की भांति बहने लगी। उस रक्त धार से टकराने वाले यौद्धा भी दूर जा पड़ते थे। हे हे सिशोदिया, तू ने शत्रुओं की सेना के दूसरे भाग पर वार कर मरहठों की सेना का सर्वनाश किया ॥ १८ ॥

एक श्रेष्ठ स्वामी भक्त की भांति, हे वीर उम्मेदसिंह, तू सूर्योदय के समय से ही युद्धारंभ करता हुआ उस में तल्लीन हो गया। दक्ष के यज्ञ रूपी रण में क्रुद्ध होता हुआ वीर भद्र के समान शत्रु सेना का समूल सर्वनाश किया ॥ १९ ॥

हे वीर, तू ने अपने मस्तक को प्रसन्नता से देकर, स्वर्ग का उपभोग किया। तेरे रक्त का पान वीस हाथों वाली चण्डी, अपने वीसों ही हाथ से अञ्जली वनाकर करने लगी। क्रुद्ध सिंह की भांति तू ने अपने प्रण को पूर्ण किया। शत्रु सेना के दांत खट्टे करते हुए तू ने रण-भूमि में वीर गति प्राप्त की ॥ २० ॥

हे सिशोदिया, तू दान वीरों और युद्ध वीरों में भी वेजोड़ रहा। तू ने तीनों लोक में अपना यश व्याप्त कर दिया। तू अपनी वीरता से शत्रुओं के हृदय में ईर्ष्या की ज्वाला जलाता हुआ तथा उनको अपनी वीरता का स्वाद चखाता हुआ, वैकुण्ठ पुरी में जा वसा ॥ २१ ॥

अनेक यौद्धाओं के शरीर को छिन्न भिन्न करते तू ने परम पिता परमात्मा की दिव्य ज्योति में मिला दिया। जिससे किसी को भ्रांति नहीं रही। इस युद्ध की चर्चा सातों हीं खंडों में होने लगी। हे यशस्वी

रा यश भी सातों ही खण्ड में व्याप्त हो गया और अन्त में तू ने स्वर्ग की ओर प्रयाण किया ॥ २२ ॥

इस प्रकार चुण्डावत वीर ने स्वामी के नमक की सच्ची परीक्षा देने के लिये चक्रव्यूह बनाकर युद्ध किया। रण भूमि में चुण्डावत तिल२ कट कर आकाश में अप्सराओं के साथ विमान में विहार करता हुआ, परमात्मा की दिव्य ज्योति में सदा के लिये विलीन हो गया ॥ २३ ॥

७८. राज रायसिंह झाला, सादड़ी[१]

गीत [सु पङ्ख]

तंडै जोगणी महेस संडै उमंडै परी वेताल़ ।
घुमंडै प्रचंडै थंडै उडंडै घेसाड़ ॥
आडै खंडै रोप झंडै भुजां डंडै तोले आभ ।
रायांसींघ गनीमां सूं मंडै चौड़े राड़ ॥ १ ॥

खतंगा कराटे झाट वागे राठ रीठ खगै ।
जगे पाट प्रेत काल़ी अनाढ़ जुवाण ॥
सतारा हजार आठ लोह लाट आयो सजे ।
रासा रा निग्न से साठ नीम जे आराण ॥ २ ॥

श्रोण चंडी पयाल़ां नवाल़ां ग्रीध भखै मांस ।
दूध भीने शाला ताला मुसाला जे दीठ ॥
दुजाला विलाला झाला अचाल़ा दखणी दल़ा ।
रूप भाला जंगा गजां ढालां माता रीठ ॥ ३ ॥

राल़ा कराल़ा झाल़ा अताल़ा विछूटै बाण ।
तइ खेत्र पाल़ा मंडे वेताल़ा तमास ॥

मदाला़ दंताला़ काल़ नेजाला़ सुंडाला़ माथै ।
वाघ चाला़ कीता़ घालो आछटै बाणास ॥ ४ ॥

सीधा नाद रोड़े धूंस घमोड़े त्रिविध सेना ।
धजां गजां हिया होड़े गोड़े शूर धीर ॥
सात्रवां विछोड़े कंध अरोड़े दूसरो सींघ ।
जंगी होदां होड़े मोड़े छाकियां जंभीर ॥ ५ ॥

प्रेत भूतां वाज डाक हाक दूतां काल़ पीरां ।
तावूतां सतारे हल्ले हाहुतां तमांम ॥
कटारां खंजरां छुरां कैमरां दूधारां कूंतां ।
सूर धीरां राजपूतां घुमायो संग्राम ॥ ६ ॥

रथां परी जुथां माल़ अवरी समत्थां रोल़े ।
लूथ बूथां हुवे ईस मत्थां सूर लेण ॥
भारतां राखवा कत्थां पत्थां जेम वाघ भूरो ।
श्री हथां आछटै खाग दूजौ चंद्रसैण ॥ ७ ॥

गल़ां गूध भखै गीध उडे के अंत्राल़ां ग्रहे ।
कराल़ां वराल़ां झाला़ सेलाल़ां करद्द ॥
तूटै करमाला़ भ्रलै काल़ां आग झाल़ां तेम ।
दंताला़ तमाला़ खावै मदाला़ दुरद्द ॥ ८ ॥

भड़क्कै दुआसां सेल तमासा संपेखै भाण ।
अच्छरां हुलासां हास नारद्दां उमास ॥

राजरों भरोसौ जिसो जाणता गरीठ रासा ।
उभै पाशा वगां ताशा तेलियौ आकाश ॥ ६ ॥

ऊघड़ी जरद्दां कड़ी खड़ी चंडी खेल ईखे ।
रथा चढ़ी झड़ी झड़ी वरे सूरां रंभ ॥
साकड़ी वणंतां घड़ी वांकड़ी वजावे सार ।
खलां वड़ी वड़ी कीधी झाले अड़ी खंभ ॥१०॥

ताजे स्रोण झलै चंडी छाजे आसमान तेम ।
जाजे हेत वारंगना वरे सूरां जाम ॥
ओट पा जलूसखाना गाजे रायसींघ ऊभौ ।
देखे जोम भाजै अरी अद्राजे दमाम ॥११॥

लगै लौह अंगे तूर मरेठां जमी ते लोटे ।
ढलक्कै करीते रेजा लाल नेजा ढाल ॥
आपपाण हींते रासो खलां दलां घाय ऊभौ ।
खत्री जुध वीते आयौ अठी तें खुसाल ॥१२॥

पूर श्रोण धारां चंडी आमखां अहार पंखां ।
तइ जै जै कार जंपै सादड़ी तखत्त ॥
लागूवां हजारां भांज आवियौ धगारां लागो ।
वाजता नगारां रासो राण रै वखत्त ॥१३॥

(रचियता:- अज्ञात)

टिप्पणी:- यह झाला राज कीर्ति सिंह का पुत्र था । इसने हींता स्थान पर मरहठों से युद्ध कर अच्छी वीरता दिखाई, जिसका इस गीत में वर्णन है ॥

भावार्थः— हे रायसिंह ! तू अपनी अश्वारोही सेना लेकर बड़े स्वाभिमान के साथ युद्ध में खुले स्थान पर प्रविष्ठ हुआ। नभ-मंडल को अपनी भुजाओं पर स्थित रख सकने योग्य प्रचंड भुजाओं के सहारे शत्रु के सम्मुख अपना झंडा ऊँचा किया। उस समय शंकर का वाहन वृषभ बोलने लगा, योगिनियाँ, भूत, प्रेत आदि २ अपने निवास पर युद्धारंभ सुनकर प्रसन्न होने लगे।

हे वीर ! तेरे अविराम तलवार के प्रहार को देखकर कालिका एवं प्रेत,मांस एवं रक्त के लिये, तुरंत रण-भूमि में उपस्थित हुए। इधर सतारे का स्वामी आठ हजार सेना लेकर रणभूमि में आया।

हे झाला ! दूध के दांत अभी तक नहीं गिरे हों ऐसी सुन्दरता से तू देदीप्यमान हो रहा है। ऐसे हे नवयुवक वीर ! दक्षिणियों की सेना की तलवार और भालों को पकड़ कर, तूने हाथियों को नष्ट करने हेतु भयंकर युद्ध आरंभ किया। भयंकर अग्नि की ज्वाला के समान बाणों की बौछार युद्ध भूमि में होने लगी। उस समय क्षेत्रपाल एवं भूत प्रेत आदि युद्ध को देखने लगे। हे कीर्ति सिंह के पुत्र ! तू मदोन्मत्त श्याम हाथी पर लहराते हुए झंडों पर सिंह की भाँति तलवार से आक्रमण करने लगा।

हे वीर ! तू भिन्न २ प्रकार के शृंगी नाद और नगारे बजवाता हुआ, भालों के वार से झंडों सहित हाथियों को धराशाई करने लगा। शत्रुओं के शरीर से उनके शीश इस प्रकार नीचे गिराने लगा, मानो सिंह हाथियों के सिर को गिरा रहा हो। बड़े बड़े गजारोही योद्धाओं के बख्तर (लोहे की जंजीरों से बना हुआ योद्धाओं का वेष) की जंजीरें तथा हाथियों के होदों (हाथी पर कसने की विशेष प्रकार की काठी) के टुकड़े २ करने लगा॥

युद्धारंभ के समय यमदूत जैसे भयंकर मुगलों के वीर, भूत और प्रेत इत्यादि रण भूमि में उपस्थित होने लगे। सतारे का स्वामी तावूत

निकलते समय जो शोर होता है उसी प्रकार के शब्द से युद्ध भूमि में सेना सहित करने लगा। क्षत्रियों ने उनके साथ कटारी, खंजर, दुधारे तथा धनुष आदि अनेक प्रकार के शस्त्रों द्वारा विपक्षियों से युद्ध करने लगे ॥

अविवाहित अप्सराओं का समूह रथ में बैठ कर योग्य यौद्धाओं के कंठ में वरमाला धारण कराने हेतु उपस्थित हुआ। उस समय वीरों का वरण करने हेतु अपने समूह में ही वे झगड़ने लगीं। हे दूसरे चंद्रसेन और अर्जुन के समान वीर, इस भारत में यह उक्ति सत्य करने के लिये तू सिंह की भाँति आक्रमण करता हुआ शत्रु सेना का नाश करने लगा।

इस युद्ध भूमि में सियाल मांस भक्षण करती और गिद्ध आंतों के के टुकड़े लेकर इधर उधर आकाश में उड़ते हैं। शूरवीर अपने भालों को शत्रुओं के रक्त से रंजित करने लगे। इसी प्रकार शूरवीर झाला द्वारा किये हुए युद्ध में, मदोन्मत्त हाथियों पर तलवार के प्रहार होने लगे। जिससे मदोन्मत्त हाथी रण-भूमि में धराशाई होने लगे ॥

दोनों ओर की सेना के भाले चम चमाने लगे। इस दृश्य को सूर्य देखने लगा, अप्सराएँ मन ही मन हर्षित हुईं तथा नारद मुनि खिल-खिलाकर हँसने लगे। हे झाला ! जिस प्रकार का तेरा भयंकर युद्ध करने का निश्चय था, उसी प्रकार से भयंकर युद्ध वाद्य बजवा कर तू ने अपनी, आकाश में उठ सकने वाली भुजाओं से युद्ध किया।

भीरु सैनिकों की जिव्हा भय से शुष्क होने लगी और एकाएक चौंक उठे। रण में डंकों की चोट से नगारे भयंकर शब्द करने लगे और वीर अपने नेत्रों में क्रोध की ज्वाला भर कर शत्रु सेना को नष्ट करने लगे।

यौद्धागण हुँकार करते हुए शत्रु-सेना पर तलवार के वार कर, उसे नष्ट करने लगे।

परस्पर के प्रहार से यौद्धाओं के लोहे के बख्तरों की जंजीरें टूटने लगीं। उस समय वीरों का वरण करने करने हेतु अप्सराएँ रथ में चल कर युद्ध भूमि में आने लगीं। हे वीर रायसिंह ! ऐसी कठिन परिस्थिति में टेढ़ी तलवारों का शब्द करवाता हुआ तू पल-पल में तलवार रूपी ज्वाला की लपट से शत्रुओं को भस्म करने लगा ॥

महा चंडी नवीन रक्त का अपनी इच्छानुसार पान करने लगी। प्रफुल्लित अप्सराएँ प्रतिक्षण शूरवीरों का वर्णन करने लगीं। हे राय-सिंह !! तू उस समय वीर वेष में खड़ा हुआ शत्रुओं की भागती हुई सेना को देखने लगा। नगारों की भयंकर ध्वनि से भयभीत हो शत्रु-सैन्य भागने लगा।

यौद्धाओं के शस्त्राघात से मरहठे शत्रु धरती पर पड़े हुए तड़फने लगे और और उनके रेजे (मोटा कपड़ा) के झंडे हाथियों सहित धरती पर गिरने लगे। हे रायसिंह ! अपने पराक्रम से हींता (स्थान विशेष) की रण भूमि में शत्रुओं का नाश कर विजयोल्लास से तू खड़ा हुआ ॥

तू ने मांसा हारी प्राणियों को मांस से एवं चंडी को रक्त से प्रसन्न किया। जिससे तेरी सादड़ी के सिंहासन के चारों ओर जय जयकार होने लगी। महाराणा के युद्ध के समय सहस्रों शत्रुओं का नाश कर वीरोचित सम्मान प्राप्त किया और पुनः अपने निवास स्थान (सादड़ी) लौट आया ॥

७६ रावत भीमसिंह चुण्डावत, सलूम्बर

गीत—(सु पंख)

हचै खलां थोका भंजे फुणां फेर रा आपाण हूँत,
दाखे जेण वेर रा बाखाण झोका देर।
सही जीत होय राख्यो कुंवेर रा भीमसिंह,
सेर रा कांठला जेम राण रो आसेर ॥ १ ॥

अड़े खेत गनीमां झला रा रूपी आय खगे,
विजु जल़ा दल़ां रा आछटे धके वेर।
थाट पती दो हतेस राखियो मल़ारा थंभ,
नौ हतेस गल़ारा हार ज्यूं उदेनेर ॥ २ ॥

ससक्कै नगार बंध लटक्कै नागरा सीस,
आगरा अंगार तोपां भटक्कै अवाज।
राखियो खंगार दूजा खाग रा पाण सूं रधू,
राण वाल़ौ वाधरा संगार जेम राज ॥ ३ ॥

वरेस तूझ सूं आंट बसे जे छार रै बीच,
समै गज भार रै करैस पूरी साथ।
खरेस सारवे मूंढे काल़ हेत फेट खावे,
हाट करी मार रे मरेस व्यालें हाथ ॥ ४ ॥

चूंडा झोक थारी आडी लीहरी वाखाण चवां,
ताई होय गया तारा दीहरा तावूत।
रधू अबीहरा पणै राणेराव वाल़ो राज,
सीहरा बणाव जेम राखियो सावूत ॥ ५ ॥

(रचियता:- अज्ञात)

भावार्थः- हे कुबेरसिंह के पुत्र भीमसिंह, शत्रुओं की असंख्य सेना से शेषनाग के ऊपर अधिक भार पड़ने के कारण फण झुकने लग

टिप्पणी:— यह रावत कुबेरसिंह का पुत्र था और अपने भतीजे पहाड़सिंह के युद्ध में परलोक वास होने पर सलूम्बर का रावत हुआ। महाराणा अरिसिंह से लगा कर भीमसिंह के युग तक कई युद्धों में भाग लिया। इस गीत में इसका वर्णन है।

गया। किन्तु उस सेना में भी तू सत्य से विचलित नहीं हुआ और साहस से युद्ध करता रहा। जिस प्रकार सिंह के कण्ठ से कोई आभूषण नहीं निकाल सकता, उसी प्रकार तेरे जैसे सिंह के कण्ठ से चित्तौड़ कोई नहीं निकाल सका अर्थात् तू ने सिंह वत् चित्तौड़ की रक्षा की ॥१॥

युद्ध-काल में तू ज्वालारूपी तलवार से शत्रु सेनाओं को नष्ट करने लगा। हे शासन के संचालक, (थाट पति ये राणा के आदेशों को क्रियान्वित करते थे) तू पृथ्वी के ऊपर स्तंभ के समान युद्ध भूमि में अडिग रहा। नौ हाथ लम्बे प्रचण्ड सिंह की भाँति तू ने उदयपुर राज्य की रक्षा की ॥ २ ॥

हे खेंगार जैसे वीर, युद्ध-भूमि में अग्नि उगलने वाली भयंकर तोपों के गोलों के धमाके से शेषनाग का फण कम्पित हो उठा। नगारों वाले बड़े बड़े योद्धा भी युद्ध की भीषणता देखकर हृदय में कम्पित हो उठे। परन्तु तू ने सिंह जिस प्रकार अपने शरीरके शृंगार की रक्षा करता है, उसी प्रकार तूने मेवाड़ राज्य की रक्षा की ॥ ३ ॥

हे वीर, वे योद्धा जो तेरे शत्रुता किये हुए थे। तू ने उनका सर्व-नाश कर दिया। शत्रुओं के अनेक हाथियों को मारते हुए, शत्रु-योद्धाओं को तलवार के घाट उतार दिया। इस प्रकार कितने ही वीरों को वीर गति प्रदान कर अप्सराओं के साथ उनका वरण करा दिया। हे योद्धा, जिस प्रकार हाथियों के शत्रु सिंह से कोई आभूषण हस्तगत करने की चेष्टा में जाय तो उस वीर को मृत्यु से निडर होकर जाना पड़ता है। उसी प्रकार जो भी मेवाड़ राज्य को लेना चाहें उसे पहले निडर होकर तेरे से युद्ध करना पड़ता है ॥ ४ ॥

हे चुण्डा, तू ने तलवार चलाने में अपने अद्वितीय साहस का यश चारों ओर फैला दिया। सूर्य के समान तेरी शक्ति के तेज के सम्मुख शत्रुओं का तेज दिन के नक्षत्र के समान क्षीण दिखाई दिया। तू ने निर्भीक सिंह के समान मेवाड़ राज्य की रक्षा की ॥ ५ ॥

८०. रावत भीमसिंह चुण्डावत सलूम्बर और रावत अर्जुनसिंह चुण्डावत कुरावड़ [1]

गीत (वड़ा साणौर)

हटां चढ़े दरवखाद कटकां मले हरामी,
अणि इक डंका बज वधै ईडू ।
तखत उदिया नयर केम पलटै तिकां,
भीम अरजुन जिकां होय भीडू ॥१॥

साम ध्रम अड़ग रख खेल खित्रवट सवल,
हुआं दध छल दल प्रवल हाको ।
ठाम चत्र कोट अण ठेल किम कर ठले,
करै ज्यां वेल भत्रीज काको ॥२॥

धरा रछपाल कांधाल हरणै धणी,
निमख अजवाल न कलंक नजर नेक ।
तखत राणा सथर राज आवे तिकां,
होवै भेलौ जिकां सलूम्बर हेक ॥३॥

जोरवर थां जिसा हुवै चूण्डा जिकै,
तिके रावत भलां मूछ ताणौ ।
थेट कमसल रतन जाण उथापियौ,
रूक बल थापियौ असल राणौ ॥४॥

(रचयिता:- अज्ञात)

टिप्पणी:-१ यह गीत सलूम्बर के रावत भीमसिंह चुण्डावत और कुरावड़ के के रावत अर्जुनसिंह चुण्डावत की प्रशंसा में है। जिन्होंने वि० सं० १८२६ में माधवजी सिंधिया के उदयपुर घेरा डालने के समय नगर की रक्षा करने में बड़ी तत्परता प्रगट की थी, इस गीत में उसी का वर्णन है ।

भावार्थः- शैतान दक्षिणी हठ पकड़ कर सेना को संगठित कर वजते हुए नक्कारों के साथ तळवार वजाते हुए अपने साथियों सहित आगे वढ़े। किन्तु जहाँ भीमसिंह, अर्जुनसिंह जैसे सहायक हैं, उस उदयपुर के तख्त को कैसे पलटा जा सकता है ? ॥ १ ॥

स्वामी धर्म को अडिग रख क्षात्रवत का खेल खेलने वाले बहादुर सैनिकों की समुद्र के तूफान की तरह हाक़ हुई। लेकिन चित्तौड़ की अडिग रहने वाली गद्दी कैसे डिग सकती है ? जब कि उसके काका-भतीजे दोनों सहायक हैं ॥ २ ॥

मेवाड़ की रक्षा करने वाले ऐसे कांधल के वंशजों से स्वामी हर्षित रहता था। नमक उज्ज्वल करने वाले कलंक रहित उस रावत को स्वामी अच्छी नजर से देखने लगा था। सलूम्बर का स्वामी जहाँ भी सम्मिलित रहता है वहाँ राणा की गई हुई राजगद्दी भी आजाती है और अचल रहती है ॥ ३ ॥

हे चुण्डा ! तेरे जैसे वीर पुरुषों का मूंछों पर ताव देना सराहनीय है जो कि तू ने कुलहीन रतनसिंह को राज गद्दी से हटा कर अपनी तलवार की ताकत से (कुलीन) राणा को स्थापित किया ॥ ४ ॥

८१. रावत अर्जुन सिंह चुण्डावत कुरावड़ १

गीत (वडा साणौर)

फनै हौत ज्यौ उटै अजमाल वे ढक अकल,
लड़ण ते ढक छलां दलां लाडौ।
साजतो नहीं अस पेल अड़सीह ने,
हलमटां सेल ऊठेल हाडौ ॥ १ ॥

राण नजदीक जो हौत खंताल रिण,
पिसणचा न लागत दाव पूरौ।

चूक होतां मोहर रूक हद चाल़ तो,
भूक करतौ घणा बांध भूरौ ॥ २ ॥

जोख में राण हाडौ कुसल़ न जातौ,
चूण्ड आडौ उठै होतो गज चूर ।
निजर नीची त्रिया जेम धरतौ नहीं,
सही मरतौ कना मारतौ सूर ॥ ३ ॥

डंडे हड़ गेहरी तरह रमतो दुजड़,
घण खलां देहरी सगत घटती ।
कलह गहलोत अग्रहोत सुत केहरी,
मोत पण नेहरी लखी मटती ॥ ४ ॥

(रचयिता:—अज्ञात)

भावार्थ:— विचित्र मेधावी, कूटनीतिज्ञ वक्रगति से युद्ध करने वाले सेनानायक अर्जुनसिंह यदि राणा के पास होता तो (उस अश्वारोही) राणा को हाड़ा सीधी तरह नहीं मार लेता ॥ १ ॥

यदि राणा के निकट युद्ध–भूमि में रावत उपस्थित होता तो शत्रुओंका कभी दाव नहीं लगता। राणा पर खड्ग प्रहार होते ही वह (अर्जुन-सिंह) अपनी तलवार चलाकर सिंह के समान वीर शत्रुओं का चूर्ण कर देता ॥ २ ॥

टिप्पणी:— १. यह सलूम्बर रावत केसरीसिंह का छोटा पुत्र था। इसको कुरावड़ की जागीरी महाराणा की ओर से स्वतन्त्र मिली थी। इसने महाराणा अरिसिंह से लगा कर हम्मीरसिंह तक युद्ध और मेवाड़ के झगड़ों में भाग लिया था।

हाथियों को विनष्ट करने वाला चुंडावत अगर महाराणा के आगे होता तो राणा को मार कर हाडा का सकुशल लौटना असंभव होता। दूसरों की भाँति वह (अर्जुनसिंह) जमीन की ओर दृष्टि नहीं करता बल्कि वीरों को मार कर स्वयं (भी वहीं) धराशायी होता॥ ३ ॥

रास (गेहर) के डंडों रूपी तलवारों से युद्ध खेलता जिससे अनेक शत्रुओं की शारीरिक शक्ति नष्ट हो जाती। यदि उस युद्ध में केसरीसिंह का पुत्र अग्रगण्य होता तो राणा के लिये लिखी हुई विधाता की रेखा भी बदली जाती॥ ४ ॥

८२. रावत अर्जुनसिंह चुण्डावत, कुरावड़ [१]

गीत (वड़ा साणौर)

मजा हीण अनभड़ हूंता चल विचल चित मरम,
कजा खत्रवट पड़ी नरम कांटै।
राण अड़सी कहै लज्जा तो सूं रहै,
अजा भुज ओड धर भार आंटै॥ १॥

अटकै खार धर त्रेध डगिया असत,
सार फाटै गयण मेल सांधौ।
धणी दाखै धमल टांड कज इला धुर,
केहरी तणा हव मांड कांधौ॥ २॥

लखां दखणाद रा लगस आया लड़ण,
पयोनिध अगस मुनि जेम पीजे।
साम थापल कहै राख डगती समी,
दुआ कांधल जमी खवौं दीजे॥ ३॥

महत, समरू फिरंग वले दिखणी मथ,
एता भागा समर पेस ऊंडै।
उदैपुर सहित धर सरब राखी अडग,
चमर छत्र तखत री लाज चूंडै ॥ ४ ॥

(रचयिताः— अज्ञात)

भावार्थः— क्षात्रकुल के गौरव का पलड़ा नीचे झुकता देख महाराणा अरिसिंह का चित्त चलायमान हो गया और दूसरे सामंतों से निराश हो अर्जुनसिंह से कहने लगे कि मेवाड़ की स्वतंत्रता का भार तेरे भुजों पर है और मेरी लज्जा की रक्षा करने की शक्ति भी तुझ में ही है ॥ १ ॥

अरिसिंह की गद्दी-नशीनी से ईर्षा वश खिलाफ हो मेवाड़ के लिये खिलाफत करने में अन्य सामंत थे। वे विपक्षियों की ओर चले गये। इस पर अरिसिंह कहता है कि सभी ओर फटे हुए आकाश के थेगली लगाने वाला एक तू ही वीर दिखाई देता है। हे केसरीसिंह के पुत्र. देश भूमि के युद्ध-भार को कंधों पर उठा के गर्जने वाला वृषभ स्वरूप तू ही है ॥ २ ॥

दक्षिणियों की लाखों का सैन्य दल समुद्र युद्ध करने के लिये उमड़ पड़ा। जिसे अगस्त ऋषि की भांति शोषण करने में तू ही समर्थ है। स्वामी नियुक्त करने वाले हे दूसरे कांधल जैसे वीर, मेवाड़-भूमि (मेरे) पैरों नीचे से खिसकने वाली है। जिसे तू ही अपने बाहु-बल से रोक सकता है ॥ ३ ॥

अन्य सामंतों ने खिलाफ होकर समरू अंग्रेज और दक्षिणियों द्वारा मेवाड़ पर आक्रमण करवाया। उस समय उदयपुर (राजधानी) सहित सब भूमि अडिग रख हे चुण्डा। तू ने सिंहासन (गद्दी) और छत्र-चँवर की लज्जा रख दी ॥ ४ ॥

८३. रावत अर्जुन सिंह, चुण्डावत, कुरावड़

गीत

पालट ऊवरां चल चले पोहमी, रघुराखण राज ।
भुजां डंग तो आभ थांभे, अजा अवसर आज ॥ १ ॥
मींढरा नर सकल मुड़िया, धरा धूकल धींग ।
राण छल उधारा रावत, तोल खाग त्रसींग ॥ २ ॥
चित्र गढ ओठम चूंडा, थिया हर वल थेट ।
सही मोखण ग्रहण साहां, मही संकट मेट ॥ ३ ॥
नरखिया भड़ सकल नयणौ, जीयां वेदल जंद ।
हेक तो मुख पर हीमत, नूर केहरी नंद ॥ ४ ॥
खत्री ध्रम रथ कलण खुचियो, असह थाट उचांड ।
धूज धजवड़ तंड धवला मरद जूसर मांड ॥ ५ ॥
राड़ रा लेयण उधारा रावत, केवियां हण कोप ।
विखम खंडां धार वरसै, रघूअ भंडा रोप ॥ ६ ॥
धरा चल चल विखम धमचक, अचल विरद अरोड़ ।
वाढ़ खल रतनेस वीजा, चाढ जल चीत्तौड़ ॥ ७ ॥
उजल ते महाराणा ओठम, पाण पोरसम पाज ।
आजरै अवसाण अरजुन, राज रै भुज राज ॥ ८ ॥

(रचयिता:-नन्दलाल भादा)

भावार्थ:-मेवाड़-भूमि पर शत्रु-सेना के आवागमन से चलायमान हो सभी उमराव (सामंत) महाराणा के प्रतिकूल होगये । हे अर्जुन-सिंह डिगते हुए आकाश को रोकने वाले यह मेवाड़ का राज्य शासन तेरी भुजाओं पर ही अवलंबित है ॥ १ ॥

इस देश के भू भाग को विशेष कलह पीड़ित देख सभी समान प्रतिष्ठित व्यक्ति युद्ध-भूमि से मुड़ गये। महाराणा की सहायता करने वाला साग्रह हाथ में तलवार लिये हुए हे वीर रावत! केवल तू ही दिखाई देता है॥ २॥

प्रारंभ से ही चुण्डावत महाराणा की सेना के अग्रभाग में रह कर चित्तौड़ के लिये निरंतर ढाल स्वरूप बने रहे हैं। मेवाड़ के कष्ट को मिटाने के लिये युद्ध भूमि में बादशाहों को कई बार पकड़ कर छोड़ दिया उसी तरह आज भी इस कथन को सत्य करने वाला तू ही है॥३॥

महाराणा कहते हैं कि हे केसरी सिंह के पुत्र। मैंने सभी शूर वीरों को अपने नेत्रों से देखा है, किंतु उनके हृदय साहस रखने वाले नहीं दिखाई देते, केवल तेरी ही मुख्य कांति दिखाई देती है॥ ४॥

शत्रु-समूह रूपी कीचड़ में क्षात्र धर्म रूपी रथ फँसा हुआ है। हे वीर! घोड़े पर पाखर सजा कर वेग युक्त तलवार से उक्त कीचड़ को उथल पुथल कर! वृषभ स्कंध के सदृश तेरी भुजाओं में युद्ध भार उठाने और वीर हुंकार करते हुए उक्त रथ को बचाने वाला तू ही है॥ ५॥

क्रुद्ध हो कलह उधार ले शत्रुओं को युद्ध भूमि में नष्ट करने वाला तू ही वीर पुरुष है। हे वीर! रणांगण में तू तलवार की धार तथा अन्य शस्त्रों से शत्रुओं के सिर पर वर्षा की बौछार के समान झड़ी लगा कर अपना विजय-ध्वज स्थिर कर देता है॥ ६॥

शत्रुओं के विषम धूम धाम से जमीन चलायमान होने लगी। लेकिन हे वीर। दूसरे रत्नसिंह के समान तू ने अपने कुल की अचल मर्यादा में रह शत्रुओं का विनाश कर चित्तौड़ 'दुर्ग को गौरवान्वित किया॥ ७॥

शत्रु-रूपी समुद्र के उमड़ आने पर तू अपने हाथों की साहस रूपी पाल से दुश्मनों की शक्ति का आड़ बना रहा। हे अर्जुनसिंह, आज के समय में सावधानी का उपयोग कर मेवाड़-देश का राज्य तू ने अपनी भुजाओं पर ही अवलंबित रखा है॥ ८॥

८४. रावत अर्जुनसिंह चुण्डावत, कुरावड़

गीत (बड़ा साणौर)

कहर झड़ै चकमक चखां चांपिया नाग कल,
अरि चड़ै कांपिया गिरां ओखा।
अजन रा ठेट हूँ अलल जुध ऊपरै,
गढ़ पड़ै फेट हू जलल गोखां॥ १ ॥

रोस चूण्डै चखां घटक अहराव रुख,
मटक तज दुसह लै गिरंद मागां।
करे आघा तुरी कहै भागा कटक,
अथागा ढहै गढ़ फटक आगां॥ २ ॥

वीर सीसोद भवकै चसम झालां विख,
चढण अरि तके गिर उवर चहलै।
तेज दाभै तुरंग हकै केहर तणे,
दुरंग भाजै धकै महल दहलै॥ ३ ॥

महल खल जकै सोचे घड़ी घड़ी मह,
तके नहँ करै सुघड़ी घड़ी तीज।
गड़ गड़ी सुथर रावत रढां गहलरी,
वाग ऊपड़ी पड़ी गढ़ां सर बीज॥ ४ ॥

सत्र रयण हरांची चोट सुण खाप संक,
जाय गिर ओट धर न कूं जमिया।
एकल इक चोट अस वाग ऊपाड़तां,
मोट खग नाग दल कोट भमिया॥ ५ ॥

तोड़ खल जमाचो आच खग तोलियां,
ईस गण नाच धम धमाचो ओप।
गजब रौ तमाचौ अजब रौ थको गण,
कना सर त्रकुट वर रमाचो काप॥ ६ ॥

(रचियता:- अज्ञात)

भावार्थ:- हे अर्जुनसिंह, तू युद्धारंभ के समय अश्वारोही होकर रणांगण में प्रविष्ट होता है, उस समय श्याम सर्प क्रोध में जिस प्रकार अपनी पूंछ दबाता है और नेत्रों में क्रोध भरता है उसी प्रकार तू भी अरुण-नैत्र किये हुए, प्रति पक्षियों पर तलवारों की झड़ी लगा देता है। जिस से दोनों ओर की तलवारों के घर्षण से अग्नि की ज्वालाएँ उत्पन्न होने लगती हैं तथा शत्रुगण इस भयंकर स्थिति से त्राण पाने हेतु विजन पर्वत-प्रदेश में भाग जाते हैं। शत्रुओं के दुर्भेद्य दुर्गों को तूँ अपने घोड़ों की टापों से झरोखों सहित विध्वंस कर देता है।

हे चुण्डावत, नेत्रों में क्रोध की ज्वाला भरे हुए सर्प के समान, तुझे देख कर शत्रु भीरु बन कर पर्वतों में आश्रय लेते हैं। जब तू रणांगण में अश्वारोही-होकर युद्ध में प्रवृत होता है तब शत्रुओं की सेना अपने प्राणों की रक्षा करने हेतु यत्रतत्र भाग जाती है। फिर तू निशङ्क होकर घोड़ों के चरणों से दुर्ग के एक एक पत्थर को उखाड़ देता है॥ २॥

हे केसरसिंह के सिशोदिया पुत्र, तेरे नेत्रों में क्रोध रूपी बिजली ज्वालाओं को देख कर, शत्रुओं के हृदय कम्पित हो उठते हैं। जिससे शत्र भाग कर पर्वतों का आश्रय लेने लगते हैं। जिस प्रकार ग्रीष्म में धरती पर चरण जलने के कारण मनुष्यगण जल्दी-जल्दी चरण उठाते है, उसी प्रकार तेरे घोड़ों के चरणों की चपलता है। इस प्रकार की चपल गति वाले घोड़ों को आगे बढ़ाकर तू दुर्ग की दीवारों को ध्वंस करता है। ऐसी भयानक स्थिति में नारियों के हृदय धक् धक् करने लग जाते है॥ ३॥

हे रावत, तेरे भयंकर आक्रमण से क्षण-क्षण विचार करती हुई शत्रुओं की स्त्रियां, प्रतिज्ञा करती हैं जिस क्षण में कि वे आनन्द और शांति से तीज का उत्सव मना सकें। हे रावत, तू युद्ध में उन्मत्त होकर, शत्रुओं के विरुद्ध कूच करने में विलम्ब नहीं कर-अश्वारोही हो घोड़ों की वाग उठाता है। तत् पश्चात् तुरन्त ही शत्रुओं के दुर्ग पर आक्रमण कर देता है। तेरे आक्रमण से दुर्ग की दीवारें इस प्रकार क्षत-विक्षत होती हैं मानो आकाश से बिजली गिरी हो ॥ ४ ॥

हे योद्धा, युद्ध-भूमि में तेरे तलवार की ध्वनि सुनकर शत्रुओं के हृदय कम्पित हो उठते है और पलायन कर विजन पर्वत में आश्रय लेते है। तू अपने घोड़े की वाग उठाये हुए स्वयं ही प्रवेश कर खड्ग-प्रहार से शत्रुओं की हाथियों सहित सेना को छिन्न भिन्न कर देता है तथा दुर्ग को भी ध्वंस कर देता है ॥ ५ ॥

हे रावत, तेरे रणांगण में, शंकर अपने गणों सहित नृत्य करते हैं। जिससे पृथ्वी कम्पित होती है। तेरा क्रोध विलक्षण प्रकार का दृष्टि गोचर होता है तू शत्रुओं को नष्ट करने में यमराज जैसा पराक्रमी है। जिस प्रकार रावण की लंका के दुर्गो पर श्री रामचन्द्रजी का आतंक छाया हुआ था, उसी प्रकार तेरा आतंक शत्रुओं के दुर्ग पर छाया हुआ है ॥६॥

८५. रावत प्रतापसिंह चुण्डावत्त, आमेट

गीत— (सुपंख)

जंगां जांगी वजे जुंझाऊ पनंग सीस धूणै जेम।
अभंगां यानैत आगां जोस में अमाय ॥
धारै खागां उनागां उमंगा आप रंगां धायो।
पमंगा ऊपड़ी वागां ऊ आयौ प्रताप ॥

धूवै झाल् अरावां अचंडां गोल् गैण ढंके।
रणंके न भेरी डंड मंडै चंडी रास॥
खलां गैच भेलिया भीम रा गजां आडा खंडां।
बीजै मान जाडा थंडां भेलिया ब्रहास॥२॥

वहै धारा दुधार करारां बाँण धारा वूढै।
है तुण्ड प्रहारां स्रोण धारां भरे हौद॥
मार-मार ऊचारां अपारां पाड़ क्रोध मचे।
सारधारां रचै राड़ गनीमां सीसोद॥३॥

त्रंबाकां त्रहाकां भालां भचाकां प्रचंडां तुण्डां।
हुवै वीर हाकां डाकां डैरू व्हे हुलास॥
रंगां छोह छाकां जागी बरां प्रेम पागी रंभा।
ऐराकां रचाकां बागी व लागी अ यास॥४॥

वलो वली बीजलां प्रहारां चक्र वेग वाढा।
मैंगलां तड़च्छै सूंडां ओप झुण्डा मक्र॥
रुद्रहारां रचायौ आहरां रैंण ऊभै राही।
तुण्डहरा नाहरां मचायो राह चक्र॥५॥

जगा रा ग्ररहां संग तेड़ीस उचाला जोस।
मरदां अचाला पात्र सेस धू मंडीस॥
भ्रमै जूभ भद्वा सैन सतारा नाथ रा भागा।
पतारा हाथ रा बागा उनागा पांडीस॥६॥

उग्रड़ैत कड़ालां प्रनाला हल्ले खलक्कै सोण वाला।
अटक्कै छड़ालां भुजां गैणांगां अड़ैत ॥
गा गनीम झंका पड़ै सतारै पुहूँती गल्लां।
वांका नेत बाधा खेत फता रै वानैत ॥७॥

चूण्डा वाला सगाला वरदां हद्दां नीर चाड़ै।
रिमा वीर चाला क्रंनता धू धड़ै रहेत ॥
झाड़ै करम्माल तोय त्रांवाला नीसाण झंडा।
सूंडाला ले आयो मेघा डंबरां सहेत ॥८॥

फौजरा हरोलां भाई फताचा हवोला फव्वै।
झूल चंडां रीझाय जनेवां धूवे झाट ॥
दाधा लोहां ताप वीर मार हट्टां थाट दव्वै।
प्रताप प्रवाड़ा थी गरज्जै मेद पाट ॥९॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:-नगारे बजने लगे; युद्ध भूमि में अपराजित योद्धा एकत्रित हुए। जिनके भार से शेष नाग का मस्तक हिलने लगा। खुली तलवार लेकर मन में हर्षित होता हुआ घोड़े की वाग उठाकर (वह) प्रतापसिंह दौड़ आया ॥ १ ॥

तोपों की प्रचंड ज्वाला व गोलों की गर्दी से आकाश छिप गया। युद्ध-भूमि में रण भेरी घुराती हुई चण्डिका ने रास की रचना शुरु की। दूसरे मानसिंह के समान जैसे तू ने सेना के तगड़े समूह में अपने

टिप्पणी:-यह रावत फतहसिंह का पुत्र और मानसिंह का पौत्र था। इसने महाराणा अरिसिंह के समय टोपल मगरी के युद्ध में भाग लिया था ॥

घोड़े को प्रविष्ट किया और शत्रुओं के तिरछे टुकड़े कर (उन्हें) भीम के हाथियों में मिला दिया ॥ २ ॥

द्रुतगति से तलवार, पराक्रम पूर्ण बाणों की बौछार और घोड़ों के मुँह पर लगाई लोहे की सूंडों के प्रहार द्वारा प्रवाहित रक्त धारा से युद्ध-स्थल होजों की तरह भर गया। हे क्रुद्ध सिशोदिया ! मार मार शब्द का उच्चारण करते हुए तू ने अपनी तलवार की चोटों से कायर शत्रुओं को धराशाई कर दिया ॥ ३ ॥

भालों और घोड़ों के लगाई हुई लोहे की सूण्डों के वार से एवं जोशीले नगारों की भयंकर आवाज होने-लगी। आकाश की ओर उठी हुई तलवारों की मुठ भेड़ से आकांश झंकृत हो उठा, जिसे सुन कर बावन वीर हुंक्कार करते हुए डाक डमरु बजाते हुए हर्षित होने लगे और इन जोशीले वीरों को घावों से पूर्ण रूप छके हुए देख कर अप्सराएँ वरण करने के लिये स्नेह से विव्हल हो गई ॥ ४ ॥

लगातार चक्र जैसे वेग युक्त तलवारों से हाथियों पर वार होने लगे; जिससे हाथियों की सूंडे कट कर मच्छियों के झुण्ड की तरह भूमि पर तड़फने लगी। शंकर का हार बनाने के लिये दोनों ओर से खुले मैदान में युद्ध आरम्भ किया। जिससे सिंह रूपी चुण्डा के पौत्र ने राहु के चक्र तुल्य तलवार का वेग आरम्भ किया ॥ ५ ॥

जगतसिंह के विरुदों से सुशोभित रुद्र स्वरूपी जोश में आकर उबलते हुए अपने वीर साथियों सहित युद्ध भूमि में शेष नाग के मस्तक पर (अडिग) पैर जमा दिये। उस युद्ध भूमि में रावत पत्ता की नग्गी तलवार बजने लगी ! जिस से सतारा के स्वामी की लड़ती हुई सेना भ्रम में पड़ कर भागने लगी ॥ ६ ॥

शूर वीरों के हाथ में आकाश की ओर उठाये हुए भालों के घार से, बख्तरों की कड़ियाँ गिरने लगीं और शत्रुओं के घावों से परनालों

की भाँति रक्त धारा वहने लगी। फतहसिंह के पुत्र बाँके वीर ने विजय चिन्ह धारण कर युद्ध किया जिससे शत्रु साहस हीन हो गये। इसकी ख़बर सतारा तक पहुँच गई ॥ ७ ॥

हे रावत! तलवारों द्वारा शत्रु से भिड़ कर, शत्रुओं के नगारे, निशान, हाथी, राजचिन्ह (मेघाडम्बर) आदि तू विजय कर लाया। शत्रुओं के साथ निश्चय रूप से आतंक का व्यवहार करने वाले तू ने चूंडा के सब विरुदों पर वेहद गौरव चढ़ाया ॥ ८ ॥

सेना के अग्रभाग में रुचि रखते हुए विजय प्राप्ति की घोषणा कर दी, और तलवारों की विद्युत वेग के समान झड़ी लगाकर चामुण्डा के गिरोह को प्रसन्न कर दिया; शस्त्रों की जलन से जल कर मरहटों के समूह दब गये और हे प्रतापसिंह युद्ध विजय कर गर्जता हुआ तू मेवाड़ को लौटा ॥ ६ ॥

८६. रावत प्रतापसिंह चुण्डावत-जगावत, आमेट [१]

गीत (बड़ा साणौर)

गजर ऊगतां नेजां फरक्कै गैंवरां,
थोम चख अजर बजराग धवते।
पाधरे वरे जी हूँत हेकाद पंत,
रूक हद भेलिया एम रवते ॥ १ ॥

वाढ़ झड़ बीजलां दोय वे वे वरंग,
चाढ चत्र कोटरी लड़ै चोजां।

टिप्पणी.—१—यह रावत फतहसिंह का पुत्र था। मेवाड़ मे मरहठों द्वारा किये गये उपद्रवों के समय वेरजी—ताक पीर से युद्ध किया। उसकी वीरता इस गीत में उल्लिखित है।

धरा कज आंपणी लड़ै चूण्डौ धणी,

फतारौ सतारां तणी फौजां ॥ २ ॥

आड बारा दिये मार कण ऊपरा,

मर हटां तणी लग सेन माथै।

माई मुरातवौ तैं लियो मनोहर,

सारौ तद वीर रौ हेक साथै ॥ ३ ॥

रसाला, तोप सुखपाल, जाडारसत,

लेण कर कलह कज़ एम लीधा।

दोय हाथी पति खोस दखणादरा,

कैलपुर नाथ रै नज़र कीधा ॥ ४ ॥

(रचयिताः–अज्ञात)

भावार्थः– प्रातः काल होते ही हाथियों पर झंडे लहराने लगे। वीरों के नेत्रों में क्रोधाग्नि सुलग रही थी। जोश पूर्ण वाद्य यंत्रों के साथ सिंधु राग प्रारंभ हुआ। इस प्रकार युद्धारंभ कर रावत ने अपने वीर साथियों एवं अन्य अधिपतियों के साथ बेरजी नामक शत्रु से भिड़ने के लिये युद्ध स्थल में प्रवेश किया ॥ १ ॥

फतहसिंह के पुत्र ने अपनी भूमि के लिये सितारा की फौज से युद्ध छेड़ा और चित्तौड़ दुर्ग पर शत्रुओं की चढ़ाई से उत्साहित यौद्धाओं ने अपनी तलवारों से शत्रुओं के दो दो टुकड़े कर दिये ॥ २ ॥

मरहठों की सेना के (रण बांकुरे) यौद्धाओं के तिरछे घाव लगाकर हे मानसिंह के पौत्र, तूं ने अपने कौशल से विजय प्राप्त कर विरोधी वीरों के राज चिन्हों (लवाजमों) को एक साथ ही लेलिया ॥ ३ ॥

रिसाला, तोपें, तापजाम, रसद, दो गजपति (सामंत) इत्यादि इस युद्ध में दक्षिणियों से छीन कर महाराणा के नजर किये ॥ ४ ॥

८७. रावत प्रताप सिंह चुण्डावत आमेट

गीत (छोटा साणौर)

साखां तिण वार चंद्र धर सूरज ।
घर लाखां श्रद चढै घणा ॥
आखा दखण हूंत आफलियौ ।
तूं ताखा फतमाल तणा ॥ १ ॥

छुण झालां करंगा फूंकारां ।
अजवाला मण वरद अखै ॥
खग चाला तोसूं कुण खेलै ।
पातल काला नाग पखै ॥ २ ॥

कसिया जरद धणी धर कारण ।
जस रसिया रूकां जम राण ॥
खसिया जता आय खल खागां ।
अहि चूण्डै डसिया आराण ॥ ३ ॥

हद सोभा तो चढै मानहर ।
झलंबां कड़ी कड़ी रण झूल ॥
खाधा अरी चमू खल खागां ।
मंत्र जड़ी न लागौ मूल ॥ ४ ॥

(रचयिता:-अज्ञात)

भावार्थः—सर्प के सदृश विप वाले हे फतहसिंह के पुत्र, तू ने दक्षिणियों से युद्ध कर लावा के कुल को गौरवान्वित किया, जिसकी साक्षी पृथ्वी पर सूर्यचंद्र दे रहा है।

हे मणिधर सर्प के सदृश शैली ग्रहण करने वाले, तू कुल को उज्ज्वल करने के लिये सर्प के फण स्वरूपी तलवार की फूंक (पवन गति) से शत्रुओं को नष्ट करता है। काले सर्प के समान हे प्रताप ! तुझ आतंककारी के सामने तलवार से छेड़ छाड़ करने वाला कोई नहीं है। न तेरा कोई सामना ही कर सकता है ॥

हे यमराज का रूप धारण कर तलवार चलाने वाले वीर ! तू तलवार चलाकर विजय यश का इच्छुक रहता है, स्वामी की भूमि की रक्षार्थ बख्तर कसे रहता है और जितने शत्रु सामने आवें उन्हें अपनी सर्पिणी रूपी तलवार से काट कर हे चुण्डा ! तू धराशाई कर देता है ॥

हे मानसिंह के पुत्र ! रणाम्बर (कवचादि की कड़ियों की मिल मिलाहट) से तू सीमा तीत (हद दर्जे का) शोभित हो रहा है। तू ने सरी शत्रु सेना को अपनी सर्प रूपी तलवार से खा डाली। जिसके जड़ी बूटी और मंत्र कुछ नहीं लगे (कोई उपचार नहीं लग सका) ॥

८८. रावत प्रतापसिंह चुण्डावत, आमेट

गीत— (सु पंख)

आछे नेक आंटे गनीमां हू मेलिया निराट ऊखा।
त्राछी खाई रूखां केक झेलिया त्रिताप ॥
ऊली अणी पाछी देखी काथे खाग ऊखेलिया।
पैली अणी माथै काछी भेलिया प्रताप ॥ १ ॥

धूपटै गनीमां धरा गढ़ा व्है न तारा ढोल।
कानां सुणै फता रौ खतारा बोल कैम ॥

सतारा छात रा दलां ऊपरा अयायो सीह।
जोध आयो ऊलका पातरा तारा जेम ॥ २ ॥
मूंछां रा वलाका दीधां सींसोद गनीमां माथै।
धूर हास तमासै मुनिन्द्र रीधा धीर॥
म्यान हूँ उखेलताँई कीधा खाग तेढी मणै।
वैढी मणै मेलताँई कीधा महा धीर ॥ ३ ॥
मेदपाट तणी कूक सांभले विजाई मान।
वान आयो अभूख उपाटां जेण वार॥
मरेटां दने उ भूख करंतो जनेवां मूढै।
एक घात्र रोई टक जनेऊ उतार ॥ ४ ॥
नारा जा आराण झली बीजली सिलाव मेजां।
दुहूँ फौजां उलली दारणा मली दीठ॥
लड़ाका री सोद आडी घोड़े धाड़ि धाख लागी।
राड़ी चौखे सीसोदां गनीमां वागी रीठ ॥ ५ ॥
छरां पूर झाटा माची अकूटां उठावे संभू—
सांची तान लावै रंभा मचावै संगीत॥
रीखाराज वावै वीण प्रवीण हर खारतौ।
गावै सूखा चोसटी अंगोठी रूखां गीत ॥ ६ ॥
काल वाली चरखी असाध झूठौ नाग कीना।
रूठौ जिसौ झूठौ खत्री धखै उरां रीस॥
एक मूठौ महा रथी वाई कराल तो आगि।
सायिकां अरोड़े टूटो आध रती सीस ॥ ७ ॥

सड़फ्फे बीजू जलां हास मोहा त्रड़फ्फै सूर।
सीसहार भड़फ्फै पड़क्खै नथी संभ॥
ग्रीधणी हड़फ्फै पलां सामली हड़फ्फै गूद।
रुण्ड केई अड़फ्फै पड़फ्फै त्ररा रंभ॥ ८॥

के दिया न दीठ बैठ नागड़ै जोगिन्द्र के ही,
सही लंका आधा घड़ै दीठ बंका सूर॥
दवासू पागड़ै लग्गौ नूपरां चलावै दोहूँ—
गहट्टी त्ररा ऊपरां भागड़े परी जे हूर॥ ९॥

गोलां तणी मार लोप तोपरे जंभीरे गयो।
आहड़ेस धारी न को बोलां तणी आप॥
त्रहुँ लोकां मभारै औ सांप पूगी रोला तणी ताप।
ताप गीर हियै पूगी रोलां तणी ताप॥१०॥

उथापै गनीमां थाण सूरां सीम थाप ऊभौ।
जोधपुरा काप ऊभौ भीम भाड़ भोड़॥
अरी खाप धाप ऊभौ करी खांत्रा धाप आघ।
आज री जगाणी खांपां न मावे अरोड़॥११॥

[रचयिताः— बद्री दान खड़िया]

भावार्थः— सैनिकों ने शत्रुओं से अच्छी तरह लोहा लिया—सामना किया। उनके आतंक से कितने ही वीर शत्रुओं ने उदास हो कर छट-पटाते हुए शस्त्र प्रहार सहे और पीछे हटने लगे। इस सेना को पीछी हटती देख आतुरता से तलवार का वार करने के लिये प्रतापसिंह ने अपने घोड़े को शत्रु दल में घुसा दिया॥ १॥

शत्रु अपना अधिकार जमाने के लिये प्रतिदिन ढोल नगारे बजाते रहते हैं लेकिन फतहसिंह का पुत्र इन धोखे बाज शब्दों को कैसे सुन सकता है ? वह क्षुधित वीर सतारा स्वामी की सेना पर आक्रमणार्थ चढ़ आया ॥ २॥

सिशोदिया मूछों के वट लगाता हुआ शत्रु-सेना से भिड़ने लगा,जिसे देख शंकर और नारद हर्षित होने लगे । वह तलवार को म्यान से बाहर निकाल कर और भिड़ने के लिये विचित्र गति से वार करने लगा ॥ ३ ॥

मेवाड़ देश की कष्ट भरी आवाज सुन कर हे दूसरे मानसिंह ! उस समय तू ने अपने वदन पर नूर चढ़ा, क्षुधित हो मरहटों को उस दिन तलवार से चकना चूर कर दिया ॥ ४ ॥

युद्ध में झंडों पर बिजली के सदृश चमकती हुई तलवारों के वार होने लगे और दोनो सेनाओं के उछलते हुए हर्षित वीर भयंकर स्वरूप में दिखने लगे ।

सिशोदिया वीरों की अश्वारोही सेना देख शत्रु दिल में कंपित होने लगे और परस्पर प्रत्यक्ष में तलवारें चलने लगीं ॥ ५ ॥

खड्ग प्रहार से दोनों ओर के धराशाई हुए वीरों के मस्तक शंकर उठाने लगे और अप्सराएँ; योगिनियाँ आनंद प्रद गीत गाने लगीं । इसी तरह रणक्षेत्र में हर्षित हो नारद अपनी वीणा बजाने लगे ॥ ६ ॥

क्रुद्ध सर्प की भाँति, काल चक्र की तरह क्रुद्ध हो कर वीर क्षत्रिय भिड़ने लगा; दबी हुई अग्नि तुल्य शत्रु-समूह को कुरेदने (उकसाने) लगा और उसे तीरों द्वारा घायल कर धराशाई करने लगा ॥ ७ ॥

कितने ही जख्मी वीर रक्त रंजित हो रण-भूमि में पड़े हुए तड़प रहे हैं । कितने ही युद्धासक्त वीर पड़े पड़े परस्पर शत्रुओं को ललकार रहे हैं । शंकर अपनी मुण्डमाल के लिये वीरों के शिर पृथ्वी पर गिरने पूर्व ही झपट कर ले रहे हैं । गिद्धनियाँ, चीलहें, मांस, हड्डियों के

लिये छीना झपटी कर रही हैं। वीरों के कबंध आपस में टकरा कर भूमिसात् होने लगे और अप्सराएँ सैनिकों को वरण करने लगीं ॥ ८ ॥

उन परम सुन्दरी अप्सराओं के सामने ऐसा कोई दिगंबर ऋषि नहीं था, जिसने इन पर दृष्टिपात न किया हो। ऐसी वे अनुपम सुन्दर अप्सराएँ लंका विजयी जैसे वीर बांके यौद्धाओं को देख, उन्हें वरण करने की लालसा से उनकी रकाबों से लिपट कर नूपुर बजाती हुई आपस में झगड़ने लगीं ॥ ९ ॥

वह वीर युद्ध करता हुआ तोपों के गोलों की बौछारों को सहन कर (तोपों की) कतार के पास पहुँच गया। उस वीर एवं साहसी सिशोदिया ने विकट समय को कुछ नहीं मान युद्ध किया। जिसका आतंक सिंधी वेहर जी पर ही नहीं अपितु सारे भू मंडल पर छा गया ॥ १० ॥

वीर प्रतापसिंह के पक्ष के यौद्धा ने राठौड़ भीम तुल्य शत्रुओं से भिड़ कर उनके स्थापित किये हुए थानों को हटा दिया और अपनी सीमा कायम कर शत्रुओं को नष्ट कर अपनी क्षुधा शान्त की किन्तु अरि-गजों को धराशाई करने की लालसा पूरी नहीं हो सकी ॥ ११ ॥

८९. राज कल्याण सिंह झाला, देलवाड़ा [१]

गीत (बड़ा साणोर)

महावीर वीराद प्रमजोत सूरां मलै ।
वार जनू कला मुख नूर वरसै ॥
नार इन्द्र तणी वरमाल घाली न को ।
दध सुता माल वरमाल दरसै ॥ १ ॥

टिप्पणी:—यह झाला राज सज्जा (तृतीय) का पुत्र था। वि० सं० १८४४ में यह राणा भीमसिंह के समय हड़किया खाल के मरहटा युद्ध में वीरता के साथ युद्ध कर शस्त्रों से स्वयं घायल हुआ था ॥

राँण दल़ पलटतां सुथर झालो रहे।
भांण अस रोक आराण भाल़ै॥
राज' रै कंठ भूखाण उण चौसरां।
रंभ चौसरन को सीस गाल़ै॥ २॥

विधाता नाथ वण लेख अवरी वरी।
विया राघव करी अचल़ वातां॥
हार ग्रीवां तणा देख झाला हिये।
हार वारँग लियां रही हातां॥ ३॥

करै मनुहार मुख हूंत इण विध कहै।
आव रथ भीच दीवाण वाल़ा॥
पोहप वर माल घाली न को अपछरा
मोतियां तणी गल़ देखमाल़ा॥ ४॥

(रचयिताः-अज्ञात)

भावार्थः- हे वीर कल्याण सिंह! मरहठों के साथ युद्ध भूमि में अनेकों वीर शिरोमणि युद्ध करते हुए परमात्मा की दिव्य ज्योति में मिल गये। परन्तु उस समय तेरी मुख-कांति कमल पुष्प के समान दृष्टि गोचर हो रही थी; किंतु हे वीर! स्वर्ग की अप्सराएँ तेरे गले में मोतियों की माला देख कर तुझे वरण करने हेतु वरमाला तेरे गले में नहीं डाल सकी॥

हे झाला! महाराणा की सेना के चरण रण भूमि से डिगने लगे, उस समय तू रणस्थल में बड़े साहस से अपने स्थान पर दृढ़ रहा। इस प्रकार के तेरे शौर्य को देख सूर्य अपना रथ रोक युद्ध क्रीड़ा देखने लगा। किंतु तेरे गले में मोतियों की माला देख कर अप्सराएँ वर-मालाएँ नहीं पहना सकीं॥

हे राघव देव के समान वीर ! तू ने राघव देव के रण-कौशल को अमर कर दिया। ज्ञात होता है कि विधाता ने अप्सराओं के भाग्य में विवाह नहीं लिखा था क्यों कि कल्याणसिंह के गले में मोतियों की माला देख अप्सराएँ वरमाला धारण नहीं करा सकीं और वर मालाएँ उनके हाथ में ही रह गईं ॥

अप्सराएँ केवल मात्र अपने मुख से यह शब्द कह कर आग्रह करने लगीं कि "हे कल्याण सिंह ! तू विमान में बैठ कर हमारे साथ विहार कर किंतु कल्याणसिंह के गले में मोतियों की माला देख कर अप्सराएँ विवश हो गईं क्योंकि मोती और अप्सराएँ सहोदर होने के कारण अप्सराएँ उनके साथ विवाह नहीं कर सकती थीं ॥

६०. झाला राज राघव देव (द्वितीय), देलवाड़ा

गीत (वड़ा साणोर)

अचल नव लाख रे जुध देखि धायो अरक।
ईस धायौ लहै सीस अण चूक ॥
धड़चतो घड़ां वेरी हरां न धायो।
राज राघव तणो अघायो रूक ॥१॥

तमासा सिध पईखे समर मार तुण्ड।
उमापत सधप तोड़े कमल आप ॥
वड वड़ां सत्रां अणियाँ सधप विहंडतो।
मान तण तणो खग अधप अण माप ॥२॥

प्रचण्ड थट महारिण पेखे पुरण पतंग।
नायका कवट पूरण धरण नाग ॥
अलवलां सपूरण खलां आरोगतो।
खिवे कड़तलां करां अपूरण खाग ॥३॥

बूकड़ा चटक गूधा गटक लिंये वल ।
सह कटक आचमे गजां सहतो ॥
वधापै जेम दहतो ममंद बाड़ नल ।
वीर खग न धापे रिमा वहतो ॥ ४ ॥

(रचयिताः- अज्ञात)

भावार्थः- हे राघवदेव ! युद्ध भूमि में अडिग रहने वाले नव लक्ष सैनिक वीरों के साथ होने वाले तेरे युद्ध को सूर्य देख कर व शंकर मस्तक पाकर तृप्त हो गये। हे वीर ! शत्रु अंगों को जख्मी करता हुआ तेरा खड्‌ग तृप्त नहीं हुआ।

तेरे युद्ध कोतूहल को नारद व सूर्य देख देख कर और उमापति (शंकर) ने प्रति पक्षियों के मस्तकों को तोड़ते हुए अपनी इच्छा पूर्ण करली। फिर भी हे मानसिंह के पुत्र ! बड़े बड़े विरोधी वीरों पर वार करता हुआ तेरा खड्ग तो तृप्ति रहित ही बना रहा।

तेरे साथ शत्रुओं के विशाल समूह का भयंकर युद्ध अवलोकन करता हुआ और सर्प को धारण करने वाले (शंकर) ने बड़े बड़े योद्धाओं के मस्तक पा कर अपनी क्षुधा शान्त करली। किंतु हे झाला ! तेरे हाथ से विरोधी दलों को नष्ट करते हुए (तेरे) खड्ग के हृदय में शान्ति नहीं हुई।

प्रति पक्षियों के सैनिक वीरों और उनके हाथियों के कलेजों के टुकड़े टुकड़े कर उनके रक्त व मांस का आहार कर तेरे खड्ग ने आचमन कर लिया। फिर भी हे वीर ! विरोधियों को निर्मूल करते हुए तेरे खड्ग के हृदय में ईड़वाग्नि की ज्वाला के सदृश क्षुधा की अशान्ति बढ़ती ही रही है।

६१. राजा वहादुर गोपाल दास चुण्डावत, करेड़ा

गीत (छोटा साणौर)

राखि गोपाळ मरण प्रन रूड़ा,
लेख अचड़ चहुँ जुगां लगे ॥
पट हथ कमळ भुजे प्रतमाळी।
परठ पाण आछटी पगे ॥ १ ॥

सुर नर अचरजियां सीसोदा!
थोबे अरक रथ थकत थियो ॥
कर कुंजर सिर रोप कटारी।
क्रमै कटारी मार कियो ॥ २ ॥

साच कळह दाखे दूदा सुत–
मने साच सुर भुयण मझार ॥
थळ त्रिजड़ी कुंभाथळ हाथे,
ठेली चळणौ थाट विदार ॥ ३ ॥

कळह लंक–कुरखेत पछै कर।
दो मझि धिन गोपाळ दुआढ ॥
मदझर सिर कर मांडे मारी,
जसारा तड़ियळ जमदाढ ॥ ४ ॥

टिप्पणी:–यह देवगढ़ के रावत जसवंत सिंह का छोटा पुत्र था, महाराणा अरिसिंह के समय रावत जसवंतसिंह जयपुर जाकर रहने लगा था। वहाँ उसको किसी वीरता के उच्च कार्य के कारण राजा वहादुर की उपाधि मिली। इसके वंशधर करेड़े की जागीर में है। उपरोक्त गीत में इसके द्वारा कटारी से हाथी मारने का वर्णन है।

कसन नहँ लगो सिंध कलोधर।
अहवि घाव मनाड़ि ईसो॥
गड़ो उपाड़ न आवे गेमर।
दूजा ही गोपाल दिसो॥ ५ ॥

(रचयिताः—अज्ञात)

भावार्थः— हे गोपाल दास ! तुमने मृत्यु प्राप्ति के लिये अच्छा शुभ दिन प्राप्त किया। तुमने अपने भुज बल से हाथी के मस्तक पर कटारी का वार करके इस बात को युगों तक अमर करदी॥ १॥

हे सिसोदिया ! तू ने अपने बाहू बल से हाथी के मस्तक पर कटारी का प्रवेश किया; तेरी इस वीरता को देखने के लिये आकाश में सूर्य अपना रथ रोक कर देखने लगा और देवता गण तथा मनुष्य आश्चर्य करने लगे॥ २॥

हे दूदा के वंशज ! अब तक इस प्रकार के युद्ध की केवल कहावत ही चलती थी पर तुमने इसे पृथ्वीपर यथार्थ कर दिखाई और तू ने अपने छल से हाथी के दुर्दम कुम्भस्थल को कटारी की पैनी नौक से विदीर्ण किया॥ ३॥

हे गोपालदास ! लंका तथा कुरुक्षेत्र के बाद इनसे भी महत्वपूर्ण कार्य तू ने कर दिया। हे जसवंत सिंह। मदोन्मत्त हाथी के सिर पर बिजली के समान कटारी का वार कर तू ने उनसे भी अधिक यशस्वी कार्य किया॥ ४॥

हे गोपालदास ! तू ने अपने सिंह के कुल को धारण कर उस पर कलंक नहीं लगने दिया; तथा ऐसे भयंकर युद्धों में इस प्रकार आघातों से तू ने यह भी समझा दिया कि फिर कभी वह हाथी सिर उठा कर तेरे व किसी के भी सामने नहीं आ सके॥ ५॥

६२. राजा बहादुर गोपाल दास चुण्डायत, करेड़ा १

गीत (छोटा साणोर)

चढ़ियौ जस–कलस आदि लग चूण्डा ।
पै गज घाट गिलण गोपाल ॥
दाणव, देव, मानव कोय दाखो ।
पग सूं गज हिण तो प्रित माल ॥१॥

होयतां कलह चार जुग हुआ ।
असी अचड़ नहँ कीध अडूर ॥
सु जड़ी दूदा सुत जिम पग सूं ।
सिंधुर हयो न किण ही सूर ॥२॥

राघव पछै चूंड हर राखी ।
इवड़ी अचड़ जुगां अनिमंध ॥
मारियौ चलण कटारी मांडे ।
मुड़ियौ बल छंडे मद गंध ॥३॥

करगे अ वसि होये वसि कीधी ।
गज दल घाव वही गज घाव ॥
पग गोपाल जड़ाली परठै ।
पड़ियौ हसती मरण परि जाव ॥४॥

(रचयिता:–अज्ञात)

भावार्थ:– हे चुण्डावत गोपालसिंह ! तू ने पैर से कटारी चलाकर हाथी मार किया । जिससे तेरे यश ने पूर्वजों के यश पर कलश का स्थान ग्रहण किया । देवता और राक्षसों ने कटारी पैर में पकड़ कर हाथी को मारने के लिये नहीं चलाई ॥

युद्ध होते हुए चार युग वीत गये किंतु ऐसी स्थिर (अमर) रहने वाली वीरता किन्ही अन्य वीरों ने नहीं की। दूदा के पुत्र की भाँति पैर द्वारा कटारी से हाथी को किसी योद्धा ने नहीं मारा ॥

राघव देव के पश्चात् युगों तक प्रचलित रहने जैसी वीरता चुण्डा के पौत्र ने ही की। उसके पैर की कटारी के वार से रक्त रंजित हाथी साहस हीन हो गिर पड़ा ॥

हाथ से न चला कर भी हाथ ही से चलाई गई हो इस प्रकार कुशलता से वे गोपाल सिंह ! तू ने पैर से कटरी का वार कर हाथी को गिरा दिया ॥

६३. राव सवाई केशवदास परमार, विजोलियां

गीत—(सु पंख)

जलो मेल्हिया भड़ज्जां भड़ां करे हलो महा जोध,
टलो दे दोखियां सीस वजे वीर तास।
भूपती देस रा सारा पर देसी भाखै भलो,
दूठ खागां पाण कल्लो लीधो केसोदास ॥१॥

धुवे नाल अरावां चरक्खां वोम गोम धूजे,
जंगां जेत वारां सदा करे खलां जेर।
नेत धंध गाढे राव अरीचो गमायो नाम,
असी रीत तेगां जोर जमायो आसेर ॥२॥

टिप्पणी:-१-राव केशवदास, परमार राव शुभ करण का पुत्र था। मेवाड़ के महाराणाओं की ओर से दक्षिण में शाही सेना के पक्ष में इसने युद्ध किया और अपनी बहादुरी का परिचय दिया।

खुले हास नारदां तमासा भाण रथां खंचे,
तड़च्छै सतारा दलां हाकलैं तुरंग।
टंकारां धानंखां वजे सत्रां घड़ां करे टूका,
दूजे मान लीधौ सकां गैज़्ह दुरंग ॥३॥
सोभाग सुजाव चाढ पुंआर उदार सोभा,
गोखां हेट लागा मद्दां करीजे अग्राज।
सारा छत्र धार्यां राजा राण दीधी सुरां,
राजोई आथाण भूरा क्रोड़ जुगां राज ॥४॥
(रचयिता:–अज्ञात)

भावार्थ:- हे केशवदास, तूने तेरी सेनाओं का कुशलता से संगठन कर शत्रु-पक्ष के अनेक योद्धाओं को परास्त कर दिया। तूने अश्वारोही होकर रणभेरी बजाई और भयंकर युद्ध किया। मानो तू साक्षात काल के समान ही शत्रुओं का संहार कर रहा था। इस प्रकार तूने दुर्ग पर अधिकार प्राप्त कर लिया। जिससे तेरा यश देश विदेशों में फैल गया ॥ १ ॥

तोप के चरक (तोपों से शत्रु सेना पर प्रहार करते समय निशाना बांधने का एक यंत्र विशेष जिससे तोप इधर उधर ऊपर नीचे फिराई जाती है) पर तोप को चढ़ाकर; उससे गोले छोड़ने से एवं बन्दूकों के भीषण शब्द से आकाश और धरती कम्पित होने लगी। हे यौद्धा ! तूने जब २ युद्ध किया तब शत्रुओं को आक्रमण के पूर्व ही भयभीत कर दिया इस प्रकार तूने शत्रुपक्ष के गौरवांवित नाम को अपनी विजय से तथा विजय चिन्ह बांध कर इस प्रकार तलवार के बल से नष्ट कर दिया अपने दुर्ग पर बड़ी कुशलता से अधिकार प्राप्त किया ॥ २ ॥

हे वीर, तेरे इस भयंकर युद्ध को देखने के लिये सूर्य ने अपना रथ रोक लिया और नारद को हँसी छूट गई। उस समय अश्वारोही

होकर सता की सेना पर तूने आक्रमण किया। जिससे सैनिक वीर धराशायी होकर, छटपटाने लगे। हे मानसिंह के समान वीर, तू ने गज-समूह पर आक्रमण कर दुर्ग पर आधिपत्य स्थापित कर दिया ॥ ३ ॥

हे परमार सौभाग्यसिंह के पुत्र, तेरी रणविजय की कीर्ति देश देशान्तरों में व्याप्त होगई। तेरे राज प्रसादों के आंगन में हाथी गर्जना कर विजयनाद करने लगे। इस प्रकार की विजय से अन्य राजाओं तथा महाराणाओं ने तुझे राजा' की उपाधि से विभूषित किया हो। हे परमार तू इस उपाधि से विभूषित रह कर चिरायु हो ॥ ४ ॥

९४. रावत अजीतसिंह सारंगदेवोत, कानौड़[1]

गीत (बड़ां साणौर)

भरल़ तेज उडगाण अणी विकटां भल़क।
पांण धण बांण अत जेहर पायो ॥
वहे दइवाण रौ धांस जवनां बीच।
अर्‌यां सर जांण वीजाण आयो ॥ १ ॥

जभ्भक अहराव फुण हूंत भाल़ां अजर।
क्रोधवँत जटाधर नेत केहो ॥
प्रबल़ भुज धारियां प्रसण हुँत ऊपरा।
अजा रो कूंत जमराण एहो ॥ २ ॥

---

[1] टिप्पणी-यह रावत जालिमसिंह का पुत्र था और महाराणा भीमसिंह के समय वि० सं० १८५६ में जालिमसिंह झाला ने अंबाजी इंगलिया के भाई बालेराव को महाराणा की कैद से छुड़ाने के लिये झाला जलिमसिंह (कोटा) ने चढाई की। चेजा की घाटी में महाराणा और जालिमसिंह झाला की सेना का मुकाबिला हुआ जिस में रावत अजीतसिंह घायल हुआ।

बांण पाराथतणौं जांण वीरोध रो ।
विखम थट रोद रोकियां बांसो ॥
जवर भुजधारियां हरण वल जोध रो ।
धमक भुज धारियां अरुण धांसो ॥ ३ ॥

जगाहर हूंत धक जांण वी जांण रो !
घाट रैं समी कुण वाथ घालैं ॥
राखणौं धरा रछपाल दीवाण रे ।
सेल अरियाण रैं हियै सालैं ॥ ४ ॥

(रचयिता –अज्ञात)

भावार्थः– शत्रुओं की सेना में तेजी से प्रखर प्रहार करने वाले भाले को बनाते समय उस की नोक विष से बुझा दी थी। हे सारंग देव ! तेरा भाला मुगल शत्रुओं पर बिजली के समान चलता है।

क्रुद्ध सर्प के मुँह की विष युक्त फुङ्कार के समान और शंकर के तीसरे नेत्र के समान हे अजीतसिंह ! तेरी शक्तिशाली भुजाओं में लिया हुआ भाला यमराज के समान शत्रुओं पर चलने वाला है।

अर्जुन के बाण के समान विरोध बढ़ाने वाला और मुगलों के समूह का पीछा करने वाला तथा हे हनुमान के समान वीर सिसोदिया ! तेरे हाथ में यह रक्त-रंजित भाला शोभा देता है।

हे जगतसिंह के पौत्र ! तेरा भाला शत्रुओं पर आक्रमण करने में बिजली जैसी शक्ति रखने वाला है; किसका साहस है जो कांटेदार वृक्ष को भुजाओं में कसने की इच्छा करे। महाराणा की पृथ्वी की रक्षा के लिये तू ऐसा गुण युक्त भाला रखता है जो शत्रुओं के हृदय में प्रतिदिन खटकता रहता है।

६५. ठाकुर जैत्रसिंह राठौड़ मेड़तिया, बदनोर[1]

गीत (सुपङ्ख)

प्यालां पीवणां अनोखां दारू लेवणां हमेसां पांगी।
ईवणां सुपातां गुणां खालुवां अरूठ॥
मंडी राड़ नं नीवणा दीवणा पनंग माथै।
दईवान जीवणा आजान आहं दूठ॥१॥

ईस रै उवारी गला आगै ही चित्तोड़ वारे।
साह री सिंधारी फौज पडै ईव साथ॥
राड़ ले उधारी यसो वला कारी जैत राज।
छोला भरां पूर भारी मेड़ता रौ छात॥२॥

सगत्ताणी सांगांणी सतारां हूँत आणी सेना।
तुरक्काणी हिंद वाणी ऊप जैतसींग॥
ईसराणी चढ्यौ पाणी सादांणी मेवाड़ आतां।
काश वाणी हींदवे जंगाणी तोल कीग॥३॥

दावा गिरां हीरदां जे ओ गाजे बंदूकां दारू।
जगायौ कंठीर छाजे तराजे जोधा दार॥
जीवणां गराजे राजे सादै देह भोगे जमी।
अड़स्सी नवाजे राजे ईसरा औतार॥४॥

(रचयिताः–अज्ञात)

---

[1]टिप्पणीः– यह बदनौर के ठाकुर अक्षयसिंह का पुत्र था और महाराणा भीमसिंह के समय सिंधिया के युद्ध के अवसर पर आंबा इंगलिया और लक्वा दादा के बीच मेवाड़ में लड़ाइयाँ हुई उस समय यह लक्वा के पक्ष में रह कर लड़ा था।

भावार्थः— हे जैत्रसिंह ! तू विचित्र प्रकार के शराब के प्याले पीकर
तिदिन यश प्राप्त करता है और कवियों के गुणों का सम्मान
ार शत्रुओं पर रुष्ट होता है। युद्धारंभ के समय भयभीत न होकर तू
ोषनाग के सिर पर अविचल पैर रखने वाला है। हे दीवान ! तू लंबी
ुजाओं वाला वीर दिखाई देता है तू चिरायु रह ॥

चित्तौड़ के पूर्व युद्ध में तुम्हारे पूर्वज ईश्वरदास ने भी बादशाह
ी सेना का संहार कर और स्वयं वीर गति प्राप्त कर अपने यश को
ग्रमर कर दिया था। हे मेड़ता निवासी जैत्रसिंह ! तू युद्ध के लिये पूर्ण
उन्मत्त हो युद्ध मोल लेने वाला शूर वीर है ॥

शक्तावत और सांगावत जब सतारे की सेना को मेवाड़ में लाये उस
समय हे ईश्वरदास के वंशज ! हिंदू और मुसलमान दोनों जातियों
ने मेवाड़ में आने के पश्चात् इस युद्ध में हिन्दू-सूर्य की सहायता के
लिये तुमने अपनी भुजाओं पर युद्ध भार तोल लिया—उठा लिया ॥

हे वीर ! सोये हुए सिंह के जागने के समान और भभकते हुए
बारूद के समान तुम्हारा शौर्य शत्रुओं के हृदय को छेद कर जलाने
वाला है। तेरी गर्जना से और तेरे मेवाड़ में रहने से राणा अरिसिंह
साधारण रूप से राज्य का उपभोग करते हैं। हे वीर तू चिरायु रह ॥

६६. राजराणा अज्जा झाला, सादड़ी [१]

गीत (छोटा साणोर)

पड़िया नेजाल़ विढे पाटरिये,
भागां कोट नहँ क्रम भरिया।
अजमल तणा खड़ग रै ओले,
अधपत मोटा ऊगरिया ॥ १ ॥

सेलां मूंहे राज धर संभ्रम,
लेहे जिते मैंगलां ढाल।
रावल राव आविया राणा,
ओले तूझ तणे अजमाल ॥ २ ॥

झालै भार जुझरौ झाले,
सीस आपाणे सरव सही।
राणा वडै ऊवरे राणा,
रवि रयणां ज्यां वात रही ॥ ३ ॥

(रचयिता:—अज्ञात)

भावार्थ:—युद्ध स्थल में झंडा लहराने वाले बड़े बड़े मुखिया वीर, वीर गति को (मोक्ष को) प्राप्त हुए। गढ़ के टूटने के पश्चात् भी युद्ध स्थल से पैर नहीं हटाने वाले हे अज्जा, तेरी तलवार की आड़ से बड़े बड़े राजा महाराजा वच गये।

हे राज राणा अघरु के पुत्र! तूने अपने भाले से बड़े २ हाथियों को मार गिराया। तेरे साहस की आड़ लेने के लिये बड़े बड़े राजा और राणा तेरी शरण में आ बसे।

हे झाला! तूने युद्ध का सारा भार अपने कंधों पर लेकर सारे आघात सिरपर सहन किये। राणा और बड़े बड़े राजाओं को तूने अपने साहस से वचा लिया। इसका यश सूर्य की गति तक अमर रहेगा।

टिप्पणी:— १. यह महाराणा रायमल के समय में जब हलवद काठियावाड़ से झालों का मेवाड़ में आगमन हुआ, उसमें झाला सरदार अज्जा व सज्जा दोनों प्रमुख व्यक्ति थे। वि० सं० १५८४ में महाराणा सांगा और बाबर के बीच खानवाँ में युद्ध हुआ, उस समय यह महाराणा के घायल होने पर उसका प्रतिनिधि बना युद्ध करता हुआ समर क्षेत्र में मारा गया। इसके वंशज सादड़ी के झाला सरदार हैं।

६७. रावत संग्राम सिंह शक्तावत, कोल्यारी

गीत (वड़ा साणोर)

हले थाट दखणाद लग टल तोपां हसत ।
खसत मद मींढरा नरां खागां ॥
मरट तिणवार राखी वकट मोसरां ।
सुपेती चौसरां तणी सांगा ॥ १ ॥

हाक रण डाक मल वीर मरदां हला ।
सत्र गला विरूथा लूं व सूरा ॥
अगै खग तोलकर तोपथल ऊथला ।
भलो नर वाहियों वोल भूरा ॥ २ ॥

वांकड़ा भड़ा रण सरव पलटे वचन ।
छक केतां घट तन कितां छायो ॥
आहुड़ण खेत असगा सगा ईंढरा ।
आगमण मींढरा न को आयो ॥ ३ ॥

लाल सिं रौव सौभाग सगतां तलक ।
खलक आये नजरां आग खवतो ॥
अन भड़ां भरण इल अछक छक ऊतरण ।
रण मरण सौ गुणै भर खतो ॥ ४ ॥

टिप्पणी:- यह शिवगढ़ (डूंगरपुर) के लालसिंह शक्तावत का पुत्र था । महाराणा भीमसिंह के समय में यह बड़ा साहसी और शक्तिशाली पुरुष था । इसने अपनी ताकत से धावा कर सुदृढ़ गढ़ डोडियों से छीन लिया । इसको महाराणा की ओर से एलची बना कर मरहठों के केम्प में भेजा ।

पख जंग कूंत केतां धरम पालटै ।
हटै विपरूत गत सूं तंग हीयौ ॥
कलह विच मजबूत अडिग रोके कदम ।
राह रजपूत साबूत रहियौ ॥ ५ ॥
(रचयिता:-अज्ञात)

भावार्थ:- दक्षिणी सैन्य समूह के तोपों से बँधे हुए हाथी आपस में टक्कर लगाते हुए चलने लगे । तेरे समान बल-गौरव वाले यौद्धा तलवारें लेकर सामने आकर खिसकने लगे । ऐसे समय हे सांगा ! तूने श्वेत दाढ़ी मूछों का गौरव रख लिया और सामने अड़ा रहा ॥

वीर हुँकार होते ही रणांगण में बावन वीर मिलकर डमरू बजाने लगे । शत्रु सेना के यौद्धा वीरों की ग्रीवा पकड़ कर मल्ल युद्ध करने लगे । हे वीर ! ऐसे यौद्धाओं के सामने तलवार उठाकर उनको उलट पलट कर तूने अपना वचन निभाया ॥ २ ॥

रण भूमि में कितने ही यौद्धाओं का गौरव उनके वचन भंग करने से नष्ट हो गया । कितने ही वीरों का गौरव बढ़ गया । अनेकों संबंधी यौद्धा लड़ने के लिये आकर भी तटस्थ रहे ॥ ३ ॥

हे शक्तावत वंश के सिरमौर ! लालसिंह के पुत्र, उनके सौभाग्य से जिस समय शत्रु तेरी दृष्टि के समाने आ जाते हैं उस समय तेरे नेत्र लाल हो जाते हैं और नेत्रों में अग्नि समा जाती है । अन्य वीर तो सेना में उत्साह हीन होकर अपना गौरव नष्ट करते हैं किंतु हे रावत ! युद्ध में वीर गति प्राप्त करने हेतु तुम्हें सौगुना आवेश आता है ॥ ४ ॥

युद्ध में भालों का वार देख कर कई यौद्धाओं ने अपना क्षात्र धर्म बदल दिया और इस भयंकर युद्ध को देख कर अनेकों यौद्धा मृत्यु के भय से भीरु बन कर स्थल छोड़ चले, किंतु हे वीर ! तू युद्ध स्थल में अडिग रहा और क्षत्रियत्व के मार्ग पर डटा रहा ॥

६८. रावत अजीतसिंह चुण्डावत, आसींद १

गीत—(सु पंख)

ाड़ौ सालूलै अत्थगां नेथ वधै सोवां रायजादा,
सतारा उछाजां जूह उमंड़े सजीत।
घोर वेला प्रथम्मी आणतां सूत हेक घाटै,
आसमांन फाटै थंभ लगायौ अजीत ॥१॥

ंखै चीर लागू छंदा धरती उघाड़ै नाची,
तेण हूँ छतीस सखां दखै त्रामान।
चहू चकां साजै नाद आणतां वानेत चूण्डा,
अधारे भूडंडां ते डगंतो आसमान ॥२॥

फरे गढ़ां दोलाके हबोला लाख फौजां,
लूट अलै कार दुनी करे भू लेणाग।
जमीऐ कांकार ऐ हो मेटतां अजारा जेठी,
गाढ़े राव धारै भुजां टूटतो गेणाग ॥३॥

भूरा हूह विलाती फिरंगा जूह मेल भूरे,
मेला भीम गजां खूनी भमाया असंभ।
भू गोल करंते थाले सतारो उथेल भालां,
खै गोल लसंते हाथ दीघौ अड़ी खंभ ॥४॥

टिप्पणी:—१—यह कुरावड़ के रावत अर्जुनसिंह का छोटा पुत्र था। महाराणा भीमसिंह के समय बढ़ते २ दीवानों में दाखिल हो गया था और रियासत से पृथक जागीरी प्राप्त कर ली थी मरहठों व पिण्डारियों के उपद्रव के समय इसने सैनिक और राजनैतिक सेवाओं में भाग लिया था अंग्रेजों से मेवाड़ की सन् १८१८ में इसी के द्वारा सन्धि हुई थी।

दिसू दसा राव राजा आसांन ठाणियो दिलां,
 माफ देह धारे लाह माणियो अमांन ॥
 सांगा वांर जीतो देस राण रै आणियो सारो,
 जाणियो अवाड़ौ आलमां जहांन ॥५॥

(रचियता:– अज्ञात)

भावार्थः– राव राजाओं और सूवा (प्रान्त) पतियों में परस्पर विशेष कलह बढ़ने लगा। सतारे के उच्च श्रेणी के अविजित वीरों के समूह उमड़ आये। ऐसे भयंकर समय में हे अजीतसिंह! गिरते हुए आकाश के थंभ लगाने जैसी देश की एक साथ व्यवस्था की ॥ १ ॥

चीर (वस्त्र) होते हुए भी नखरे करती हुई नग्न होकर पृथ्वी नृत्य करने लगी (अर्थात् व्यवस्था होते हुए भी पृथ्वी शत्रुओं के अधिकार में जाने लगी) जिसे छतीस वंशी क्षत्रीय, राज्योपभोगी देखने लगे ऐसे समय हे चुण्डावत अपने वीर वेश धारण कर गिरते हुए आकाश को भुजाओं पर झेलने की भांति बजते नक्कारों के बीच अपनी जमीन अधिकार में की ॥ २ ॥

लाखों शत्रुओं से गढ़ घिर गया। प्रलयंकरी ने लूटमार शुरु की तथा पृथ्वी वल से अधिकार में करली। हे अजीतसिंह के पुत्र! ऐसे समय में तूने गिरते हुए नभ मंडल को अपनी भुजाओं से बचा लिया ॥ ३ ॥

हे वीर, तू ने अंग्रेजों के समूह को रक्त रंजित कर भीम के हाथियों में मिला दिया। हे बहादुर! सतारे के स्वामियों का भू अधिकार तूने अपने भाले की शक्ति से हटा दिया और गिरते हुए आकाशी प्रलय से अपने को बचा लिया, ठीक व्यवस्था रखली ॥ ४ ॥

(बढ़ते हुए प्रलय से देश को बचाने से) दसों दिशाओं के राजाओं पर अहसान किया। जिसका उन्होंने हृदय में हर्ष माना और उसका

लाभ उठाया। महाराणा सांगा के अधिकार के समय का राज्य (जो-वाद में शत्रु के कब्जे में होगया था) वापस राणा के अधिकार में करा दिया। जिससे तेरा गौरव सारा संसार जान गया॥ ५॥

६६. रावत हम्मीर सिंह चुण्डावत, भदेसर[1]

गीत (बड़ा साणौर)

अथय सिलह सभ्क हमीरे भड़ां थट पेरिया।
  अस कसे फेरिया गिरां ओड़े॥
    घरर त्रांबाट फजराट यर घेरिया।
      खेरिया जनेवां बाड़ खोड़े॥ १॥

आण पाखर भ्कणण हजारी तड़छिया।
  रोल भुज वड़छिया रचण राड़ा॥
    कर मछर धाड़वी लियण वित कड़छिया।
      धड़चिया चूंड रज भुजां धाड़ा॥ २॥

केमरा भड़ां तन दवा सूं काढ़िया।
  झंडा रिण गाड़िया क्रोध भाले॥
    चंचलां धके खागां भ्कपट चाढ़िया।
      वाढ़िया निखादां भैर वाले॥ ३॥

टिप्पणी:— १. यह रावत भैरोंसिंह का पुत्र था। महाराणा भीमसिंह के समय अमीरखां पठान ने भदेसर छीन कर वहां अपना थाना बिठा दिया, और ठिकाना निम्बाहेड़ा में मिला दिया। तब हम्मीरसिंह ने आकर भदेसर से मुसलमानों का थाना उठा दिया और अपना अधिकार कर लिया। इसके अतिरिक्त अन्य कई युद्धों में उसने भाग लिया था।

ताखड़ा उलट में वासियां लटायत।

छटायत नाहरां भड़ां छोगे ॥

रमें खग झटायत तो। जहीं हमीरा।

भलां जे पटायत पटा भोगे ॥ ४ ॥

(रचयिताः—अज्ञात)

भावार्थः—सर्व प्रथम हम्मीर सिंह ने सैन्य समूह के साथ कवचादि पहन घोड़ों पर चारजामें कसकर पहाड़ के चारों ओर घेरा लगा दिया, और नगारे वजाता हुआ सुबह के समय शत्रुओं को घेर उन पर तलवारों की धारें भोटी करदी ॥ १ ॥

तलवारों के वार से यौद्धाओं के वख्तर व घोड़ों के पाखरों की झन-झनाहट होने लगी। शत्रुओं के तिरछे घाव लगाने लगे। वीरों ने अपनी भुजाए चला कर वरछियों के वार शुरु कर दिये। क्रुद्ध हो लुटेरे मवेशियों को लेने के लिये युद्ध करने लगे। चुंडावत ने उन डाकुओं को अपने प्रहार से जख्मी किया ॥ २ ॥

हम्मीर सिह ने (शत्रु) यौद्धाओं को तीरों द्वारा घायल कर रण-स्थल में अपना विजय का झंडा रोप दिया। भैंरुसिंह के पुत्र ने अश्वा-रोही हो सामने के निषाद वंशियों को तलवार से काट गिराया ॥ ३ ॥

सिंह सी छटा वाले वीर शिरोमणि ने सज कर उलट-आने वाले (उन) लुटेरों को मार दिया। हे हम्मीरसिंह तेरे जैसे खड्ग धारी क्षत्रीय जागीरी का उपभोग करते हैं सो वाजिब ही है ॥ ४ ॥

१००. रवत हम्मीरसिंह चुण्डावत, भदेसर

गीर (सुपङ्क)

झंडा फरक्कै मदालां पीठ आरवां न ओठा झड़ै,

धू पंडां ऊधड़ै वे विरंडां सूर धीर।

रमे दे घुमंडां वीर मार तुंडां रूके राह,
हकै वीच थंडां जटै उडंडां हमीर ॥१॥

रूकां वेग झालरा धू हालरा दे जोग राणी,
घुरे राग झालरा वडाणी वंब घोर।
असा वीर ख्याल रा मंडाणी आप ताप उटै,
तटै रिमा सालरा सदाणी वालो तोर ॥२॥

थावां अंगां वड़ंगां बेछंगा तंगा वीर घाट,
भोम रंगां श्रोण हूँत नारंगां भेवान।
जोध चंगा वारगां सुरंगां बंद वरे जटै,
अभंगा सीसोद भुजां अड़ै आसमांन ॥३॥

मांझी सूर अणी कढां सावलां अखाड़ां मंड,
धणी छलां ओनाड़ा नमाय खलां धींग।
राड़ी गार धाड़ा धाड़ां सउजा सोभाग रीत,
अहाड़ा प्रवाड़ा जीत दूजा अभै सींग ॥४॥

(रचयिता:- फतहराम आशिया)

भावार्थ:- हाथियों की पीठ पर झण्डे लहरा रहे हैं एवं नगारों की भयंकर आवाज हो रही है। युद्ध में अडिग रहने वाले वीरों के सिर धड़ से अलग हो रहे हैं। शूर वीरों की युद्ध क्रीड़ा देखने के लिये सूर्य भगवान ने अपना रथ आकाश मार्ग में स्थिर कर दिया है। ऐसे वीर शत्रुओं के समूह में हम्मीरसिंह ने अपना घोड़ा बढ़ा कर युद्ध आरम्भ किया ॥ १ ॥

अनल ज्वाला की भांति तलवारों के वेग और व्याकुल करने वाले सिंधुराग तथा नगारों का घोर नाद सुन कर योगिनियाँ हर्षित हो सिर

धुनने लगीं। इस प्रकार आतंक पैदा करने वाली वीरों की युद्ध-क्रीड़ा हो रही है। वहाँ शत्रुओं के दिल में तू सदैव खटकता रहता है ॥ २ ॥

इस प्रकार अनेक शूर वीर घावों से परि पूरित होकर निशंक शत्रुओं के टुकड़े कर रहे हैं। पृथ्वी रक्त-प्रवाह से नारंगियाँ रंग की सी हो गई है। जहाँ पर अच्छे योद्धाओं के घावों से टुकड़े हो रहे हैं उन रंगीले वीरों को दुलहा बना कर अप्सराएँ वरण कर रही हैं! ऐसी युद्ध-गति में सिशोदिया ने पूर्ण रूप से अपनी भुजाएँ वार करने के लिये आकाश की ओर उठाई ॥ ३ ॥

तलवारों और भालों की नोंक से युद्धारंभ कर अपने स्वामी की सहायता के लिये प्रमुख वीर ने शूर वीर शत्रुओं को युद्ध में झुका दिया। दूसरे अभयसिंह के समान युद्ध विजय कर हे सिशोदिया संसार में अपना सौभाग्य और उज्जवल यश की वाह वाही फैलादी ॥ ४ ॥

१०१. रावत हम्मीर सिंह चुण्डावत, भदेसर

गीत (सुपंख)

काढ़ी दला सी मंगला प्रले समंदां ऊजली किन्ना।
खलां धू अरुठी जन्त्र गे थंडां खाणास ॥
सरंगा बिछूठी तूटी माघ पव्वे काला सीस।
बीर चूण्डा वाली ज्वाला वीजलां बांणास ॥१॥

जटी ऊघड़ी क चखां अरावां साघात जागे।
संधां ऊनड़ीक पव्वे भूमंडां सामाज ॥
मामलां धड़ीक त्रूठी सतारां गिरद भाथै।
निहंगां तड़ीक जेम तुहाली नाराज ॥ २ ॥

सफ्फै गे जूह लोहां के धरा तड़फ्फै सूर।
बड़फ्फै खेचरां रंभा झडफ्फै बेवाण ॥

महा वेग वहिया गनीम अद्र तणे माथै ।
क्रोधंगी हमीर वाली दामणी केवाण ॥ ३ ॥

नीर वजे आसेर चढ़ायो सालमेस नन्द ।
सोभा चाहूँ फेर चाह्यो प्रवाड़े सनीम ॥
ओझलाणो थारी समसेर छटा तणी आगे ।
मेर फेर फूल पत्रां न आवे गनीम ॥ ४ ॥

(रचयिता:-तेरजराम आशिया)

भावार्थः- हे शूर चुंडा, तूने अपनी तलवार निकाल शत्रुओं एवं उनके हाथियों के समूह पर क्रुद्ध होकर वज्र के समान चलाई । उस समय ऐसा आभास हुआ मानो समुद्र की लहर में प्रलयंकर अग्नि की ज्वाला चमक रही हो या काले पहाड़ पर विजली टूट पड़ी हो ॥ १ ॥

उस समय कड़कती हुई तोपों का शोर (वारूद) ज्वाला ऐसी दीखने लगी, मानो शंकर का समाधि नैत्र खुल गया हों और उन तोपों की भयंकर कड़कड़ाहट से पहाड़ टूक २ हो जमीन पर पड़ने लगे, ऐसे भयंकर युद्ध में एक घड़ी तक सतारा के स्वामी पहाड़ स्वरूपी पर तेरी तलवार बिजली के समान टूट पड़ी ॥ २ ॥

युद्ध-भूमि में हाथी व यौद्धाओं के समूह घावों से परि पूरित हो छटपटानें लगे । उस समय पिशाच योगिनी आदि कड़कती हुई आवाज से बोलने लगीं और अप्सराएँ वीरों को वरने के लिये, एक दूसरी से झपट २ कर विमानों में, वैठाने लगी, उस समय हे हम्मीरसिंह, शत्रु स्वरूपी पहाड़ पर बिजली के समान अत्यन्त वेग से क्रुद्ध होकर तूने तलवार चलाई ॥ ३ ॥

हे सालमसिंह के पुत्र तूने इस युद्ध को विजय कर अपने राज्य शासन एवं दुर्ग का गौरव बढ़ाया। जिसका यश सारी पृथ्वी की सीमा

तक छागया। यह शत्रु स्वरूपी पहाड़ बिजली के सदृश तेरी तलवार से जला हुआ भविष्य के लिये सर सब्ज एवं पत्र पुष्पों से रहित हो गया ॥ ४ ॥

१०२. झाला जालिमसिंह, कोटा [1]

गीत (बड़ा साणोर)

अई अरोड़ा राण झाला अचल अखाड़ा।
जैत खंभ अमोड़ा खला जारै॥
राय हर अजोड़ा केम तो सू रहै।
थाय खोड़ा हरण नाम थारै॥ १॥

टिप्पणी:- १. यह झाला पृथ्वीसिंह का पुत्र था। १६ वीं शताब्दी में राजस्थान के राजपूत सरदारों में यह बड़ा प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित व्यक्ति था। प्रारंभ में यह अपने पिता पृथ्वीसिंह के साथ कोटा महाराव के पास गया और वहाँ रिश्तेदारी के कारण उच्च पद पाया। फिर कोटा में वीरता के अनेक काम किये और जयपुर की सेना को बड़ी पराजय दी। बाद में वहाँ विरोध होने पर यह मेवाड़ में चला आया और महाराणा अरिसिंह ने उसे चीता खेड़ा की जागीर और राज राणा की उपाधि दी वि० सं० १८२५ में माधव राव सिंधिया से मेवाड़ की सेना का क्षिप्रा के तट पर युद्ध हुआ; जिसमें राज राणा जालिमसिंह घायल होकर कैद हो गया। फिर वहाँ से छूट कर कोटा चला गया और पुन: वहाँ का प्रधान मंत्री बना। मेवाड़ के आंतरिक कलह में उसका हाथ रहता था और शक्तावतों व विरोधियों के फिरके का पक्षपाती हुआ। आम्बाजी इंगलिया, के भाई, बालेराव को छुड़ाने के लिये मेवाड़ पर चढ़ आया और महाराणा भीमसिंह से जहाजपुर का इलाका प्राप्त किया। अवसर पर रुपैये पैसे की मदद देता रहा। अंग्रेजों के साथ में कोटा की संधि हुई; जिसमें उसने सदा के लिये प्रधान मंत्रित्व का पद अपने और अपने खानदान के लिये प्राप्त किया। फलः स्वरूप कोटा के महाराव किशोरसिंह से युद्ध हुआ और कालान्तर में झालावाड़ रियासत की बुनियाद पड़ी यह अपने समय का बड़ा राजनीतिज्ञ और वीर था उसके वंशधर झालावाड़ के स्वामी हैं।

ठह लंगर पायं दुसहां करण ठांगला।
रूक दोय आंगला वाढ़ रा है॥
बोलतां नाम थारै मयन्द वांघला।
मृग हुवै पांगला जंगल मा है॥ २॥

दल बहल मेल थानक अडंड डंडिया।
घड़ कुरंभ विहंडिया रूक घावां॥
सांड सबल तुहाल नाम जालम सुपह।
पंथ सारंग वहै अहंड पावां॥ ३॥

साह खग नगी दइवाण पीथल सुतन।
करण धणियां अगा फतै काजा॥
सलामी करै तज माण असगा सगा।
रह लगा पागड़ै आन राजा॥ ४॥

(रचयिताः-अज्ञात)

भावार्थः-हे राय सिंह के पौत्र! तू युद्ध भूमि में ऐसा अडिग चरण रखने वाला है कि भयंकर शत्रु जब तक लौट न जाय तब तक डटा रहता है। तुझ से कौन संधि करके नहीं रहना चाहता क्योंकि हिरण जैसे पशु भी तेरे भय से पंगु हो जाते हैं॥

हे वीर! तू दो अंगुल चौड़ी तलवार की धार से शत्रुओं के घाव लगाता है और पांवों में जंजीर डालकर उन्हें बंदी बना लेता है। छेड़े हुए क्रुद्ध सिंह की भांति हे विक्रम योद्धा! तेरी धाक सुन कर वन में मृग पंगु हो जाते हैं अर्थात् भय से पांव लड़खड़ाने लग जाते हैं॥

हे जालिम सिंह! सेना का संगठन कर तूने कर न देने वालों से भीं कर ले लिया कछवाहों की सेना शस्त्र प्रहार से नष्ट कर दी।

हे वीर ! तेरी इस प्रकार की वीरता से भरी हुई हुंकार सुन कर मार्ग में चलते हुए हिरणों के पांव टूट गये हों वैसे भय कंपित होकर चलने लगते हैं ॥

हे पृथ्वी सिंह के पुत्र ! महाराणा की सेना के अग्रभाग में अपने दृढ़ चरणों पर अडिग रहते हुए स्वामी की विजय प्राप्ति में सहायता करता है। हे योद्धा ! तेरे संबंधी अपने स्वाभिमान को त्याग कर घोड़े का जीण घोड़े पर कसी हुई काठी के ऊपर लगाये हुए कपड़े का छोर पकड़ कर चलते हैं ॥

१०३. राजाधिराज मांधोसिंह, शाहपुरा

गीत (छोटा साणौर)

विखमी गय राग चढ़ण धुर वंबी,
धारे कुल़ बरद धरोसे।
रहवै नसंक धरापत राजन्द,
भारत हर तूझ भरोसे ॥१॥

समर अचाल़ पाँव अंगद सम,
दुसहां उर अणमाव दहै।
मेर सभाव तूझ भुज माधव,
राणो राव नचीत रहै ॥२॥

राखण साथ भड़ां रवताल़ा,
ऊपरट खग चाल़ा आचार।

टिप्पणी:-१-१६ वीं शताब्दी के अन्त में हुए शाहपुरा के राजाधिराज माधों-सिंह की इस गीत में प्रशंसा की गई है।

झाला गिरन्द तुलै भारै कर,
भीम सुतन वाला सह भार ॥३॥

पांणां झाल कुल विरद पुराणा,
कवियणां सारण सह काज।
सुत अमरेस साल सुरताणा,
राणा धर ओठम महाराज ॥४॥

(रचयिता:–अज्ञात)

भावार्थः– अपने कुल को गौरवान्वित करने वाले हे भारतसिंह के पौत्र ! युद्ध स्थल में नगारों के भयंकर घोष और सिन्धु राग के बजते समय मेवाड़ नरेश तेरी बल शाली भुजाओं पर निश्चिन्त रहता है।

हे वीर, युद्ध–भूमि में तू अंगद के समान अडिग चरण वाला है। शत्रुओं के हृदय में तेरी वीरता नहीं समा पाती और अग्नि के समान उनके हृदय में जलन उत्पन्न करती है। हे माधोसिंह, तेरी शक्ति शाली भुजायें सुमेरू पर्वत के समान शोभा देती हैं। ऐसी भुजाओं के बल के सहारे ही मेवाड़ का महाराणा निश्चिन्त रहता है ॥ २ ॥

हे महाराणा के उमराव रावत, तू साथ में सैनिक वीरों का समूह रख कर, युद्ध–भूमि में शत्रुओं पर विलक्षण रीति से खड्ग चलाता है। उसी भांति तू दान वीर भी है, क्यों कि तेरा हृदय दान देने में भी अधिक उदार दृष्टि गोचर होता है। हे लोह वेष (लोहे का बख्तर शरीर पर धारण करने का) धारी, कज्जल गिरि के समान अडिग वीर अपने पिता अमरसिंह और पितामह भीमसिंह के गौरव का भार तेरे कंधों पर सुरक्षित है ॥ ३ ॥

हे अमरसिंह के पुत्र, तू अपने पूर्वजों की ही भांति कवियों की सहायता स्वयं हाथ से करता है और महाराणा की राजधानी की रक्षा करने के कारण दिल्ली पति बादशाह के हृदय में खटकता रहता है ॥४॥

१०४. राजा उम्मेदसिंह, शाहपुरा

गीत (वड़ा साणोर)

सुरिंद नमो आकाय उमेद सिसोदिया ।
भेद खत्र वाटचा विरद भावै ॥
उदैपुर वेल तू वेल आंवेर री ।
अठी तू जोधपुर वेल आवै ॥ १ ॥

सुतन भाराथ जुध अनड़ ऊँचा सिरां ।
लड़ण घड़ कुँवारी जि तू लाडौ ॥
जगा रै ढाल तू ढाल जैसिंघ रै ।
अठी तू ढाल अभमाल आडौ ॥ २ ॥

दुरत गत भुजां दंड धाड़ दुजा दला—
रूक हथ धाड़तो दुहूँ राहै ॥
मुदे मेवाड़ ढूंढाड़ तू हिज मुदे ।
मुदे तू मुरधरा दलां माहे ॥ ३ ॥

साह पुर राज महाराज ऊमेदसी ।
समापण वाज रीझां सको ने ॥
त्रहू ही नरेसां काज सारण तू ही-
त्रिहू देसां तणी लाज तोने ॥ ४ ॥

(रचयिताः—सोभा छोटाला)

भावार्थः- हे उम्मेद सिंह सिशोदिया ! इन्द्र के समान दान की झड़ी लगाने वाले, क्षत्रिय कुल की लज्जा रखने वाले तेरे शोभायमान कुल को नमस्कार है । तू उदयपुर और जयपुर नरेशों को सहायता देता है और जोधपुर के नरेश को भी महायता देने को तैयार रहता है ।

हे भारत सिंह के पुत्र, श्रेष्ठ वीर ! युद्ध में बिना वरी सेना (कुमारी किसी वीर से बिना खंडित की हुई सेना) का तू दुलहा है। महाराणा जगतसिंह और जयपुर महाराजा जयसिंह का तू ढाल के समान रक्षक है और इधर जोधपुर महाराजा अभयसिंह की ढाल की तरह तू रक्षा करने वाला है ॥ २ ॥

हे दूसरे दलेलसिंह ! तीव्र गति से तलवार चलाने की हिंदू और मुसलमान (तेरी) सराहना करते हैं ॥ तू मेवाड़ के नरेश की सेना अग्रगण्य वीर शिरोमणि रहता है उसी तरह ढूंढाड़ और मारवाड़ नरेश की सेना में भी अग्रगण्य रहता है ॥

हे शाहपुरा नरेश उम्मेद सिंह ! हर एक को घोड़े प्रदान करने वाला होने से तीनों देशों की लज्जा का भार तेरे भुजों पर निर्भर है ॥

१०५. उम्मेदसिंह भारतसिंह शाहपुरा

गीत (छोटा साणौर)

ग्रह भालौ ऊठ अमर क्षत्रियाँ गुर, पूठ रहे हय राज पिलाण ॥
लूट धरां अजमेर दुरंग लग, खूट गनीम खगां तज खाण ॥ १ ॥

कुल तो सदा सुपह रै कारण, डारण किस तो रात दने ।
धर जमती जिण दीहक धारण, मारण हारा जगत मने ॥ २ ॥

भूप उमेद अने नृप भारत, सुलह कियां नृप खेद सही ॥
मेदपाट लग आण मनाई, रैण सदा अण भेद रही ॥ ३ ॥

रजपूतां री आथ जकारे, कूंतारी भरलाट करां ॥
सकल कहै जावे सूतांरी, धूतां री किम जायधरां ॥ ४ ॥

(रचियता:- अज्ञात)

भावार्थः– हे क्षत्रियों के गुरु अमरसिंह ! तू प्रतिदिन उठ कर देख कि तेरे सामंत अश्वारोही होकर सदा तेरे साथ फिरते रहते हैं तथा अजमेर दुर्ग तक भूमि को लूटते हुए तलवार के द्वारा शत्रुओं को निर्मूल कर दिये हैं ॥

हे नरेश ! तेरे (स्वामी के) लिये ये योद्धा रा दिन बख्तर कसे हुए रहते हैं और जिन्होंने तेरे राज्य शासन की भूमि को स्थाई कर दी ऐसे वीरों को संसार भी मानता है।

महाराज उम्मेदसिंह व भारतसिंह ! तेरी विपत्ति के समय में भी वीरों ने बख्तर कस कर सब मेवाड़ पर तेरा आतंक फैलाया। यह पृथ्वी सदैव इसी प्रकार से रहती आई है ॥

जिनके पास संपत्ति रूपी वीर क्षत्रिय संचित हों जिनके भाले सदा चमकते रहते हों। उनके लिये संसार कहता है कि यह पृथ्वी सोते रहने वाले भीरु लोगों से भले ही चली जाय किन्तु ऐसे वीरों की जमीन किसी प्रकार नहीं जा सकती।

१०६ कान[1] पंचोली उदयपुर

गीत (बड़ा साणोर)

पटायत लाख रा सहू लागा पगां, राण बीड़ो दियो होय राजी।
मेवातियाँ परै धणी मेवाड़ रे, मोकल्यो कान्ह ने करे साझी ॥१॥

१–यह भटनागर जाति का कायस्थ और छीतर का पुत्र था। महाराणा अमरसिंह दूसरे, संग्रामसिंह दूसरे और जगतसिंह दूसरे के समय तक वि०-सं० अठारहवीं शताब्दी तक विद्यमान रहा। यह दिल्ली के मुगल दरबार में मेवाड़ राज्य की तरफ से वकील बना कर भेजा जाता था। उसने कई सैनिक सेवाओं में भी मेवाड़ की तरफ से भाग लिया था। इसी गीत में महाराणा संग्रामसिंह के समय रणबाजखां मेवाती पर सेना का प्रयाण हुआ, उस समय यह सेनापति बनाया गया था, जिसका इस गीत में वर्णन है।

हलाकर राण री फौज मोहर हुवौ, दोखियां ऊपरै मार दीधी ।
कानै छीतर तण तुरक सह काटिया, कान्ह दीवाण री फतै कीधी ॥१॥

धरा कंपित हुई प्रसण सह धूजिया, क्रिया मेवातियां बंद काला ।
असँख चत्र कोट रा सुणे दल आवतां तरां अजमेर रा जड़्या ताला ॥३॥

आंण दीवांण री फेर आयो अभंग, थापियो पंचोली अडग थाणो ।
प्रथीपत राज सूं घणो सुख पावियो, रीझियो न्याय संग्राम राणो ॥४॥

(रचयिताः–अज्ञात)

भावार्थः– हे कानसिंह ! जिस समय तुझे मेवातियों पर सेना लेकर जाने के लिये बीड़ा (हुक्म) दिया, उस समय तूने खुश होकर बीड़ा (हुक्म स्वीकार किया । लाखों रूपैये की जागीरी भोगने वाले महाराणा के उमरावों ने इन्कार कर सिर झुका दिया । तब मेवाड़ के स्वामी ने मेवातियों पर तुझे सेनापति बना कर भेजा ॥

हे कानसिंह ! तू वीर हाक करता हुआ महाराणा की सेना के आगे हुआ और शत्रुदल को शस्त्र प्रहार से विनष्ट किया तथा महाराणा की विजय पताका फहराई ॥

तेरी इस युद्ध क्रीड़ा से शत्रु भयभीत हो गये, सारी पृथ्वी कंपायमान होने लगी । पश्चात् तूने उन मेवातियों को कब्जे में लिया । चित्तौड़-स्वामी की असंख्य सेना लेकर तुझे आता सुन अजमेर के दरवाजों के ताले बंद करवा दिये ॥

हे वीर पंचोली तूने उन मेवातियों को पराजित कर महाराणा की विजय दुन्दुभी बजवाई और थाणा (फौजी स्टेशन) स्थापित किया । तेरे इस युद्ध कौशल को देख महाराणा सांगा तुझ पर बहुत खुश हुआ ॥

१०७. रावत गुलाबसिंह [१] चुण्डावत साटोला

गीत (बड़ा साणौर)

समर संभाली दगो होतां तरल़ सटारी,
झके लख नजर खल़ थटारी धींग।
वोम छवते रखण तीख कुल़ छटारी,
सर गयंद कटारी जड़ी गुल सींघ॥ १॥

जमी पुड़ धर हरे उडै रूकां जरक,
देख कृपणां थरक पीठ दीधी।
हचण रण सुकर जम दाढ ग्रहियां हरक,
करी वाल़े असुण्ड गरक कीधी॥ २॥

खल़ कटे सहेता जरद खगां खतंग,
खल़क वावां रतंग दरद खाथै।
तठै लड़वा घड़ी खेल रीझव पतंग,
मरद सुजड़ी जड़ी मतंग माथै॥ ३॥

वोम छव कमल़ अतमाल़ कर वाहतो,
गज घड़ां गाहतो खलां गूंडो।
रण कटे गयौ वैकुण्ठ भ्रम राहतो,
चाहतो मुकत सामीप चूण्डो॥ ४॥

(रचयिता:—अज्ञात)

टिप्पणी:— १. यह सलूम्बर के रावत केसरसिंह प्रथम के चतुर्थ पुत्र रोड़सिंह का बेटा था, और मरहठों के किसी झगड़े में यह मारा गया जिसका इस गीत में वर्णन है।

भावार्थ:– हे गुलाबसिंह ! तेरे साथ धोखे से युद्ध आरंभ हुआ, उस समय युद्ध स्थल में अपने सामने लाखों शत्रु योद्धाओं को देखा और बिजली के समान चमकती हुई कटारी को आकाश की ओर उठा तूने हाथी के मस्तक पर वार किया।

उस समय तलवारों के वार से पृथ्वी कंपायमान होने लगी, भीरु लोग भयभीत होकर युद्ध भूमि से पलायन करने लगे। उस समय तूने हर्षित हो युद्ध करने के लिये अपने हाथ में कटारी ली और हाथी के मस्तक पर मारी।

हे वीर ! जिस समय तलवार द्वारा कवच सहित शत्रुओं और हाथियों के घावों से झरने के समान रक्त प्रवाहित होने लगा, उस युद्ध-कौतूहल को देखने के लिये सूर्य भी खुश होकर घड़ी भर ठहर गया और उसी समय तूने हाथी के मस्तक पर कटारी का वार किया।

हे चुण्डा ! तूने आकाश की ओर मस्तक उठा कटारी के वार से गज–सेना को शत्रुओं सहित विनष्ट कर दिया। उस युद्ध में शत्रु दल को जख्मी करता हुआ अपनी इच्छा के अनुकूल (युद्ध) धर्म के रास्ते होता हुआ वैकुण्ठ (स्वर्ग) जाकर मुक्ति प्राप्त की।

१०८ रघुनाथ सिंह राणावत,

गीत (बड़ा साणोर)

भड़ां राण रा अने सुरताण रा भड़ंतां,
कथ आलम कलम ग्रम कहियो।
रुक जुध वाहतो रूप राणावतां,
रुवो साहब तणी जोड़ रहियो ॥ १ ॥

अराबां धोम धुँआ खण उडंतां,
वढण जुध वार देतो समह त्रीख।

वाहतो झेलतो खाग फौजा विचा,
सूर वामी भुजां सांम सारीख ॥ २ ॥

तुरंग रथ थांभ जोत्रे अरक तमासा,
रीझ वाखाणियो दहूँ राहे ।
धड़च खल दलां नर वाह कर धान रो,
मान रौ मले प्रम जोत माहे ॥ ३ ॥

(रचयिता:-अज्ञात)

भावार्थ:-हे रघुनाथसिंह ! जिस समय महाराणा और बादशाह के यौद्धा भिड़ने लगे, उस समय हिन्दू-मुसलमानों ने कहा कि राणावतों की आन रखने वाला वीर रघुनाथसिंह राणावत सचमुच माहव के समान तलवार चलाने लगा है।

तोपों के चलने से धुँए की गर्दी सूर्य तक पहुँचने लगी, उस समय तूने स्वयं आक्रमण सहते हुए शस्त्रों की वर्षा कर दी। हे वीर! तूने उस समय स्वामी का बांया हाथ होकर युद्ध किया ॥

हे मानसिंह के पुत्र, तेरा युद्ध देखने सूर्य ने आकाश में अपना रथ रोक लिया और युद्ध देखने लगा । हिंदू और मुसलमान युद्ध कौशल से प्रसन्न होकर सराहना करने लगे और तू युद्ध करते २ वीर गति प्राप्त कर प्रभू में विलीन हो गया ॥

१०६. राजराणा माधोसिंह झाला, झालरापाटण १

गीत (सु पंख)

फौजां भमाई हजारां थां भौ लगायो अयास फाटे,
धीश सैलां अभागां नमाई जड़ां धीगं।
जालमेस पाई घणी रंग रेलाई जमी,
(जिन) सार धारां ऊजला जमाई माधोसींग ॥१॥

पाई फतै रोले पाँव हूढ़ाड़ दराया पाछा,
डाण आयै ब्रहाई न भूलौं घाव डाव।
ऊआं वरे पत्ता मार भालां भग आपणाई,
सुथाला जणी नूं पाछी ब्रढ़ाई सुजाव ॥२॥

केही मेवासरो करे प्रलै जाग कीधो,
भड़ां घोड़ा थोक रै वीटियो वड़ै भाग।
देर दावा अबीहै डोकरै खलां भोम दाबी,
नदी जावा जिकां नूं छोकरे काले नाग ॥३॥

पढ़्यो वीर पाटीपांव आराण न दिया पाछा,
ताखा लाटी बैठो ही ऊगती मूछां नाण।
बाप खाटी मेदनी ऊजला रुका पाण वापो,
राज दाटी भुजां रे भरोसे झाला राण ॥४॥

(रचयिता:- अज्ञात)

भावार्थ:- हे माधवसिंह, सहस्रो वार शत्रु सेना को रण-भूमि से हटा कर, गिरते हुए आकाश के समान कष्ट में तूने अपनी प्रबल भुजाओं का स्तंभ बना कर कष्ट का निवारण किया। भालों तथा अन्य प्रकार के अनेकों शस्त्रों से शत्रुओं को जड़ सहित नष्ट कर दिया। तेरे पूर्वज जालमसिंह से प्राप्त की हुई भूमि की रक्षा, उज्जल तलवारों का प्रहार शत्रुओं पर कर, की तथा तेरी भूमि शत्रुओं के रक्त से प्रवाहित हुई ॥ १ ॥

टिप्पणी:- यह कोटा के प्रधान मन्त्री राजराणा जालमसिंह झाला का पौत्र और मदनसिंह का पुत्र था। कोटा के हाड़ा नरेश महाराव रामसिंह के समय इसका अधिक विरोध बढ़ गया, तब अंग्रेजों ने कुछ राज्य के परगनों को अलग कर झालरा पाटण की प्रथक रियासत कायम की और माधोसिंह को प्रथम नरेश माना।

हे वीर, युद्ध भूमि से दूढाड़ के स्वामी के पांव पीछे हटा दिये और तू स्वाभिमान से शत्रुओं का नाश करने में रणचातुर्य कभी नहीं भूला। तेरे पूर्वज प्रतापसिंह ने अपने खड्ग-बल से भूमि का आधिपत्य प्राप्त किया था, उस भूमि की तूने यथावत् रक्षा की तथा तूने स्वयं वाहुवल से और भूमि को प्राप्त किया और उस की सुन्दर व्यवस्था की ॥ २ ॥

हे चतुर अश्वारोही और शूरवीर समूह के भाग्यशाली स्वामी, तूने कितने ही डाकुओं का नाश कर दिया। तेरे वृद्ध पूर्वज जालमसिंह और प्रतापसिंह ने जो भूमि पर अधिकार प्राप्त किया था, उस अधिकार को तूने अपने शैशवस्था में भी काले सर्प की भांति सुरक्षित रक्खा ॥ ३ ॥

हे झाला, तूने युद्ध कला पूर्णरूप से प्राप्त की है। अतः तू युद्ध में अडिग चरण रहा। तेरे पूर्वजों द्वारा प्राप्त-भूमि की रक्षा काले सर्प की भांति तूने अडिग रह कर की ॥ ४ ॥

१०४. शेखावत डूंगजी जवाहरजी १

दोहा

सेखावट जलहल समर, फर चल दल फरगांण।
प्रथी सोह कलहल पड़े, भल हल ऊगां भाण ॥

गीत (सु पंख)

खावै आतंकां आगरो खांपां न मावै भमावे खलां,
धावै थावै अजाण लगावै चोड़े धेस।
ऊगां भाण नाग वंसां माथै खगां राज आवे,
दावै लागौ पंजावै फरंगी वाला देस ॥ १ ॥

झंपू मार तेगां तीजी ताली सो कुरंगी कीधी,
जका वाघनूं रंगी प्रजाली भुजां जोम।
मांनूं जाणै तारखी विहंगी काली घड़ा माथैं,
भूप ऊंगो बंधू से फरंगी वाला मोम ॥ २ ॥

पड़ै धोखा दल्ली वंसां कुरंभां चाढ़वा पाणी,
आप मत्तै शेप घू गाडवा जाम आठ।
काकोदरां माथै खगांधीस ज्यूं काढ़वा केवा,
लागो केड़ै वाढ़वा हजारां जंगी लाट ॥ ३ ॥

तूटो व्योम वाट नरा तालका विछूटो तारो,
केतां छूटो प्राण आलक्का ताके कोप रूप।
कहूँ रूद्र मालक्का विहंगां नाथ भूठो कना,
रूठा गोरां माथै प्रलै कालक्का सा रूप ॥ ४ ॥

भल्लों भाई सेवा राले विखेरे सारकी भीच,
सारां सटै मार छावणी सोज सोज।

टिप्पणी:–१–शेखावत २० वीं शताब्दी के प्रसिद्ध राजस्थानी वीर थे। दोनों काका–भतीजा थे। ये अंग्रेजों के इलाकों में धावा मारते थे और धनाढ्यों को लूट कर निर्धनों को बांट देते थे। यही व्रत इन्होंने लिया था। इस कारण अंग्रेजों ने डूंगजी को गिरफ्तार कर आगरा के किले में कैद कर दिया था। इसकी खबर जब जवाहरजी को मिली तो अपने वीरों को साथ ले आगरा पहुँचा और रात्रि के समय आक्रमण कर डूंगजी को छुड़ा लाया। इस गती में चारण कवि ने दोनों वीरों का वर्णन किया है।

राजस्थान में डूंगजी–जवाहरजी' लोकगीतों में बहुत गाये जाते हैं। अंग्रेजों के साथ इनका लोहा लेना बड़ा महत्व रखता है और इसीलिये रात २ भर जाग कर इनको गाया जाता है।

मल्लै थाट हवोला तारखी कालो नाग माथै,
फेरे दोलो भारकी भूरियैं वाली फौज ॥ ५ ॥

लोही खाल पूर पट्टां हजारां वैणनें लागा,
थट्ट रंभा गैण ने हजारां लागा थाट ।
रूकां भाट हजारां वैणने लागा काल रूपी,
लागा ट्रूक व्हेण ने हजारां जंगी लाट ॥ ६ ॥

रैण डंडा-अडंडां गवाने भीच वागराका,
खाग राका भूर डंडा अरिन्दा खाणास ।
पड़ै धाका खंड खंडां फैण नाग राका पीधां,
वाही आगरा का भंडां ऊपरै बाणास ॥ ७ ॥

(रचयिताः–चंडीदानजी महियारिया)

दोहे का भावार्थः– हे शेखावत, तूने अंग्रेजों की सेना से रण-भूमि में युद्ध कर उसे नष्ट कर दिया। जिस का कोलाहल सूर्योदय होते ही सब को सुनाई दिया।

भावार्थः– हे शेखावत, तेरे शरीर में असीम बल और शौर्य है। तेरे शौर्य के समस्त शत्रुगण भौंचक्के हो जाते हैं। इस प्रकार के तेरे शौर्य से आगरा तक के शत्रु भयभीत रहते हैं। उन की असावधानी की अवस्था में, दिन को भी तू निडर होकर, आक्रमण कर देता है। शक्ति शाली सर्प रूपी अंग्रेजों के आधिपत्य में जो स्थान थे, उन पर तू गरूड़ के समान सूर्योदय होते ही, आक्रमण कर बलपूर्वक उनको हस्तगत कर लेता है ॥ १ ॥

अंग्रेजी कम्पनियों के सर्प-रूपी सैनिकों पर गरूड़ के समान हे योद्धा, तूने आक्रमण कर उन के भुजबल के अभिमान को नष्ट कर दिया। हे डूँगरसिंह, इस प्रकार तूने अंग्रेजों की राज्य सीमा को नष्ट कर दिया ॥ २ ॥

हे वीर, तू रणस्थल में दिन के आठों प्रहर तक स्वेच्छा से अडिग चरण रखकर युद्ध करता रहा। जिस से कछवाहा वंश का गौरव बढ़ा और दिल्लीश्वरों में आतंक छा गया। बड़े-बड़े लाट (Lords) उच्चाधिकारी अंग्रेज रूपी सर्पों पर तूने गरुड़ के समान आक्रमण कर उन्हें नष्ट कर दिया ॥३॥

हे डूँगरसिंह, जिस प्रकार आकाश से टूटा हुआ नक्षत्र वेग से आता है, उसी प्रकार तू शत्रु सेना पर तीव्रगति से आक्रमण करने लगा। हे वीर, तू प्रलय-काल में यमराज के समान शत्रु सेना को नष्ट करने लगा अथवा रुद्र के कण्ठ में सर्प माला पर जिस प्रकार गरुड़जी आक्रमण करते हैं उसी प्रकार तूने शत्रु सैन्य पर आक्रमण किया ॥४॥

हे डूँगरसिंह के शेखावत भाई, तूने अंग्रेजों के मुख्य मुख्य योद्धाओं को खोज कर यत्र तत्र कर दिया। छावणी (सेना का विश्राम-स्थल) में स्थित अंग्रेजों की सर्प रूपी सेना के चारों ओर गरुड़ के समान घेरा डाल दिया ॥५॥

हे शेखावत, तू सहस्त्रों शत्रु योद्धाओं पर तलवार चलाने लगा, जिससे रक्त की नदियाँ बहने लगी। सहस्त्रों अंग्रेजी लाटों (Lords) (उच्चअधिकारी) के शरीरों के टुकड़े टुकड़े कर डाले। यह देख कर सहस्त्रों अप्सराओं का समूह आकाश-मार्ग से रण-भूमि में वीरों का वरण करने हेतु उपस्थित हुआ ॥६॥

हे वीर, आगरा दुर्ग के समीप-स्थित स्थान में तूने वीर गीतों का उच्चारण करवा अफीम का पान कर दुर्ग की दीवार की ओर घोड़ों की रासे उठाई। तूने अंग्रेज योद्धाओं को नष्ट कर आगरा के दुर्ग पर लगी हुई अंग्रेज-पताका को तलवार से उड़ा दिया। जिस से अन्य प्रान्तों में तेरी वीरता का प्रभाव फैल गया ॥७॥

१११. राव बहादुर बख्तसिंह चहुआन, बेदला [१]

गीत (वड़ा साणौर)

चसम अंगारे धोम लारे नचे चोसटी,
रिमा दल़ वगारे परा रीजे।
घाव घल़ नगारे वीर किलके घणा,
दुधारे चोल़ रंग उमंग दीजे ॥१॥

खेल आराण रे न मावे खापड़ां,
फेल दिखराण रे फिरंग पाले।
राण रे सहायक सेल समहर रहे,
सेल़ खुर साण रे सुविध़ साले ॥२॥

मारका भीच रजवाट चसम मछर,
सतर धर फजर पड़ दहल़ सारे।
उबर पतसाह खुमांण मुख अगाड़ी,
धजर केहर तणो सुकर धारे ॥३॥

जलाला चाढ़ जुधवेर भांजण जबर,
यल़ा आला लियण विरद अगता।

टिप्पणी:– राव बहादुर बख्तसिंह, सी० आई० ई० बेदला के राव केसरीसिंह का पुत्र था। प्रथम भारतीय स्वातन्त्र्य युद्ध सन् १८५७ ई० में उसने अंग्रेजों की प्राण रक्षा करने में महाराणा की तरफ से सहयोग दिया था। उस समय के मेवाड़ के सरदारों में यह राज भक्त, क्रिया शील और चतुर व्यक्ति समझा जाता था। महाराणा स्वरूपसिंह, शम्भूसिंह, सज्जन सिंह का यह विश्वास पात्र रहा और दो बार रिजेन्सी कौन्सिल का सदस्य भी रहा था।

हेजमा तोड़ चहुँवाण भाला हथां,
विसाला तपो जुग कोड़ वगता ॥४॥
(रचयिताः– रामलाल श्राढ़ा)

भावार्थः–हे वख्तसिंह, जिस समय तेरे नेत्रों में क्रोधाग्नि प्रज्वलित
ती है, उस समय चौंसठ योगनियाँ प्रसन्न होकर, नृत्य करने लग
ती है। ज्योंही नगारे का घोष होता है त्योंही बावन वीर, प्रसन्नता
: किलकारियाँ करते हुए, रण-भूमि में उपस्थित होजाते हैं और तू
स समय अपने दो धार वाले भाले का प्रहार कर रक्त रंजित कर
ता है ॥ १ ॥

हे वीर, जिस समय अंग्रेजों और दक्षिणियों के ऊपर तू युद्ध में
आक्रमण करता है, उस समय तेरे शरीर में शौर्य समा नहीं पाता।
जिस समय तू महाराणा की सहायतार्थ रण-भूमि में भाले को लेकर उप-
स्थित होता है तो बादशाह के मन में वह भाला बड़ा खटकता है ॥ २ ॥

हे शत्रुओं को धराशायी करने वाले वीर तेरे नेत्रों में प्रतिक्षण
क्षत्रियोचित शौर्य समाया रहता है। जिससे इस पृथ्वी पर तेरे शौर्य
का प्रभाव, जहाँ–जहाँ सूर्य की किरणों का प्रकाश फैलता है वहाँ तक
व्याप्त रहता है। हे केशरसिंह के पुत्र, तू सिशोदिया की सेना के अग्र
भाग में तथा बादशाह के सन्मुख, हाथ में सदा भाला लिये
रहता है ॥ ३ ॥

हे वख्तसिंह, तू प्रबल से प्रबल सेना को रण कौशल से परास्त कर
यशको प्राप्त करता है। हे वीर अश्वारोही,शत्रुओं पर भालों को तोड़ने
वाले, दीर्घायु रह ॥ ४ ॥

११२. रावत हिम्मतसिंह शक्तावत, पीपलिया १

गीत (सुपंख)

भड़े सनाहां भड़ालां भांण उगां हे भलांका भाला,
तसां बीजू जलाका सलांका बीज तेम।

मूंछां दे वलाका मदां आया नाग सोवा माथै,
जाया गोकला का तू खजाया वाघ जेम ॥१॥

वेंड़ाकां सामहां सत्रां ताके अछेहरी वागां,
रोला जीत गेहरी खगाटां रमंतेस।
चौंड़े धाड़ै साजै गजां गनीमा तेहरी चोट,
हाकां वागां वरूथां केहरी हमंतेस ॥२॥

अजेशं जेरणा गाढ हणुमान आपाणरा,
वाड खेरे केवाण रा रमा धू वजाक।
भुटै क्रोध मार हट्टां पनांगां डाणां रा भाज,
कंठीर डांखिया जगा राण रा कजाक ॥३॥

प्रवाड़ा अछूता खाटे भारथां अफेर पीठ,
देर रीठ खागां यलां अरिदां दावूत।
आहंसीक सीसोद वरूथा सेर थारै आगै,
सोवा फील फेर मदां न आवे साबूत ॥४॥
(रचयिता –अज्ञात)

भावार्थ:–सूर्य उदय होते ही योद्धा कवच पहन कर हाथ में तलवार व भाले लिये हुए बिजली के सदृश चमके। हे गोकुल सिंह के पुत्र, खिजाये हुए सिंह के समान मूछों के वल लगाता हुआ मरहठों के हाथी रूपी सूवेदारों के ऊपर तूने सिंह के समान आक्रमण किया ॥ १ ॥

टिप्पणी:– शक्तावत हिम्मतसिंह पीपलिया के रावत गोकुलदास का पुत्र था। मेवाड़ के महाराणा स्वरूपसिंह का बड़ा कृपा पात्र था। इस की जागीर मन्दसोर के इलाके से मिली हुली थी, इस कारण मन्दसोर के सूबेदार से इसका झगड़ा होता रहता था, उसका इस गीत में वर्णन है।

अश्वारोही शत्रुओं के सामने अचानक घोड़ों की बाग उठा कर युद्ध करने के लिये तूने तलवारों से 'रास' (रचना) शुरू किया। हे हिम्मतसिंह, वीर हुंकार करते हुए प्रत्यक्ष रूप से शत्रुओं के मस्त हुए हाथियों पर सिंह के समान तूने वार किया ॥ २ ॥

वीर हनुमान के समान साहस धारण कर अविजित शत्रुओं के सिर पर तलवार चला, उन्हें पराजित कर तूने अपनी तलवार तेज हीन (भोंटी) कर दी। (अधिक वार करने से धार का भोंटा होना स्वाभाविक है) महाराणा के विशाल सिंह रूपी हे योद्धा! रणांगण में क्रुद्ध होकर हाथी रूपी मरहठों के गर्व को तूने चूर कर दिया ॥ ३ ॥

युद्ध में पीठ न दिखा, तलवारों की झड़ी लगा, शत्रुओं की भूमि अपने अधिकार में कर (तूने) अनोखा गौरव प्राप्त किया। हे सिशोदिया! शत्रु-सेना के हाथी रूपी सूबेदार तेरे सिंह रूपी साहस के सामने कभी मस्ती पर नहीं आवेंगे ॥ ४ ॥

११३. रावत रणजीतसिंह चुण्डावत, देवगढ़

गीत (सुपंख)

लीधां आसतीक रेणसिंग ऊचारे घड़ा रो लाडो,
    ऊबारो भड़ालां नाम चाढ़ो कुलां अंब।
        गोरांरे अजंटी बौल सांभले वीराण गाढो,
            खंगै ऊभौ मैदपाट आडो जेत खंभ ॥१॥

चगे नथी पावां वीरताई ऊफणी रे चखां,
    वातां हुई गणीरे अभीडा बोलै भौल।
        आवतां फरंगी समै जासती वणीरे एला,
            रहे तेण वेला चूंडो धणीरे हरोल ॥२॥

माथे गत्रां खांपां घावै गवांवै जिहान माथै,
दसु दसा सोभाग छवायो वीरदाण।
जींहान जाणी जोम छते नाहरेस जायो,
अजंठी ऊठायो आयो आपे ही आथाण ॥३॥

गाजे धूंसा राणरा फरंगी लगा दीये गेले,
ओसाणा साधियो टला हमला खेवाड़।
अई चूडा गराणे हींदवां छात आराधियों,
आपरे गले ही भलां वाधियों मेवाड़ ॥४॥

(रचयिताः– कमजी दधिवाड़िया)

भावार्थः– हे रावत रणजीतसिंह! मेवाड़ देश के कार्य-निरीक्षण हेतु अंग्रेजों की ओर से प्रतिनिधि (Resident) नियुक्त होने सम्बन्धी

टिप्पणीः– १. २० वीं शताब्दी के प्रारम्भ में जब महाराणा स्वरूपसिंह का स्वर्गारोहण हुआ और चौदह वर्ष की आयु में शंभूसिंह गद्दी पर बैठे, तब, शासन संचालन के लिये रीजेन्सी कौन्सिल की स्थापना की गई और राज्य का सारा काम पोलिटिकल एजेन्ट (राजनैतिक प्रतिनिधि) ने अपने हाथ में ले लिया और नीमच की छावणी से अपना ऑफिस उदयपुर ले आया। उसने मेवाड़ की शासन-परम्परा 'आण' आदि को हटाने के आदेश जारी कर दिये तब मेवाड़ की समस्त प्रजा इसके विरुद्ध होगई और विरोध स्वरूप उदयपुर में आठ दिन तक हड़ताल रही। पोलिटिकल-एजेन्ट ने प्रजा के साथ जोर और ज्यादती करने का इरादा किया। तब रीजेन्सी कौन्सिल के सदस्य देवगढ के रावत रणजीतसिंह ने उक्त आदेश का सख्त विरोध किया। इस बात का वर्णन तत्कालीन प्रत्यक्ष दर्शी चारण-कवि कमजी दधिवाड़िया ने इस गीत में किया है।

कमजी दधिवाड़िया 'वीर विनोद' के रचयिता महा महोपाध्याय कविराजा श्यामलदासजी के पिता और उस समय के प्रतिष्ठित नागरिक थे।

समाचार तूने सुने और सुनते ही साहस के साथ मेवाड़ के लिये खड्ग पकड़ कर युद्ध-भूमि में विजय स्तंभ की भांति अडिग आ खड़ा हुआ तथा अपने वीरों को कहने लगा। वीरता दिखाते हुए संसार में अपनी कीर्ति अमर करने के लिये क्षत्रिय-धर्म का पालन करो ॥ १ ॥

दृढ़ पैरों पर खड़े होकर तूने अपने विशाल नेत्रों में शौर्य भर ओजस्वी शब्द बोलने प्रारंभ किये। अंग्रेजों के द्वारा मेवाड़ भूमि पर जब अधिक विद्रोह किये जाने लगे, उसी समय हे चुण्डा, तू अपने स्वामी की सेना के अग्रभाग में (हरावल में) स्थित हुआ ॥ २ ॥

हे रावत, नाहरसिंह के पुत्र ! तू शत्रुओं पर तलवारों का प्रहार करने हेतु तत्पर हुआ। तेरे इस शौर्य का यश पृथ्वी की दसों दिशाओं में व्याप्त हो गया। इस प्रकार क्षत्रिय-धर्म का कर्त्तव्य संसार को बता दिया तथा अंग्रेजों के द्वारा प्रतिनिधि (Resident) नियुक्त करने की योजना नष्ट करदी और अपने स्थान पर आ गया। ॥ ३ ॥

हे रणजीतसिंह ! महाराणा की ओर से अंग्रेजों को भालों के प्रहार से परास्त कर बड़ी सावधानी से उनको भगा दिया जिससे चुण्डा-वंशजों का हिन्दुपति महाराणा ने आदर किया और मेवाड़ राज्य के शासन का कार्य तुझे दिया। जो बड़ा सराहनीय रहा ॥ ४ ॥

११४. रावत जोधसिंह चहुआन, कोठारिया

दोहा

जोध भलां ही जनमियो, सत्रुआं (रै) उर साल ॥
रावत सरणै राखियौ, कमंधां तिलक कुशाल ॥ १ ॥

भावार्थः- जोधसिंह ! तेरा जन्म भी भला ही हुआ है। तू शत्रुओं के हृदय में खटकता रहता है। हे रावत ! राठोड़ों के कुल-तिलक कुशालसिंह को तूने ही शरण दी ॥

खग ऊँचै खड़िया सरव, भुज रजवड़िया भार ॥
जड़िया रावत जोध रै। सम वड़िया सरदार ॥ २ ॥

भावार्थ:—क्षत्रिय कुल के गौरव को रखने वाले समस्त क्षत्रिय तलवार उठाये हुए थे और हे जोधसिंह ! जो तेरी ही बराबरी के सरदार थे वे इकट्ठे होकर आये ॥

गीत (बड़ा साणौर)

खगां झाटसमराटलोह लाटभाजण खलां।
तीख खत्रवाट घर वाट तोरा।
जणातो नहीं रजवाट वट जोधड़ा।
गणांता जमी नर बीज गोरा ॥ १ ॥

डाकियां धसल् सर वेल डग डोलड़ा।
पीथहर चोलड़ा अमर पीधा ॥
ढावतां अजू तो वागा सुजस ढोलड़ा।
कोड़ जुग बोलड़ा अमर कीधा ॥ २ ॥

मोखमा सुजन फरगांण लोपे हुकम।
कहै हिंदवाण शाबास काला ॥

टिप्पणी:— यह रावत मोहकमसिंह का पुत्र बीसवीं शताब्दी के सरदारों में वीर एवं साहसी पुरुष था। वि० सं० १९१२ के लगभग उदयपुर के राणाओं की ओर से नाथद्वारा पर सेना भेजी; उस समय नाथद्वारा वालों ने नगर-द्वार बंद करवा दिये। तब अपूर्व साहसी जोधसिंह ने लात मारकर किवाड़ तोड़ गिराये लेकिन वह लंगड़ा हो गया।

सन् १८५७ में अंग्रेजों के विरोधी आऊवे ठाकुर कुशालसिंह को अपने यहाँ रख अपने शौर्य का परिचय दिया। वि० सं० १९२६ में इसकी मृत्यु हुई।

जाणता जिसा अहनाण आया नजर।
उदै भाण तण चहुवाण वाला ॥ ३ ॥

पड़ै मचक्कर लंधन खबर पाडियां।
जोध खग झाड़ियां धको जमेरो ॥
राव विन फिरंग मेले कवण राड़ियां।
भमै नव नाड़ियां बीच भमरो ॥ ४ ॥

(रचयिता:-कमजी दधिवाड़िया)

भावार्थः- लोहे के समान मजबूत दिल वाले वीर शत्रुओं का विनाश करने के लिये तूने युद्ध में तेजी से तलवार चलाई। हे वीर ! क्षत्रिय कुल के गौरव को रखने में तेरा कुल पहले से ही आगे है। हे जोधसिंह ! यदि तू शत्रुओं को क्षत्रिय कुल का गौरव (शौर्य) नहीं बताता तो भारत की यह भूमि अंग्रेजों को निर्वीर्य दिखाई देती ॥

उन आतंककारी अंग्रेज वीरों की डांट डपट से सभी क्षत्रियों के पैर डिगने लग गये। किंतु हे पृथ्वीसिंह के पौत्र ! तूने कुशालसिंह को रख कर प्रति पक्षियों से सामना करने को चार गुनी अफीम पान की जिससे तेरे यश के नक्कारे बजने लगे ॥

हे मोहकम सिंह के पुत्र ! काल पुरुष के समान दिखाई देने वाले तूने अंग्रेजों के आदेश की अवहेलना की और उनसे मुकाबला करने का विचार किया जिससे सभी हिन्दू तेरी सराहना करने लगे। तेरे वंशज उदय भाण की पूर्व प्रसिद्ध वीरता का चिन्ह तूने दिखा दिया और सब संसार ने देखा ॥

हे जोधसिंह ! तेरी तलवार का सामना यमराज के धक्के के समान है। तेरी युद्ध वीरता सारे लंधन में फैल गई। हे रावत ! तेरे बिना अंग्रेजों से लड़ने को कौन तैयार होता ? उन अंग्रेजों के युद्ध आतंक का सामना कौन करने वाला है ? उनसे युद्ध में मुकाबला करने वालों के प्राण पहले से ही नौ नाड़ियों के बीच चक्कर खाने लगते हैं।

११५. रावत जोधसिंह चहुआन, कोठारिया

गीत (वड़ा साणौर)

पड़े अमावड़ द्रोह छत्रधर फरंग पालटे।
आंट धर क्रोध भुज गयण अड़िया॥
सोध अंगरेज हिंदवाण आया सरब।
जोध सिर सेस रै कदम जड़िया॥ १॥

पड़े विकट धके चांपा सुदि पुल गया।
भड़ां थट छेक अड़वास लूभो॥
तोल खग टेक नहँ छंडे मोहकम तणौ।
एक लौ ठोर भुज लड़ण ऊभो॥ २॥

जाणता जिसा सामात्र रहिया जबर।
अड़ीयल करे खग दाव आछा॥
गात्र बिज पाल रा भार भुज राखियां।
पाँव समहर विचा न दिया पाछा॥ ३॥

सुणे वाखाण गढ़ दिली अर सतारा।
दाट जित तितारा खलां दीधा॥
राव चहुवाण जोधा अडग मतारा।
कथन क लकता रा मेट कीधा॥ ४॥

(रचयिता:- मोतीराम, आशिया)

भावार्थ:- दिल्ली के शासन कर्ता अंग्रेज और हिन्दू नरेशों के बीच में विद्रोह हो उठा, जिससे अंग्रेज लड़ने को तैयार हुए और सभी नरेश आवेश में आकर युद्ध करने को एकत्रित हुए। हे जोधसिंह !

उस समय तू क्रुध हो भुजा उठाता हुआ शेषनाग के सिर पर अडिग पैरों से खड़ा रहा।

ऐसी विषम स्थिति में चांपावत राठौड़ चला गया और मोहकमसिंह का पुत्र तू अपने वीरों सहित सावधान हो हठ को नहीं छोड़ता हुआ भुज ठोककर शत्रुओं से भिड़ने को अकेला ही खड़ा हुआ।

हे कुशल खड्ग प्रहारी वीर! तेरी जैसी वीर प्रकृति जानते थे वैसा ही साहस दिखाया। हे रावत! तूने अपने पूर्वज विजयपाल के विरुदों को भुजों पर उठाये हुए तैंने युद्ध से पैर पीछे नहीं हटाये।

हे रावत चाहुआन जोधसिंह! दृढ़विचारी तैंने अपने पौरुष से कलकत्ता के (अंग्रेजों द्वारा दिये) आदेशों को ठुकरा दिया उसका यश दिल्ली सितारा तक फैल गया॥

११६. रावत जोधसिंह चुण्डावत (दूसरा), सलूम्बर [१]

गीत (बड़ा साणोर)

समत सही उगणीस वरस अगतीसे,
लख सरद मास आसोज लागो।
तणां सा रूप सिव नाम उग्र तांण रो,
भांण हिंदवांण रो मुगट भागो॥ १॥

हट करे फिरंग जिण वार दीधो हुकम,
करो मत फैल अण फैल काजा।
अब लिखूँ हुकम लंधन तणो आवसी,
रीत तद थावसी तिको राजा॥ २॥

टिप्पणी:— यह सलूम्बर के रावत केशरीसिंह की मृत्यु होने पर बम्बोरे से गोद आकर सलूम्बर का रावत हुआ। महाराणा शम्भूसिंह का देहान्त होनेपर महाराणा सज्जनसिंह के समय विद्यमान था।

जटै कर मसल अंगरेज आया जबर,
दादवा भंडारां देर दुवो।
धरा सो हिंदवाण लाज राखण धरम,
अठी खतेस भुज ठोर ऊभो ॥ ३ ॥

हूँ थपू भूप मुलक म्हारो हुकम,
बराबर न पूछूं कवण बीजे।
पड़ी क्यू सलारी तूझ रख पखैरी,
(थारी) लखेरी कोड़ियां उरी लीजे ॥ ४ ॥

तम धरे मूंछ खतेस बोलै तमख,
हुआ विद लेख म्हें कीध हाथां।
पील चाहर हमैं छावणी पधारौ,
बधारो फैल किम सहज बातां ॥ ५ ॥

तवां परताप सगराम बापा तसो,
समै परमाण अवसाण साजै।
तणा केहर अनम किलो चीतौड़ रो,
(जांने) ऊजलो दिखायो भलां आजै ॥ ६ ॥

माण रख राण जेठाण हिंदू मुगट,
कथन जग जाण सैवास कहसी।
तिको कसना वतां छात जोधा नृपत,
रसासिर वात अखियात रहसी ॥ ७ ॥

(रचयिताः- सूर्यमल आशिया)

भावार्थः— संवत् १६३१ के आश्विन मास में शरद ऋतु के आरंभ में महाराणा स्वरूपसिंह का सुपुत्र (नरेश) हिन्दू कुल सूर्य शंभूसिंह, जो मुकुट मणि था भंग हो गया (मृत्यु हो गई) ॥ १ ॥

उसी समय ब्रिटिश अधिकारी ने हठ पूर्वक आदेश दिया कि राज्याधिकारी के लिये कोई-गड़बड़ न करे। मैं इस संबंध में लंधन लिखा पढ़ी करता हूं। वहाँ से जो आदेश आयेगा तदनुसार राज्याधिकारी (शासक) बना दिया जायगा ॥ २ ॥

कोष को अपने अधिकार में करने के लिये परामर्श कर ब्रिटिश कर्मचारी आये। वहाँ पर हिंदू धर्म और मेवाड़ की लज्जा का रक्षक रावत बाहू ठोक कर खड़ा रहा ॥ ३ ॥

यह देश मेरा है और मेरे ही आदेश से राजा स्थापित होगा। मैं इस विषय में किसी से कुछ नहीं पूछूँगा। इस विषय में तुम्हें सलाह और पक्षपात करने की क्या पड़ी है? तुम तो जो (रकम अहद नामें में) तय कर दी गई है वह लेलेना ॥ ४ ॥

उस समय मूछों पर हाथ रखता हुआ क्रुद्ध रावत कहने लगा। मैं जो अपने हाथ से करूँगा वह विधाता के लेख के समान है। आप अब अपनी आपनी (मगर बाहिर) जाइये। साधारण बात के लिये फैल फितूर क्यों बढ़ा रहे हैं? ॥ ५ ।

कवि कहता है—राणा सांगा प्रताप और बापा के समान समय के अनुकूल सावधानी बरत कर केसरीसिंह के अनमीपुत्र ने चित्तौड़ दुर्ग को आज उज्जवल कर दिखाया ॥ ६ ॥

हे राणा के पाटवी हिंदू मुकुट! तूने जो (मेवाड़ के) गौरव की रक्षा की उस कथन को जान कर सारा संसार वाह वाह कहेगा, हे किसानावतों के छत्र नरेश जोधसिंह! तेरी यह कीर्ति पृथ्वी पर अक्षुण्ण बनी रहेगी ॥ ७ ॥

११७. राज मानसिंह झाला, गोगुन्दा [1]

गीत (बड़ा साणौर)

जन्नर पाथ उनमान रा वीर सलहां जड़ै,
सगत हर तान रा लियै साथै।
हुवे साना[illegible] रा दलां भारत हचण,
मान रा खलां आथांण माथै ॥१॥

कलह फण फेरियां चढ़ै चाके कमण,
झड़ै समसेरियां चाढ़ झंका।
काढ मन गेरियां तुँहिज सुधा करै,
वैरियां लियण आसेर वंका ॥२॥

मार गज टलां फौजां भमंग मोयणां,
जुध अड़ग ओपणां रूपै जाझा।
क्रोध भर अतर भवै अगन कोयणां,
कँवर घर दोयणां लियण काजा ॥३॥

कलक भैरूं सगत पियण काल रा,
दलेसां साल रा ताप देणा।
अँग उग्र भाल रा नजर आवै इसा,
लाल रा सुतन गढ़ खलां लेणा ॥४॥

(रचयिताः– रामलाल आढ़ा)

टिप्पणीः–१–यह राज लालसिंह का पुत्र था। इस गीत में उसके साहस और वीरता का वर्णन है। इस का समय वि० सं० की १९ शताब्दी का पहला चरण है।

भावार्थः– हे वीर मानसिंह, अर्जुन के समान हे वीर तू जिस समय अपनी सेना सहित बख्तर (लोहे की जंजीरों का बना हुआ वीर वेप) धारण कर शत्रुओं के स्थानों पर आक्रमण करता है। उस समय शंकर एवं योगिनियाँ आदि युद्ध भूमि में उपस्थित होजाते हैं ॥ १ ॥

रण भूमि में उपस्थित सेना के भार से शेषनाग अपने फणों को हिलाने लगता है। इतनी असंख्य सेना पर तेरे अतिरिक्त ऐसा कौन साहसी है, जो तलवार चला कर उस का नाश कर सकें ? शत्रुओं के अभिमान को चूर्ण करता हुआ, तू उनके दुर्गम दुर्ग पर प्रभुत्व स्थापित करता है ॥ २ ॥

युद्ध स्थल में हाथियों एवं सेना के भार से पृथ्वी कम्पित होने लगती है और शेषनाग श्लथ हो जाता है किन्तु फिर भी समर भूमि में अडिग चरण रह कर तू शत्रुओं की सेनाओं का नाश करता है। हे राज कुमार, उस समय शत्रुओं से दुर्ग लेने के हेतु तेरे नेत्रों में क्रोध की की ज्वाला प्रज्वलित दिखाई देती है ॥ ३ ॥

हे लालसिंह के पुत्र, युद्ध भूमि में रण चण्डी और भैरव–रक्तपान करने हेतु उन्मत्त होकर इधर उध भागते हैं। शत्रुओं के दुर्गों पर आधिपत्य स्थापित करने हेतु अन्य शत्रु-राजाओं को अपना पराक्रम दिखाकर, तू दुर्गों पर अधिकार करता है। इस प्रकार के साहस से तू एक सौभाग्यशाली राजा प्रतीत होहा है ॥ ४ ॥

११८. राजराणा अजयसिंह झाला, गोगुंदा

दोहा

जुध देखण अपछर जुड़ी, खड़ी खड़ी पेखंत।
अजा मूंछ भूंहां अड़ी, कड़ी जरद तड़कंत ॥ १ ॥

भावार्थः– युद्ध देखने अप्पसराएँ एकत्रित हुईं और खड़ी २ (युद्ध-कौशल) देखने लगीं। (उन्होंने देखा कि वीर) अजयसिंह की मूछें

भौंहों से लग रही थीं और (जोश के कारण शरीर फूला न समाता था, अतः) की जिरह कड़ियाँ टूट रही थीं ॥ १ ॥

आप कुसल चाहौ अधप, अरु धण रौ अहवात।
हेक अजा गजगाह रै। रहो लूंब दिन-रात ॥ २ ॥

भावार्थः- (सुभटों की पत्नियाँ कहती हैं कि हे पति देव ! यदि आप अपनी कुशलता चाहते हैं और स्त्रियों का (हमारा) सौभाग्य सुरक्षित रखना है तो एक (मात्र वीर) अजयसिंह के हाथी की (गज) झूल के दिन रात लटके रहिये अर्थात् उसकी शरण में रहिये, ताकि आपका जीवन, और हमारा सौभाग्य-चूड़ कुशल बना रहे ॥ २ ॥

गीत (बड़ा साणौर)

अधप-सुता पति हूंत कहै कथ ओसान रा।
सवागण दान रा दयण सागे ॥
आखशां मठठ तज वहीजो आन-रा।
अणी नृप मान रा तणा आगै ॥ १ ॥

जीवणो चहै धव तते मत झागड़े।
चखासी खागड़े काल चालो ॥
माण तज भलां पत हलीजे मागड़े।
पागड़े लाग अहिवात पालो ॥ २ ॥

पाण खग अजा रै साम्हने पसै ला।
तो नसैला पतंग पड़ दीप न्हालो ॥
धणी मृगनैणियां छांह पग धसैला-
(तो) वसैला बांह गज दांत वालो ॥ ३ ॥

तुरस जग जीवणौ रखो चित चाह री ।
(तो) पड़तलां-नाह री आस कीजो ॥
त्रिया भड़ सवागण रखो तद ताहरी ।
(तो) लूंब गजगाह री शरण लीजो ॥ ४ ॥

कलह विच सुणे धव तजे वल कढोला ।
(तो) लडोला अमर सोभाग लाहे ॥
चीत चत भूल नै धकै जो चढोला ।
(तो) मडोला पीव पालाण माहे ॥ ५ ॥

(रचयिता- रामलाल आशिया)

भावार्थः- राज कुमारियाँ अपने पतियों से सावधानी के वचन कह रही हैं। (वे) कहती हैं कि-इस मानसिंह के पुत्र (अजयसिंह) के आगे सारा अभिमान त्याग कर चलना, यह साक्षात् सौभाग्य (जीवन) दान देने वाला है।

हे पति देव ! जब तक जीवित रहना चाहते हो तब तक (इससे) कभी झगड़ा मोल मत लेना वरना काले सर्प को खिलाने का स्वाद चखना (परिणाम भुगतना) पड़ेगा। (अत एव) घमंड त्याग कर हे पति ! सीधे रास्ते रास्ते चले चलना और अजयसिंह के पागड़े लग कर (शरण ले कर) सौभाग्य (जीवन) का पोषण करना।

अगर अजयसिंह के सम्मुख हाथ में तलवार ले कर गये तो दीपक से भिड़कर पतंग नष्ट होता है उसी प्रकार अपने को नष्ट होते देखोगे, (लेकिन) यदि मृगनयनियों के पति (आप उस की छाया में पैर देते हुए चले यानि जैसे आकृति के पीछे छाया चलती है उसी प्रकार उसके अनुगामी रहे तो (हमारी) भुजाओं में सौभाग्य चिन्ह हस्ती दंतों का चूड़ा बना रहेगा।

संसार में जीने की (तुम्हारे) दिल में चाह है, शौक है, तो भाला पति (अजयसिंह) की आशा रखना। हे सामन्तों ! अपनी

पत्नियों का सौभाग्य-जीवन-चाहते हो तो उस (अजयसिंह) की गज भूल की लूंव (छोर) पकड़े रहना- (शरण लेना, आश्रित रहना) ॥

(अजयसिंह के) संघर्ष में हे पति ! अपना वल छोड़ कर निकल जाओगे तो अमर सौभाग्य का लाभ लूटोगे किंतु अगर कहीं भूल कर भी मन में विचार किये बिना आगे होकर निकल गये तो फिर हे पति ! पत्थरों के स्मारक चित्र की भाँति मढ़ दिये जाओगे-नष्ट कर दिये जाओगे और तुम्हारे चित्र पत्थरों में खुदे मिलेंगे ।

११६. शक्तावत माधोसिंह, विजयपुर

गीत (बड़ा साणौर)

मरदघाट गुजराट लोह लाट वेढ़ी मणा,
खलां समराथ खग झाट खाधा ।
आठ कम साठ चव साठ घूमे उठे,
मेर गिर चाढ़ लोह लाट माधा ॥१॥

जांगियां ठोर सिंधू गवे जांगड़ा,
लड़ण रण खांगड़ा वीर हलके ।
मेर तण जठे पीधा अमल भांगड़ा,
जो मरद रांगड़ा पणो झलके ॥२॥

छोह छक रातंक थटा छावतां,
गुमर वगड़ावतां रूप गाढ़े ।
घमोड़ा तड़ा अवरी घड़ा घावतां,
चमू सगतावतां नूर चाढ़े ॥ ३ ॥

टिप्पणी:-१-यह चित्तौड़ के समीपवर्ती विजयपुर के ठाकुर मेरूसिंह शक्तावत का पुत्र था । इस गीत में उसके गुणों की प्रशंसा की गई है ।

टायत लाखरा ज्युँही थई वजेपुर,
उदेपुर भाकरां गुमर आणे ।
कंठीरल मधा थारे जसा ठाकरां,
तीस खट साखरा मूंछ तांणे ॥ ४ ॥

(रचयिता:–अज्ञात)

भावार्थ:– हे वीर माधवसिंह, काल के समान कठोर और लोह स्तंभ के समान अडिग रहने वाले, तूं ने शत्रुओं को रण-भूमि में तलवार के प्रहार से नष्ट कर दिया। हे लोह स्तंभ के समान उन्नत और मेरु पर्वत के समान अडिग योद्धा, तेरे युद्ध-काल में बावन वीर और चौंसठ योगिगियाँ, रणांगण में सभी विचरने लगते हैं ॥१॥

हे बांके वीर, तूं नगारों का विनाद करवाता हुआ और नगारचियों द्वारा सिंधु राग के साथ हर्षित होता हुआ, रण भूमि में प्रविष्ट होता है। भेरूसिंह के वीर पुत्र, भंग और अफीम का पान करने वाले, तेरे में क्षात्रत्व स्वयं ही झलक आता है ॥२॥

हे माधव सिंह, तेरे क्रोध से भरे हुए लाल नेत्रों की छटा में वगड़ावतों के गौरव की झलक दिखाई देती है। हे वीर, कुमारी कन्या के समान प्रति पक्षियों की सेना के भालों से घाव लगाकर, तूं ने अपने कुल का गौरव बढ़ा दिया ॥३॥

हे माधवसिंह, उदयपुर के उन्नत पर्वतों का गौरव रखकर लाखों रुपयों की आयवाली विजयपुर की जागीरी प्राप्त की। हे सिंह के समान पराक्रमी वीर ठाकुर छत्तीस राजवंशो में तेरे समान ही वीर अपनी मूछों पर हाथ रख सकते हैं, अन्य नहीं ॥४॥

१२० ठाकुर गोपालसिंह, खरवा

गीत (सु पंख)

राजै अनम्मी रोस रौ अंगां वडाला भड़लां रीझै,
करक्खै छड़ालां आचां उतोलै क्रोधाल ।

धाकां सुणे टोपी वाला धड़ाला हिया में धूजै,
कड़ाला ससत्रां भारी केहरी कोपाल ॥ १ ॥

चालो वीर चालो सारो भुजाटां तुहाल छाजै,
कमंधेस वालो हाको अरिन्दां संकाल ।
महा जोस वालो वीर फरंगी दे ताल माथै,
लेखै माधौ सिंघ वालौ डीकरो लंकाल ॥ २ ॥

अंगंजी साम्हल जुधां वरोला ऊठवै अंगां,
अढंगा थापवै रोला भौम रे आपाण ।
वरद्दां उजालौ सूरौ वामी वंध एण वारां,
पेखो भूरया फील दोलौ वायरे प्रमाण ॥ ३ ॥

रिमांखेसे लागौ दीखे इन्द्र ज्यूं जंभ पै रूठो,
आहंसी भाराथां ऊठो हणू ज्यूं ओपाल ।

टिप्पणी:– १. २० वीं शताब्दि में अजमेर के समीपवर्ती खरवा ठिकाने का ठाकुर राठोड़ गोपालसिंह स्वतन्त्रता प्रेमी और वीर सरदार था। अंग्रेजों के अत्याचारों से दुःखी होकर देश के कतिपय देश-भक्तों ने परतन्त्रता की जंजीरों को तोड़ फेंकने के लिये क्रान्ति आरंभ की थी तब राजस्थान के वीर भी अंग्रेजों के क्रोध की चिन्ता न कर क्रान्तिकारी दल में सम्मिलित हुए थे। कहा जाता है कि दिल्ली के तत्कालीन वाइसराय लार्ड हार्डिंज पर सन् १९१२ में जुलूस के समय चांदनी चोक में 'बम' फेंका गया था, उस 'बम्' फेंकने वाले दल में ठाकुर गोपालसिंह भी सम्मिलित था। फलतः इनको टाटगढ़ मे संदेह वश बन्द कर दिया गया; जहाँ से ये भाग निकले। किशनगढ़ में फिर गिरफ्तार किये गये और जेल मे भेज कर यातनाएँ दी गई तथा ठिकाने से अधिकार च्युत कर दिये गये। थोड़े समय पूर्व ही इनका देहावसान हुआ है। इस गीत में उन्हीं की प्रशंसा है।

छूटा डाण लाठां मदां पाण हूँ भूरेस छूटो,
गोरां गजां माथै रुठौ सींवली गोपाल ॥ ४ ॥

(रचयिता:-महडू गुलाबसिंह)

भावार्थः- कभी नहीं झुकने वाले हे जोशीले यौद्धा, तू विशाल काय सुभटों से प्रसन्न रहने वाला है। हे कवच धारी सशस्त्र वीर ! सिंह के समान तेरा क्रोध देख कर टोपी धारी अंग्रेज तेरे युद्ध के आतंक का विचार कर कांपते रहते हैं ॥ १ ॥

हे यौद्धा ! ऐसे युद्धों की छेड़ छाड़ तेरी भुजाओं से शोभित है और तेरी वीरता के आतंक से शत्रुओं के हृदय में भय छाया रहता है। हे माधवसिंह के पुत्र ! तू हाथी रूपी अंग्रेजों पर क्रुद्ध-सिंह की भांति आक्रमण करता हुआ दिखाई देता है ॥ २ ॥

हे राष्ट्रवर ! अपने वीरत्व से कुल को उज्जवल करने के लिये भीम की तरह साहस और अनूठे ढंग से युद्ध आरंभ करता है। जिस से प्रति-स्पर्धी अविजित यौद्धाओं के हृदय में भी क्रोधाग्नि प्रज्वलित हो जाती है। हे यौद्धा ! गज-सदृश अंग्रेजों पर तू सिंह की तरह आक्रमण करता है ॥ ३ ॥

जंभ राक्षस रूपी शत्रुओं पर तू इन्द्र के समान और हनुमान की तरह रूष्ट हुआ दिखाई देता है। हे गोपालसिंह, मदान्ध गज के समान अंग्रेज लाट पर तू रूष्ट सिंह की भांति सोत्साह आक्रमण करता है ॥ ४ ॥

१२१. पत्ता चुण्डावत आमेट

गीत (छोटा साणोर)

तिल तिल जुध हुऔ खगां मुँह तूटो,
चुण न सकै दहूँ करां चूंप ॥

रावत कमल काज सिव रचियौ,
सहसा अरजुन तणौ सरूप ॥ १ ॥

चिग चिग हुओ खाग धारां चढ़,
वणियौ जाय न कीत वर ॥
कैल पुरा वाला सिर कारण,
कीना संभू हजार कर ॥ २ ॥

रज-रज हुयौ जणौ भरियौ रज,
भिलवा सुगत जाणियो भेव ॥
समहर अगुट लियण दस सहसैं,
दस सौ करग वधाया देव ॥ ३ ॥

सह परताप वीण टुकड़ा सिर,
सुकरां गूंथी अजय सवी ॥
रुण्डमाल उर ऊपर रुद्रचे,
फूलमाल अदूभूत फवी ॥ ४ ॥

(रचयिता -अज्ञात)

भावार्थः- हे रावत ! शत्रुओं द्वारा युद्ध में तलवार से तेरा शरीर तिल तिल होकर धराशाई हुआ जिसको शंकर दोनों हाथों से एकत्रित नहीं कर सका इसलिये तेरे इस मस्तक के लिये शंकर ने सहस्राबाहु अर्जुन का स्वरूप धारण किया ॥

खड्ग प्रहार से तेरा मस्तक छिन्न भिन्न हो गया, जिसका कोई यश वर्णन नहीं कर सकता । हे शीशोदिया ! तेरे मस्तक कण-को एकत्रित करने शंभू ने अपने हजार हाथ बनाये हैं ॥

हे पत्ता ! तू मोक्ष प्राप्ति के रहस्य को जान कर रजकण के समान युद्ध भूमि में विलीन हो गया। हे शिशोदिया, संग्राम भूमि से तेरे मस्तक-कण चुनने के लिये शंकर ने अपनी कर वृद्धि कर हजार हाथ बनाये ।।

हे जगतसिंह के पुत्र ! तेरे मस्तक के टुकड़ों को एकत्रित कर शंकर ने अपने हाथों से माला बना कर धारण की जो मुण्डमाला में अजीब प्रकार से शोभा देने लगी।

१२२ करनीदान गाडण, भीमखंड

गीत (छोटा साणोर)

गढ पत सूँ चूक होवतां गाडण—
भूपतियाँ सह भाली ।।
जिण विरियां रोपी करना जल,
मंगल सर व्रतमाली ।। १ ।।

उगत भली आई देवावत,
रवि मंडल भेदण समराथ ।।
पूगो भलौ साथियां पहली,
हाथियां समुख वाजियां हाथ ।। २ ।।

धणिया तणो अब मरण सुधारण—
रण–दल बीच प्रहारण रूक ।।
रिम हणिया आसाणियो वारण—
चारण हूरम आयो चूक ।। ३ ।।

समहर दगे गुलाबसीह रे,
धन सांवत भली सुधारी ।।

खँड खँड चावौ कियो भीम खँड,
करना जल वाहि कटारी ॥ ४ ॥
(रचयिता–अज्ञात)

भावार्थः– हे गाडण गोत्रीय चारण ! जिस समय गढ़ाधीश पर आक्रमण हुआ तब अन्य भूमिपति देखते ही रह गये, ऐसे विकट समय में तूने हाथी के सिर पर कटारी का वार किया ॥

हे देवा के पुत्र ! तू कौशल से अपने साथियों से पहिले ही युद्ध भूमि में शस्त्र प्रहार कर सूर्य मंडल को पार कर स्वर्ग पहुँच गया ॥

तूने अपने स्वामी के हेतु देहपात को पुण्य समझ युद्ध स्थल में शत्रुओं एवं उनके हाथियों को विनष्ट कर दिया और अप्सरा वरण के आये अवसर को हाथ से नहीं जाने दिया, अर्थात् लड़कर वीर गति प्राप्ति की ॥

जब गुलाबसिंह पर धोखे से आक्रमण हुआ तब तूने सम्हल कर अपने युद्ध कौशल से विगड़ती बात को सुधार ली जिससे देश विदेश में तेरा गाँव भीम खंड प्रसिद्धि पा गया अर्थात् तूने अपनी जन्म भूमि को प्रसिद्ध कर दिया ॥

१२३ राव धाय भाई नगराज, गुज्जर
गीत (वड़ा साणोर)

सिलह भीड़ियॅा भड़ां कसियां भड़ज साबता ।
गूठला रोल आंबगलां गाज ॥
खाग उनागियां खिवे माथे खलां,
राण रा दलां अगवाण नगराज ॥ १ ॥

कंगलां सुभट जड़िया तुरां के जमां,
कड़ां दध पार कीरत कहाई ।

दुजड़ आचार रा भार धरिया दोये–
भड़ण हरवल हुए धाय भाई ॥ २ ॥

जंगमां पखर जड़िया सुपह जूसणा,
वरण जुध वार घड़ कुआरी वंद ॥
खग झड़ां ओझड़ा वाहि ढाहण खलां,
होय हरवल दलां सुतन हरियंद ॥ ३ ॥

अभ नमो अमर भालां भमर उजागर,
वडम रथ सुजस धर खैंचण वामी ॥
भड़ां पांणी अणी हिन्दुवां भांण रे ।
वणे दीवाण रे भुजां वामी ॥ ४ ॥

(रचयिता–अज्ञात)

भावार्थः– हे वीर नगराज ! बख्तर धारण कर घोड़ों पर पाखर कसते हुए भीषण रव से नक्कारों के शब्द करने लगते, उस समय तू राणा की सेना के अग्रभाग में रह कर शत्रुओं की सेना पर तलवार चमकाता हुआ युद्ध भूमि में प्रविष्ट होता है ॥ १ ॥

हे धाय भाई ! शूर वीर बख्तरों से सुसज्जित हो पाखर सज्जित (लोहे के चार जामा) वाली सेना के अग्रभाग में जा तू शत्रुओं को परास्त करता है और दान वीर युद्ध वीर होने से तेरा यश समुद्र पार फैल गया है ॥ २ ॥

टिप्पणीः– यह महाराणा संग्रामसिंह (द्वितीय) का धाय भाई था और बड़ा विश्वास पात्र था । उस समय यह मुसाहिब आला था । उक्त महाराणा के राज्य काल में सैनिक तथा राजनैतिक सेवाओं में बहुत कुछ सहयोग दिया था जिसका इतिहास में बहुत वर्णन है ।

जिस समय अश्वारोही योद्धा युद्ध भुजाओं से सज्जित होकर रण स्थल में प्रविष्ट होते हैं उस समय हे हरियंद पुत्र ! तू (दुलही स्वरूप) सेना को (चँवरी रूपी) युद्धस्थल में वरण करने को दुलहा होकर अग्रभाग में चलता है और उस समय तू शत्रुओं पर वार कर उन्हें धराशाई कर देता है ॥

हे दूसरे अमरराज जैसे वीर ! तू भालों का वार करने में अच्छा वीर दिखाई देता है । तू हिन्दू सूर्य महाराणा के सैनिक यौद्धा के समान साहस रखता हुआ राणा के अच्छे कार्यों के यश स्वरूपी रथ के बांई तरफ वह (चल) कर उस रथ को खींचने वाला है ॥

१२४. आनंदसिंह सोलंकी

गीत (छोटा साणौर)

राणा रौ भीच धरा रौ राखौ, मछर संपूरत निभै मणो ॥
चढिया नहीं कमंध मय चालक, घाटौ दुघटौ हुऔ घणौ ॥ १ ॥

तीन महीना रहिया ताके, लड़ण वीड़ो किणी नहँ लियो ॥
भड़की नाल देख जोधपुरा, कुड़की साम्ही कूंच कियौ ॥ २ ॥

वांका वचन कहे बीकावत, नहँ बीजो ज्यूं ही नमियो ॥
कमंधां घणा मिले नव कोटां, आणँदसिंग न आगमियो ॥ ३ ॥

दीठो दुघट वीर गुरू दूजो, हेकां जही न गणियो हेल ॥
मेल कियौ नहँ चढिया मारू, आया नहीं कीधा ऊमेल ॥ ४ ॥

(रचियता:- अज्ञात)

भावार्थः राजा की भूमि की रक्षार्थ हे सोलंकी ! तुझ निर्भय बहादुर और क्रुद्ध को राठौड़ों ने तैयार देखा तो वे उक्त भूभाग को लेने के लिये विकट पहाड़ी रास्ते से आने की हिम्मत न कर सके ॥

राठौड़ लगातार तीन माह तक यह दशा देखते रहे किंतु तुझसे लड़ने का बीड़ा किसी ने नहीं उठाया। संकीर्ण पहाड़ी मार्ग (नाल) के ऊपर तेरा मजबूत बंदोवस्त देख जोधपुर नरेश ने वापस कूंच कर दिया ॥

हे वीका के पुत्र ! तूने एक वचन सुना शत्रुओं को नीचे उतार दिये, अन्य कायर क्षत्रियों की भांति शत्रुओं के सामने सिर नहीं झुकाया। हे आनंदसिंह ! मारवाड़ के सभी राठौड़ तुझे परास्त करने को आये किंतु उनसे तू पराजित नहीं हुआ ॥

हे वीरों के गुरु ! (घाटे) पहाड़ी तंग रास्ते पर तेरा वंदोवस्त देख कर राठौड़ों ने संगठन किया किन्तु वे घाटा चढ़ने में सफल न हो सके और तुझसे आकर युद्ध न कर सके ॥

१२५. मोटा मिनखां रो मेल

गीत

आवै घर करै एक पग ऊभा,
खातर खलल पड्यां व्है खीज ॥
संको करां नटां न सरम सूं—
चित्त चढै वा लेलै चीज ॥ १ ॥

कटै ही मिलां पिछाणै कोनी।
सदन गयां न बूझै सार ॥
करां सलाम, दखे करड़ा पड़—
काम पड्यां कुछ करे न कार ॥ २ ॥

देवां पत्र जवाब न देवै—
हां, भर भूले काम हुवै न ॥

कदे उठ सतकार करे नहैं ।

जोड़ां कर, तो धकै जुबै न ॥ ३ ॥

सांची झूठी सुणां अर सहवां ।

पड़ै समरथन करणौ पूर ॥

जे ओड़ौ दे देय जरा सो ।

जोस जणावे लड़े जरूर ॥ ४ ॥

बहुतां में बैठां बतलावां ।

मुँह बोलतां सरम मरंत ॥

काम भुलांण वाण ज्यां खासा ।

तेड़ावै घर हूंत तुरंत ॥ ५ ॥

दां सरबस आसान न दिल में ।

दौड़ थकां तोहि ध्यान न धरे ॥

हिय सुध सेवा करां हेत सूं—

करै अंदाज, गरज सूं करे ॥ ६ ॥

राजी हुयां काम में रगड़ै ।

नराजियां करे नुकसाण ॥

छोटकियां ! मोटोड़ां छोडो ।

मिलो सरीखां, चाहो माण ॥ ७ ॥

आं सूं मेल कियां, दुख उपजै—

रंच न लाधें सुख रो रेस ॥

सुणौ 'चंड' मोटा मिनखां ने।
(भायां)अलगा सू करणौ आदेस ॥ ८ ॥

(रचयिता:- सांदू चंडी दान, हीलोड़ी मारवाड़)

भावार्थः- (बड़े आदमी) जब अपने घर आते हैं तो सब एक पैर पर खड़े रह जाते हैं; अर्थात् आतिथ्य के लिये निरंतर दौड़ धूप मची रहती है। जहाँ थोड़ी सी कमी-त्रुटि-हुई कि नाराज हो जाते हैं। न तो उन्हें किसी प्रकार का संकोच होता है न लज्जा। उनके मन को जो चीज पसंद आ जाती है वह वस्तु ले ही लेते हैं ॥

(अगर) कहीं मिलते हैं तो वे (हमें) पहचान नहीं पाते और उनके घर चले जायँ तो कोई सार संभाल-आतिथ्य सत्कार की बात नहीं पूछते। यदि अभिवादन करते हैं तो कठोर हो (गर्व में फूल) कर देखते हैं। जब कुछ काम पड़ता है तो किसी प्रकार की सहायता नहीं करते ॥

(हम) पत्र दें तो (वे) उसका जवाब तक नहीं देते। कुछ कहा सुनी करें तो पहले हां, कर देते हैं लेकिन उनसे काम नहीं हो पाता। कभी खड़े होकर सम्मान नहीं करते (यदि हम) हाथ जोड़ते हैं तो सामने तक नहीं देखते ॥

(उनके द्वारा कही हुई) सच्ची झूठी सब सुनते हैं और सहन करते हैं तथा पूरी तरह से (अनिच्छा होते हुए भी) समर्थन करना पड़ता है। अनुचित व्यवहार करने पर उन्हें अगर थोड़ा टोक दें, उपा-लंभ दें तो जोश में आ जाते हैं और लड़ने को अवश्य तय्यार हो जाते हैं ॥

कहीं समूह में बैठे हुए (उन्हें) बतला दिया जाय तो मुँह से बोलते हुए लज्जा से मरे जाते हैं। कार्य के लिये कहने की जिनकी खासी आदतसी है और (जब जरूरत होती है तो) तुरन्त घर से बुलवा लेते हैं ॥

(यदि इनके लिये) सर्वस्व न्यौछावर कर दें तो भी मन में कृतज्ञता नहीं मानते, दौड़ दौड़ कर (सेवा करते) मरते हैं तो भी ध्यान में नहीं रखते। शुद्ध हृदय से प्रेम पूर्वक सेवा करते हैं तो (ये) अनुमान लगाते हैं कि किसी गरज से ऐसा करते हैं ॥

(ये) प्रसन्न होते हैं तो (रात-दिन) काम में रगड़ (मार) ते हैं और नाराज होते हैं तो हानि पहुँचाते हैं. हे छोटो ! यदि सम्मान चाहते हो तो बड़ों को छोड़ बराबरी वालों से हिलो मिलो। इन (बड़ों) से दुःख ही उत्पन्न होता है; रंच मात्र सुख लाभ मिलता नहीं। चंडीदान कहता है कि हे भाइयो ! बड़े पुरुषों को दूर से ही नमस्कार करना चाहिये ॥

